Sarala via
Kavana
Sanskrit grammar
Navin Chandra
Rai

सरलव्याकरण

संस्कृतका

हिन्दीभाषामे

श्रीनवीनचन्द्ररायकर्तृकप्रणीत।

Sarala Viá Karana

Sanskrit Grammar

by

Navina Chandra Rái

published

under the auspices of the Panjáb University College

पञ्जाबके महाविद्यालयकेनिमित्त

मित्रविलासयन्त्रलाहोरमे

पण्डितश्रीमुकुन्दरामयन्त्राध्यक्षकेद्वाराछपी

सम्वत १९२९ वि० — 1872 — सन १८७२ ई०

नीयसंस्करण मूल्य ।)॥ १३०० खण्ड

सरल व्याकरण

संस्कृत का

हिन्दी भाषा मे

श्री नवीन चन्द्र राय कर्त्तृक प्रणीत

प्रथम भाग

पण्डित श्री भगवानदास के द्वारा संशोधित ॥

मित्र विलास यन्त्र लाहोर मे

पण्डित श्री मुकुन्दराम यन्त्राध्यक्ष ने छापा

सम्वत १९२८ विक्रम   सन १८७० ईस्वी

द्वितीय संस्करण ... र

प्रस्तावना ।

संस्कृत विद्यामे प्रवेश के निमित्त व्याकरण द्वार स्वरूप है, परन्तु संस्कृत के जितने व्याकरण हैं सब संस्कृत वाणी मे विरचित रूप हैं; और उन्के सूत्र और प्रयोग सिद्धि के क्रम ऐसे क्लिष्ट और पूर्वापर विवेचना सापेक्ष हैं कि बहुतेरे संस्कृत पारिप्सुओं के प्रथमोद्यम को उन्होने निराश करदिया है। बहुत लोग, व्याकरण वारिधि को दुर्लङ्घ्य जानकर उस्के सन्तरण की इच्छा हि नहिं करते; और जो लोग कुछ थोड़ा बहुत अग्रसर होते भी हैं वे बाध्यबाधकभाव रूप ऊर्म्मियों से भीत होकर अथवा परिभाषा प्रभृति आवर्त्त मे पतित होकर फेर मुड़ आते हैं; इसीलिये संस्कृतविद्या का अच्छा प्रचार भी नहीं होने पाता। जो लोग अत्यन्त अध्यवसाय पूर्व्वक व्याकरण के अध्ययनमे लगे रहते हैं उनका समाप्ति पर्य्यन्त बहुत काल अतीत होता है; और जो लोग उस्के शास्त्र तरङ्गमे पड़गये वे तो कितने दिनोंमे कूल प्राप्त होवेंगे कहा नहिं जासकता। इतने परिश्रम के पीछे जब व्याकरण का परिज्ञान होजाता है तब अन्यान्य शास्त्र जिन्के प्राप्त होने के लिये व्याकरण एक सोपान मात्र है उन्की पर्य्यालोचना को अवसर नहिं रहता; इसीलिये व्याकरण मात्र जानकर अपने को पण्डित समझ प्रकृत

विद्याके रसास्वादन से बहुत लोग वञ्चित हो रहते हैं। इस कष्टकी निवृत्ति के निमित्त इर्व्वतन लोग भी यत्ना न्वितथे परन्तु जैसे किसी वनके पारजानेके निमित्त ऊंची नीची और कण्टकमय भूमि को समतल और परिष्कार न करके पथकी नैकट्यता का अनुसन्धान ही करते रहें, वैसे वे लोग व्याकरण के कार्य्य और ता त्पर्य्यावगति के सीधे उपाय को लक्ष्य न करके सूत्रों के लाघव मे नियुक्त रहे, यहांतक कि वे एकमात्रा ला घव को भी पुत्रोत्सव मानतेथे यह बात प्रसिद्ध है।

अब जिस्से व्याकरण के तात्पर्य्य का शीघ्र और अ ल्पश्रमसेही बोध हो जावे इसलिये यह स्वदेशीय भा षामे एक अभिनव रीतिसे सङ्कलित होती है। सार ग्राही महात्माओं से यह प्रार्थना है कि इस्मे प्राचीन रीति अनुसार यद्यपि कोई त्रुटि हुई हो उसे क्षमा करें; और भ्रान्ति प्रयुक्त जहां कहीं भूल रह गयी हो उसे संशोधन करलें।

उक्त उद्देश्य साधनके निमित्त पण्डिताग्रगण्य श्रीयु त ईश्वर चन्द्र विद्यासागर महाशय की बङ्गभाषा मे विरचित व्याकरण कौमुदी को अवलम्बन करके य ह ग्रन्थ लिखागया है, पर इसके प्रथम और द्वितीय भाग मे अन्यान्य व्याकरणों से भी बहुत विषय, जो व्याकरण-कौमुदी मे नथा, लिखागया है, अथच उ स ग्रन्थका अनावश्यक विस्तार परित्यक्त हुआ है। स्थू लविषय अर्थात् सामान्य नियम ग्रन्थ के मध्यमे बड़े अक्षरों से लिखे गये हैं, और सूक्ष्म विषय अर्थात् विशे ष नियम, नीचे टीका के स्थानमे छोटे अक्षरोंसे लिखे गये हैं; अभिप्राय इससे यह है कि पहिले पढ़ने

वाला निचले विशेष कार्य्योंको छोड़भी दे तथापि उसकी आवश्यकतानुसार व्याकरण का साधारण रूपसे उसे यथेष्ट बोधहो जावेगा; अतएव प्रथम पाठक उन्हें छोड़दे तो अच्छाहै इससे उसका बहुत समय वृथा नष्ट नहि होगा।

इस ग्रन्थमे बाध्यबाधक भाव का भी प्रायशः निवारण किया गयाहै और एक प्रक्रिया जहांतक होसकी दूसरी की अनपेक्षकी गयी है। संस्कृत व्याकरण प्रायशः सूत्रोंमे हैं, उन्का कण्ठ कर लेना तो सुखाला है परन्तु तात्पर्य्य उन्का भी वृत्तिबिना जाना नहिं जासकता इसलिये इसग्रन्थमे सूत्रोंका सन्निवेश अनावश्यक समझागया। इसमेजो नियम किये गयेहैं वेहि सूत्र और वृत्ति दोनोंका काम देंगे। षट्लिङ्गमे सिद्धरूपहि दिखाये गयेहैं क्योंकि और शब्दोंके भी तत्सदृशरूप होते हैं; पर जिन शब्दोंके विशेष रूप होते हैं वे भी प्रदर्शित हुएहैं। इस ग्रन्थके सम्यग् पाठसे पुराण स्मृति तथा अन्यान्य शास्त्र और काव्योंके समझने की सामर्थ्य हो जायगी परन्तु संस्कृत व्याकरण के सम्पूर्ण ज्ञानके निमित्त पाणिनीय शास्त्रहि उपयोगी है॥

সূচিপত্র

সরল ব্যাকরণ

প্রথম ভাগ

द्वितीयभाग

तृतीयभाग

पृष्ठ

ओं

वर्णनिर्णयः

अ इ उ क ख ग घ इत्यादि प्रत्येक अक्षरको वर्ण कहतेहैं। वर्ण दो प्रकारकेहैं। स्वर और व्यञ्जन[1]

स्वरवर्णाः

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ए ऐ ओ औ इन त्रयोदशको स्वर कहतेहैं॥ स्वर दो प्रकारकेहैं; ह्रस्व और दीर्घ। अ इ उ ऋ ऌ ये पांच ह्रस्व स्वरहैं। आ ई ऊ ॠ ए ऐ ओ औ इन आठोंको दीर्घ[2] स्वर कहतेहैं॥ इससे प्रकारने मे स्वरकी प्लुत संज्ञाभी होजातीहै॥

व्यञ्जनवर्णाः

क् ख् ग् घ् ङ् च् छ् ज् झ् ञ् ट् ठ् ड् ढ् ण् त् थ् द् ध् न् प् फ् ब् भ् म् य् र् ल् व् श् ष् स् ह् ं : इन पैंतीसको व्यञ्जन कहतेहैं॥ इनमेसे क् से म् पर्य्यन्त पचीसको स्पर्श वर्ण कहतेहैं। सारे स्पर्शवर्ण पांच वर्गोमे विभक्तहैं। क ख ग घ ङ इन पांचोंको कवर्ग, च छ ज झ ञ इन पांचोंको चवर्ग, ट ठ ड ढ ण इन पांचोंको टवर्ग, त थ द ध न इन पांचोंको तवर्ग, और प फ ब भ म इन पांचोंको पवर्ग कहतेहैं। य र ल व इन चारोंको अन्तःस्थ वर्ण कहतेहैं। श ष स ह इनका नाम उष्म वर्णहै। ं अनुस्वार और :[3] विसर्ग इन दोनोंको अयोगवाह बोलतेहैं॥

---

(१) व्यञ्जनको हल भी कहतेहैं। (२) दीर्घ ऌ कहीं प्रयोगमे नहिं आता इस निमित्त परित्यक्त हुआ।
(३) विसर्ग के और भी दो रूप होतेहैं जिनका नाम जिह्वामूलीय और उपध्मानीय है, स्वरूप इनका ᳵ यहहै। विसर्ग कख परे होनेसे जिह्वामूलीय, और पफ परे होनेसे उपध्मानीय विकल्प करके होताहै॥

व्यञ्जन और दो प्रकारसे भी विभक्त रूप हैं। वर्गके प्रथम और द्वितीय अक्षर और श ष स इनकी विवार अथवा अघोष संज्ञा है। अवशिष्ट व्यञ्जनों की सम्वार अथवा घोष संज्ञा है[१]।

सन्धिप्रकरण

दो वर्ण परस्पर निकट होनेसे मिल जाते हैं, और इस मिलापको सन्धि कहते हैं। सन्धि दो प्रकारकी है; एक स्वर, दूसरी व्यञ्जन सन्धि। स्वरके साथ स्वरकी जो सन्धि होती है तिसको स्वर सन्धि कहते हैं; और व्यञ्जनके साथ व्यञ्जनकी, अथवा व्यञ्जन के साथ स्वरकी जो सन्धि होती है, तिसका नाम व्यञ्जन सन्धि है ॥

स्वरसन्धिः

एक जातिके दो स्वर मिलने से दीर्घ होजाता है यथा

मिलकर होता है	उदाहरण
अ + अ = आ	दैत्य + अरिः = (दैत्य्[२]अ + अरिः = दैत्य्आरिः =) दैत्यारिः
अ + आ = आ	रत्न + आकरः = (रत्न्अ + आकरः = रत्न्आकरः =) रत्नाकरः
आ + अ = आ	दया + अर्णवः = (दय्आ + अर्णवः = दय्आर्णवः =) दयार्णवः
आ + आ = आ	महा + आशयः = (मह्आ + आशयः = मह्आशयः =) महाशयः
इ + इ = ई	गिरि + इन्द्रः = (गिर्इ + इन्द्रः = गिर्ईन्द्रः =) गिरीन्द्रः
इ + ई = ई	कवि + ईश्वरः = (कव्इ + ईश्वरः = कव्ईश्वरः =) कवीश्वरः
ई + इ = ई	मही + इन्द्रः = (मह्ई + इन्द्रः = मह्ईन्द्रः =) महीन्द्रः
ई + ई = ई	गौरी + ईशः = (गौर्ई + ईशः = गौर्ईशः =) गौरीशः
उ + उ = ऊ	विधु + उदयः = (विध्उ + उदयः = विध्ऊदयः =) विधूदयः
उ + ऊ = ऊ	लघु + ऊर्म्मिः = (लघ्उ + ऊर्म्मिः = लघ्ऊर्म्मिः =) लघूर्म्मिः
ऊ + उ = ऊ	वधू + उत्सवः = (वध्ऊ + उत्सवः = वध्ऊत्सवः =) वधूत्सवः
ऊ + ऊ = ऊ	वधू + ऊहनम् = (वध्ऊ + ऊहनम् = वध्ऊहनम् =) वधूहनम्

(१) पाणिनि प्रोक्त विवार और सम्वार संज्ञाओंसे इस ग्रन्थोक्त विवार और सम्वार संज्ञाका किञ्चिन्मात्र भेद है (२) जिस व्यञ्जन वर्णमें [illegible] हलन्तका चिह्न) नहि रहता उसे अकार रहता है (३) स्वरहीन व्यञ्जन वर्ण परवर्णके साथ संयुक्त होता है।

मिलकर	होता है	उदाहरण
ऋ + ऋ =	ॠ	पितृ + ऋणम् = (पितृऋ + ऋणम् = पित्ॠणम् =) पितॄणम्

अवर्णसे परे इ, उ, ऋ, ऌ, होनेसे इनको मिलकर गुण[१] होजाता है[२], यथा

मिलकर	होता है	उदाहरण
अ + इ =	ए	देव + इन्द्रः = (देव्अ + इन्द्रः = देव्एन्द्रः =) देवेन्द्रः
अ + ई =	ए	गण + ईशः = (गण्अ + ईशः = गण्एशः =) गणेशः
आ + इ =	ए	महा + इन्द्रः = (मह्आ + इन्द्रः = मह्एन्द्रः =) महेन्द्रः
आ + ई =	ए	रमा + ईशः = (रम्आ + ईशः = रम्एशः =) रमेशः
अ + उ =	ओ	नील + उत्पलम् = (नील्अ + उत्पलम् = नील्ओत्पलम् =) नीलोत्पलम्
अ + ऊ =	ओ	गृह + ऊर्द्धम् = (गृह्अ + ऊर्द्धम् = गृह्ओर्द्धम् =) गृहोर्द्धम्
आ + उ =	ओ	गङ्गा + उदकम् = (गङ्ग्आ + उदकम् = गङ्ग्ओदकम् =) गङ्गोदकम्
आ + ऊ =	ओ	गङ्गा + ऊर्म्मिः = (गङ्ग्आ + ऊर्म्मिः = गङ्ग्ओर्म्मिः =) गङ्गोर्म्मिः
अ + ऋ =	अर्[४]	देव + ऋषिः = (देव्अ + ऋषिः = देव्अर्षिः =) देवर्षिः
आ + ऋ =	अर्	महा + ऋषिः = (मह्आ + ऋषिः = मह्अर्षिः =) महर्षिः
अ + ऌ =	अल्	तव + ऌकारः = (तव्अ + ऌकारः = तव्अल्कारः =) तवल्कारः

अवर्णसे परे ए ऐ ओ औ होनेसे उभय मिलकर वृद्धि[५] होती है[६]।

मिलकर	होता है	उदाहरण
अ + ए =	ऐ	उप + एति = (उप्अ + एति = उप्ऐति =) उपैति
अ + ऐ =	ऐ	देव + ऐश्वर्य्यम् = (देव्अ + ऐश्वर्य्यम् = देव्ऐश्वर्य्यम् =) देवैश्वर्य्यम्
आ + ए =	ऐ	सदा + एव = (सद्आ + एव = सद्ऐव =) सदैव
आ + ऐ =	ऐ	महा + ऐश्वर्य्यम् = (मह्आ + ऐश्वर्य्यम् = मह्ऐश्वर्य्यम् =) महैश्वर्य्यम्

(१) ऋ + ऌ की भी सन्धि किसी २ व्याकरणमे की गई है यथा होतृ + ऌकारः = होतॢकारः (वा) होतॢकारः (२) अ इ उ ऋ ऌ के स्थानमे यथाक्रम अ ए ओ अर् अल् होने को गुण कहते हैं
(३) अक्षादि कई एक शब्दोंसे परे ऊहिन्यादि शब्द होनेसे वृद्धि होजाती है, यथा अक्षौहिणी, स्वैरं, स्वैरिणी, प्रौहः, प्रौढः, प्रौढिः। (४) उपसर्गके अ आ से परे ऋ होनेसे उभय मिलित होकर आर् होता है यथा (अप + ऋच्छति =) अपार्च्छति, (परा + ऋषति =) परार्षति। प्र, वत्सर, कम्बल, वसन, ऋण, दश इन शब्दोंसे परे ऋण शब्द होनेसे भी आर् होता है यथा प्रार्णं, कम्बलार्णम् इत्यादि। अवर्णान्त उपसर्गसे परे ऋकारादि अथवा ऌकारादि नाम धातु होनेसे विकल्प करके आर् आल् होता है यथा प्र + ऋषभीयति = प्रार्षभीयति। प्र + ऌकारीयति = प्राल्कारीयति।
(५) अ ई उ ऋ ऌ के स्थानमे यथाक्रम आ ऐ औ आर् आल् होजाना वृद्धि कहलाता है।
(६) उपसर्गका अकार आकार लुप्त होजाता है धातुका ए ओ परे होनेसे एध इन धातुओंके सिवा यथा (प्र + एजते) = प्रेजते = (परा + एखति) = परेखति, (अव + ओहति =) अवोहति, परोहति परन्तु (उप + एधति =) उपैधति, (अव + एति =) अवैति। उक्त अ का लोप विकल्प करके होता है एकारादि ओकारादि नामधातु परे होनेसे यथा उप + एडकीयति = उपेडकीयति (वा) उपैडकीयति। शब्दके अन्त्य अकार का लोप होता है अनवधारणार्थक एव शब्द परे होनेसे यथा केव भोक्ष्यसे। ओष्ठ शब्द परे होने से अ आ का लोप विकल्प करके होता है यथा (बिम्ब + ओष्ठः =) बिम्बोष्ठः (वा) बिम्बौष्ठः (उमा + ओष्ठः =) उमोष्ठः (वा) उमौष्ठः परन्तु जहां समास न हो वहां नहीं होता यथा [illegible] ममोष्ठः।

अ + ओ = औ जल + ओघः = (जल्अ + ओघः = जल्औघः =) जलौघः
अ + औ = औ चित्त + औदार्य्यम् = (चित्त्अ + औदार्य्यम् = चित्त्औदार्य्यम् =) चित्तौदार्य्यम्
आ + ओ = औ महा + ओषधिः = (मह्आ + ओषधिः = मह्औषधिः =) महौषधिः
आ + औ = औ सदा + औत्सुक्यम् = (सद्आ + औत्सुक्यम् = सद्औत्सुक्यम् =) सदौत्सुक्यम्

इ, उ, ऋ, लृ, के स्थानमे य, व, र, ल, क्रमसे होताहै असवर्णी स्वर परेहोनेसे (१)

इ + अ = य यदि + अपि = (यद्इ + अपि = यद्यपि =) यद्यपि
इ + आ = या अति + आचारः = (अत्इ + आचारः = अत्याचारः =) अत्याचारः
इ + उ = यु अभि + उदयः = (अभ्इ + उदयः = अभ्युदयः =) अभ्युदयः
इ + ऊ = यू प्रति + ऊहः = (प्रत्इ + ऊहः = प्रत्यूहः =) प्रत्यूहः
इ + ऋ = यृ मुनि + ऋषभः = (मुन्इ + ऋषभः = मुन्यृषभः =) मुन्यृषभः
इ + ए = ये प्रति + एकम् = (प्रत्इ + एकम् = प्रत्येकम् =) प्रत्येकम्
इ + ऐ = यै अति + ऐश्वर्य्यम् = (अत्इ + ऐश्वर्य्यम् = अत्यैश्वर्य्यम् =) अत्यैश्वर्य्यम्
इ + ओ = यो पचति + ओदनम् = (पचत्इ + ओदनम् = पचत्योदनम् =) पचत्योदनम्
इ + औ = यौ अति + औदार्य्यम् = (अत्इ + औदार्य्यम् = अत्यौदार्य्यम् =) अत्यौदार्य्यम्
ई + अ = य नदी + अम्बु = (नद्ई + अम्बु = नद्यम्बु =) नद्यम्बु
ई + आ = या देवी + आगताः = (देव्ई + आगताः = देव्यागताः =) देव्यागताः
ई + उ = यु सखी + उक्तम् = (सख्ई + उक्तम् = सख्युक्तम् =) सख्युक्तम्
ई + ऊ = यू शशी + ऊर्द्धगः = (शश्ई + ऊर्द्धगः = शश्यूर्द्धगः =) शश्यूर्द्धगः
ई + ऋ = यृ वली + ऋषभः = (वल्ई + ऋषभः = वल्यृषभः =) वल्यृषभः
ई + ए = ये गोपी + एषा = (गोप्ई + एषा = गोप्येषा =) गोप्येषा
ई + ऐ = यै वली + ऐरावतः = (वल्ई + ऐरावतः = वल्यैरावतः =) वल्यैरावतः
ई + ओ = यो सरस्वती + ओघः = (सरस्वत्ई + ओघः = सरस्वत्योघः =) सरस्वत्योघः
ई + औ = यौ वाणी + औचित्यम् = (वाण्ई + औचित्यम् = वाण्यौचित्यम् =) वाण्यौचित्यम्

(१) ह्रस्व दीर्घ प्लुत की परस्पर सवर्ण संज्ञा होती है और ऋ लृ वर्ण की भी परस्पर सवर्ण संज्ञा होती है

मिलकर होनाहै — उदाहरण

उ + अ = व अनु + अयः = (अन्उ + अयः = अन्वयः =) अन्वयः
उ + आ = वा सु + आगतं = (स्उ + आगतं = स्वागतं =) स्वागतं
उ + इ = वि मधु + इदं = (मध्उ + इदं = मध्विदं =) मध्विदं
उ + ई = वी साधु + ईहितं = (साध्उ + ईहितं = साध्वीहितं =) साध्वीहितं
उ + ऋ = वृ मधु + ऋते = (मध्उ + ऋते = मध्वृते =) मध्वृते
उ + ए = वे अनु + एषणम् = (अन्उ + एषणम् = अन्वेषणम् =) अन्वेषणम्
उ + ऐ = वै अनु + ऐतिष्ट = (अन्उ + ऐतिष्ट = अन्वैतिष्ट =) अन्वैतिष्ट
उ + ओ = वो पचतु + ओदनम् = (पचत्उ + ओदनम् = पचत्वोदनम् =) पचत्वोदनम्
उ + औ = वौ ददातु + औषधम् = (ददात्उ + औषधम् = ददात्वौषधम् =) ददात्वौषधम्

ऊ + अ = व सरयू + अम्बु = (सरय्ऊ + अम्बु = सरय्वम्बु =) सरय्वम्बु
ऊ + आ = वा वधू + आदिः = (वध्ऊ + आदिः = वध्वादिः =) वध्वादिः
ऊ + इ = वि वधू + इन्द्रियम् = (वध्ऊ + इन्द्रियम् = वध्विन्द्रियम् =) वध्विन्द्रियम्
ऊ + ई = वी वधू + ईश्वरः = (वध्ऊ + ईश्वरः = वध्वीश्वरः =) वध्वीश्वरः
ऊ + ए = वे सरयू + एधितम् = (सरय्ऊ + एधितम् = सरय्वेधितम् =) सरय्वेधितम्
ऊ + ऐ = वै वधू + ऐश्वर्य्यम् = (वध्ऊ + ऐश्वर्य्यम् = वध्वैश्वर्य्यम् =) वध्वैश्वर्य्यम्
ऊ + ओ = वो सरयू + ओघः = (सरय्ऊ + ओघः = सरय्वोघः =) सरय्वोघः
ऊ + औ = वौ वधू + औदार्य्यम् = (वध्ऊ + औदार्य्यम् = वध्वौदार्य्यम् =) वध्वौदार्य्यम्

ऋ + अ = र पितृ + अनुमतिः = (पित्ऋ + अनुमतिः = पित्रनुमतिः =) पित्रनुमतिः
ऋ + आ = रा पितृ + आदेशः = (पित्ऋ + आदेशः = पित्रादेशः =) पित्रादेशः
ऋ + इ = रि पितृ + इच्छा = (पित्ऋ + इच्छा = पित्रिच्छा =) पित्रिच्छा
ऋ + ई = री पितृ + ईहितम् = (पित्ऋ + ईहितम् = पित्रीहितम् =) पित्रीहितम्
ऋ + उ = रु पितृ + उपदेशः = (पित्ऋ + उपदेशः = पित्रुपदेशः =) पित्रुपदेशः
ऋ + ऊ = रू पितृ + ऊहः = (पित्ऋ + ऊहः = पित्रूहः =) पित्रूहः
ऋ + ए = रे पितृ + एषणा = (पित्ऋ + एषणा = पित्रेषणा =) पित्रेषणा
ऋ + ऐ = रै पितृ + ऐश्वर्य्यम् = (पित्ऋ + ऐश्वर्य्यम् = पित्रैश्वर्य्यम् =) पित्रैश्वर्य्यम्
ऋ + ओ = रो पितृ + ओकः = (पित्ऋ + ओकः = पित्रोकः =) पित्रोकः
ऋ + औ = रौ पितृ + औदार्य्यम् = (पित्ऋ + औदार्य्यम् = पित्रौदार्य्यम् =) पित्रौदार्य्यम्

मिलकर	होता है	उदाहरण
ऌ+ अ= ल	ऌ+ अनुबन्धः = लनुबन्धः	
ऌ+ आ= ला	ऌ+ आकृतिः = लाकृतिः	

एऐओऔ इन्के स्थानमे अय् आय् अव् आव् क्रमसे होता है स्वर[1] परे होनेसे

मिलकर	होता है	उदाहरण		
ए+ अ= अय	ने+ अनम्=	(न्ए+ अनम्= न्अयनम् =)	नयनम्
ए+ आ= अया	शे+ आते=	(श्ए+ आते= श्अयाते =)	शयाते
ए+ इ= अयि	शे+ इतम्=	(श्ए+ इतम्= श्अयितम् =)	शयितम्
ए+ ई= अयी	शे+ ईत=	(श्ए+ ईत = श्अयीत =)	शयीत
ए+ उ= अयु	से+ उत्क्रम्=	(स्ए+ उत्क्रम्= स्अयुत्क्रम् =)	सयुत्क्रम्
ए+ ऊ= अयू	से+ ऊहा=	(स्ए+ ऊहा = स्अयूऊहा =)	सयूहा
ए+ ऋ= अयृ	ने+ ऋषयः=	(न्ए+ ऋषयः= न्अयृषयः =)	नयृषयः
ए+ ए= अये	शे+ ए=	(श्ए+ ए= श्अये =)	शये
ए+ ऐ= अयै	शे+ ऐ=	(श्ए+ ऐ= श्अयै =)	शयै
ए+ ओ= अयो	से+ ओः=	(स्ए+ ओः= स्अयोः =)	सयोः
ए+ औ= अयौ	से+ औ=	(स्ए+ औ= स्अयौ =)	सयौ
ऐ+ अ= आय	विनै+ अकः=	(विन्ऐ+ अकः= विन्आयकः =)	विनायकः
ऐ+ आ= आया	रै+ आ=	(र्ऐ+ आ= र्आया =)	राया
ऐ+ इ= आयि	रै+ इ=	(र्ऐ+ इ= र्आयि =)	रायि
ऐ+ ई= आयी	रै+ ईश्वरः=	(र्ऐ+ ईश्वरः= र्आयीश्वरः =)	रायीश्वरः
ऐ+ उ= आयु	रै+ उदयः=	(र्ऐ+ उदयः= र्आयुदयः =)	रायुदयः
ऐ+ ऊ= आयू	रै+ ऊहा=	(र्ऐ+ ऊहा= र्आयूहा =)	रायूहा
ऐ+ ए= आये	रै+ ए=	(र्ऐ+ ए= र्आये =)	राये
ऐ+ ओ= आयो	रै+ ओः=	(र्ऐ+ ओः= र्आयोः =)	रायोः
ओ+ अ= अव	भो+ अनम्=	(भ्ओ+ अनम्= भ्अवनम् =)	भवनम्
ओ+ आ= अवा	गो+ आ=	(ग्ओ+ आ= ग्अवा =)	गवा
ओ+ इ= अवि	भो+ इता=	(भ्ओ+ इता= भ्अविता =)	भविता
ओ+ ए= अवे	गो+ ए=	(ग्ओ+ ए= ग्अवे =)	गवे
ओ+ ओ= अवो	गो+ ओः=	(ग्ओ+ ओः= ग्अवोः =)	गवोः

(१) कहीं यकार भी स्वर का काम देता है यथा गो+यूतिः=गव्यूतिः। ते+यं=तय्यं। जे+यं=जय्यं। के+यं=क्रय्यं

औ + अ = आव पौ + अकः = (प् औ + अकः = प् आवकः =) पावकः
औ + आ = आवा नौ + आ = (न् औ + आ = न् आवा =) नावा
औ + इ = आवि भौ + इनी = (भ् औ + इनी = भ् आविनी =) भाविनी
औ + उ = आवु भौ + उकः = (भ् औ + उकः = भ् आवुकः =) भावुकः
औ + ए = आवे नौ + ए = (न् औ + ए = न् आवे =) नावे
औ + ओः = आवोः नौ + ओः = (न् औ + ओः = न् आवोः =) नावोः
औ + औ = आवौ नौ + औ = (न् औ + औ = न् आवौ =) नावौ

पदान्तस्थ[1] अय् अव् आय् आव् के अन्त वर्णका लोप[2] विकल्प[3] से होताहै स्वर परे होनेसे)

ए + इ = अइ हरे + इह = (हर् ए + इह = हर् अ इह =) हरइह
ए + उ = अउ हरे + उत्तिष्ठ = (हर् ए + उत्तिष्ठ = हर् अ उत्तिष्ठ =) हरउत्तिष्ठ
ए + ए = अए हरे + एहि = (हर् ए + एहि = हर् अ एहि =) हरएहि

ओ + इ = अइ विष्णो + इह = (विष्ण् ओ + इह = विष्ण् अ इह =) विष्णइह
ऐ + ए = आए श्रियै + एतिः = (श्रिय् ऐ + एतिः = श्रिय् आ एतिः =) श्रियाएति
औ + उ = आउ विष्णौ + उक्तः = (विष्ण् औ + उक्तः = विष्ण् आ उक्तः =) विष्णाउक्तः

पदान्तस्थ एकार ओकार से परे अकारका लोप होताहै

ए + अ = ए[4]ऽ हरे + अव = (हर् ए + अव = हर् एऽव =) हरेऽव
ओ + अ = ओ[5]ऽ विष्णो + अव = (विष्ण् ओ + अव = विष्ण् ओऽव =) विष्णोऽव

ओकारान्त अथवा एक स्वर मात्र अव्यय[6] शब्दकी सन्धि नहिं होती यथा अहो अयेहि अ अपि, आ एवम्, उ उत्तिष्ठ, ए एवमेतत् ऐ इन्द्रागच्छ ओ आगच्छताम्

(१) पदके जो अन्तमे हो उसे पदान्तस्थ कहतेहैं। विभक्त्यन्त शब्दको पद कहतेहैं। विभक्ति नाम और धातुके परे लगती हैं जिन्का आगे वर्णन होगा॥ (२) वर्णका जाता रहना लोप वा लोपशू कहलाताहै लोपशू होनेसे फेर सन्धि नहिं होती॥ (३) जो एकवार हो एकवार नहो उसे विकल्प कहतेहैं॥
(४) ऽयह लुप्त अकार का चिन्ह है॥ (५) गो शब्दसे परे अकारका लोप विकल्प करके होताहै और जिस पक्षमे लोप नहिं होता उसमे गोसे परे अ का आगम होताहै यथा (गो + अजिनं =) गोऽजिनं (वा) गवाजिनं॥ परन्तु इन्द्र वा अक्ष शब्द परे होनेसे नित्य अ का आगम होताहै यथा गवेन्द्रः गवाक्षः॥ कई शब्द ऐसे हैं जिन्के टि का लोप होताहै (अन्त्यस्वर अथवा स्वरके सहित अन्त्य व्यञ्जन को टि कहतेहैं) यथा (हल + ईषा =) हलीषा॥ (६) परन्तु सीमा, व्याप्ति, अथवा ईषदर्थ होनेसे, किम्वा क्रियाके साथ योग होनेसे अव्यय आकारको सन्धि होती है यथा (आ + अध्ययनात् =) आध्ययनात्, (आ + एकदेशात् =) ऐकदेशात् (आ + आलोचितम् =) आलोचितम् (आ + इहि =) एहि॥

द्विवचन[1] ईकारान्त ऊकारान्त और एकारान्त शब्दको सन्धि नहिं होती

हरी+ एतौ= हरीएतौ (यहां ईकारको यकार न हुआ)

विष्णू + अमू= विष्णूअमू (— ऊ — व — न)

गंगे + अत्र= गंगेअत्र (यहां अकारका लोप नहि हुआ)

इति स्वरसन्धिः

अथ व्यञ्जनसन्धिः

त् थ् और द् को च् होताहै च छ परे होनेसे।

(यथा) महत् + चक्रम् = महच्चक्रम्, महत् + छत्रम् = महच्छत्रम्

एतद् + चन्द्रमण्डलम् = एतच्चन्द्रमण्डलम्, एतद् + छविः = एतच्छविः

शपथ् + छिन्नम् = शपच्छिन्नम्

त् द् और ध को ज् होताहै ज झ परे होनेसे।

भवत् + जीवनम् = भवज्जीवनम्, महत् + झञ्झनम् = महज्झञ्झनम्

विपद् + जालम् = विपज्जालम्, तद् + झनत्कारः = तज्झनत्कारः

समिद् + झङ्कारः = समिज्झङ्कारः

न् को ञ् होताहै ज झ परे होनेसे

महान् + जयः = महाञ्जयः, गच्छन् + झटिति = गच्छञ्झटिति

च् + न् = च्ञ ·········· याच् + ना = याच्ञा

ज् + न् = ज्ञ ·········· यज् + नः = यज्ञः

---

(१) अदस् शब्दके ईकारान्त पदको भी सन्धि नहिं होती यथा अमी अश्वाः, पदान्त इ ऊ ऋ को समास मे न हो तो विकल्प करके ह्रस्व और सन्ध्यभाव होजाताहै जो असवर्णी स्वर परे हो यथा चक्रि अत्र (वा) चक्र्यत्र, मधु एतत् (वा) मध्वेतत् कर्त्तृ इदं (वा) कर्त्रिदं पदान्त आ ई ऊ ऋ को ऋ ऌ परे होने से विकल्प करके ह्रस्व और सन्ध्यभाव होताहै यथा ब्रह्मऋषि (वा) ब्रह्मर्षि, दण्डिऋषि (वा) दण्ड्यर्षि। वधुऋकारः (वा) वध्वृकारः, होतृऌकारः (वा) होतॄकारः॥ उ अव्ययको इतिशब्द परे होनेसे विकल्प करके सन्धि होतीहै यथा उ इति (वा) विति वर्गीय वर्णसेपरे उ अव्ययको विकल्प करके व होताहै स्वरपरे होनेसे यथा किमु उक्तं (वा) किम्वुक्तं (वा) किमूक्तं

त् द् को ट् होता है ट ठ परे होनेसे।

उत् + टलति = उट्टलति, सत् + ठकारः = सट्ठकारः

तद् + टीका = तट्टीका, एतद् + ठक्कुरः = एतट्ठक्कुरः

त् और द् को ड् होता है ड् ढ् परे होनेसे।

उत् + डीनः = उड्डीनः, उत् + ढौकते = उड्ढौकते

तद् + डिण्डिमः = तड्डिण्डिमः, एतद् + ढक्का = एतड्ढक्का

न् को ण् होता है ड् ढ् परे होनेसे।

महान् + डामरः = महाण्डामरः, राजन् + ढौकसे = राजण्ढौकसे

ष् + त् = ष्ट .... आकृष् + तः = आकृष्टः

ष् + थ् = ष्ठ .... षष् + थः = षष्ठः

त् द् न् को ल् होता है ल् परे होनेसे।

उत् + लिखति = उल्लिखति, तद् + लीलायितम् = तल्लीलायितम्, महान् + लाभः = महाँल्लाभः (१)

स्वरके पीछे यदि दो व्यञ्जन हों (अथवा अन्त्य एक व्यञ्जन हो) तो पूर्व्व व्यञ्जन को (र् ह् को छोड़कर) द्वित्व भी होजाता है और ख छ ध झ भ को द्वित्व होनेसे प्रथम वर्ण यथाक्रम ज ड द ग ब होजाता है।

यथा (दधि + आनय) = (दध्य् + आनय) = (दध् ध्+यानय) = (दद् ध्यानय) = दद्ध्यानय (वा) दध्यानय।

वर्गीय वर्णसे परे य् व् ल् को विकल्प करके द्वित्व होता है।

यथा (दधि + आनय) = दध्य्यानय (वा) (दध्यानय)

स्वर पूर्व्वक र् ह् से परे ह् भिन्न व्यञ्जनको विकल्प करके द्वित्व होता है (और कहीं श ष् स् को भी)। यथा (गौरि + अत्र) = गौर्य्यत्र, पार्श्वम्।

य् व् ल् से परे उनको विकल्प करके द्वित्व होता है।

यथा (नव + लकारः) = नवल्कारः (वा) नवल्ल्कारः।

व्यञ्जन से परे जो दो वर्ण एक वर्गके हों तो उनमेसे पहिलेका लोप होजाता है। यथा (नव + ऋद्धिः) (नवर्द्धिः)

द्वित्व होनेसे (नवर्द्द्धिः) यहां ध् से पूर्व्व द् का लोप होनेसे सिद्धरूप नवर्द्धि हि रहा।

द् को त् होता है (शषभिन्न) विवार वर्ण परे होनेसे।

यथा तद् + स्वादयति = तत्स्वादयति

(१) न के स्थान मे जो ल् होता है वह अनुनासिक हि होता है और अनुनासिकका यह चिन्ह ँ पूर्व्व वर्णके ऊपर लगता है।

ह्रस्वस्वरसे परे पदान्त ङ् ण् न् को द्वित्व होता है स्वर परे होने से।

प्रत्यङ् + आत्मा = प्रत्यङ्ङात्मा, सुगण् + इह = सुगण्णिह, स्मरन् + उवाच = स्मरन्नुवाच

पदान्त न् + च् = ंश्च .... पचपन् + चकितः = पचपंश्चकितः

न् + छ् = ंश्छ .... धावन् + छागः = धावंश्छागः

न् + ट् = ंष्ट .... उद्यन् + टङ्कारः = उद्यंष्टङ्कारः

न् + ठ् = ंष्ठ .... महान् + ठक्कुरः = महांष्ठक्कुरः

न् + त्[1] = ंस्त .... पतन् + तरुः = पतंस्तरुः

न् + थ् = ंस्थ .... स्पृशन् + थुध्यति = स्पृशंस्थुध्यति

न् + श् = ंञ्छ (वा) ञ्छ, ञ्श, ञ्श। महान् + शब्दः = महाञ्छब्दः

(वा) महाञ्छब्दः, महाञ्च्शब्दः, महाञ्शब्दः

नृन् शब्द के अन्त्य न के स्थान में ंः भी होजाता है जो पकार उसके परे हो।

यथा नृन् + पाहि = नॄंः पाहि।

पुम् शब्द से परे वर्गीय प्रथम दो वर्णों में से कोई हो और उससे परे स्वर वा सम्वार वर्ण हो तो पुंम् से परे स् आता है परन्तु ख्या परे होने से नहिं आता यथा पुंस्कोकिलः पुं-ख्यानम् **(स्वर सम्वार वर्ण परे न होने से)** पुंक्षीरम्

अपदान्त न् को अनुस्वार होता है श ष स ह परे होने से।

दन् + शनम् = दंशनम्, यन् + षते = यंषते

मीमान् + सते = मीमांसते, रन् + हते = रंहते

तथा

म् को अनुस्वार होता है स् परे होने से।

रम् + स्यते = रंस्यते

तथा

न् को ङ् होता है क ख ग घ परे होने से।

आशन् + कते = आशङ्कते, प्रेन् + खणीयम् = प्रेङ्खणीयम्

आलिन् + गति = आलिङ्गति, अन् + घते = अङ्घते

तथा

ञ् होता है च छ ज झ परे होने से।

वन् + चयति = वञ्चयति

[1] न् + त् प्रशस्ति से परे त्रिवार वर्ण हो तो उनके बीच में स् नहिं आता यथा सन्त्सरुः। और प्रशान् शब्द के न् से परे भी स् का आगम नहिं होता यथा प्रशान्तनोति।

वाक् + छति = वाञ्छति

रन् + जयति = रञ्जयति

तथा ण् होताहै ट् ठ् ड् ढ् परे होनेसे। वन् + टयति = वण्टयति

उत्कन् + ठते = उत्कण्ठते

मन् + डयति = मण्डयति

म् होताहै प् फ् ब् भ् परे होनेसे। कन् + पते = कम्पते

दृन् + फति = दृम्फति, आलन् + बते = आलम्बते, जन् + भते = जम्भते

अपदान्त म् को न् होताहै त् परे होनेसे। गम् + ता = गन्ता

पदान्त म् को अनुस्वार होताहै अन्तस्थ अथवा ऊष्म[1] वर्ण परे हो

सत्वरम् + याति = सत्वरंयाति, करुणम् + रोदिति = करुणं[2] रोदिति जैसे

विद्याम् + लभते = विद्यांलभते, तम् + वदति = तंवदति

शय्यायाम् + शेते = शय्यायांशेते, तम् + षष्ठः = तंषष्ठः

कष्टम् + सहते = कष्टंसहते, मधुरम् + हसति = मधुरं हसति

तथा अनुस्वार होताहै स्पर्श वर्ण परे होनेसे;

(अथवा) जो वर्ग परे हो तिसका पञ्चम वर्ण होताहै।

किम् + करोषि = किंकरोषि (वा) किङ्करोषि

गृहम् + गच्छ = गृहंगच्छ (वा) गृहङ्गच्छ

क्षिप्रम् + चलति = क्षिप्रंचलति (वा) क्षिप्रञ्चलति

शत्रुम् + जहि = शत्रुंजहि (वा) शत्रुञ्जहि

नदीम् + तरति = नदींतरति (वा) नदीन्तरति

धनम् + ददाति = धनंददाति (वा) धनन्ददाति

स्तनम् + धयति = स्तनंधयति (वा) स्तनन्धयति

गुरुम् + नमति = गुरुंनमति (वा) गुरुन्नमति

(१) पदान्त म् को सानुनासिक य्,व्,ल्,म्,न्, भी यथाक्रम होजाताहै जो ह पूर्व्वक य् व् ल् म् न् परे हो यथा (किम् + ह्यः =) किँय्ह्यः (किम् + ह्वलयति =) किँव्ह्वलयति (किम् + ह्लादयति =) किँल्ह्लादयति (किम् + ह्मलयति =) किँम्ह्मलयति (किम् + ह्नुते =) किँन्ह्नुते। ङ् अथवा ण् से परे श् ष् स् हो तो ङ् से परे क् और ण् से परे ट् का आगम विकल्पकरके होताहै, यथा प्राङ् + षष्ठः = प्राङ्क्षष्ठः (वा) प्राङ् षष्ठः, सुगण् + साधुः = सुगण्ट्साधुः (वा) सुगण्साधुः। ड्, ढ् (वा) न् से परे स हो तो सके पूर्व्व त् का आगम विकल्पकरके होताहै यथा मधुलिट् + सहते = मधुलिट्त्सहते, सन् + सः = सन्त्सः॥

(२) परन्तु सम् + राट् का सम्राट् ही होताहै।

चन्द्रम् + पश्यति = चन्द्रं पश्यति (वा) चन्द्रम्पश्यति

किम् + फलम् = किं फलम् (वा) किम्फलम्

सत्यम् + ब्रूयात् = सत्यं ब्रूयात् (वा) सत्यम्ब्रूयात्

मधुरम् + भाषते = मधुरं भाषते (वा) मधुरम्भाषते

शास्त्रम् + मीमांसते = शास्त्रं मीमांसते (वा) शास्त्रम्मीमांसते

पदान्त म् को अनुस्वार अथवा सानुनासिक य व ल होता है य व ल परे होनेसे।

सम् + यन्तः = संयन्तः (वा) सँय्यन्तः

सम् + वत्सरः = संवत्सरः (वा) सँव्वत्सरः

यम् + लोकम् = यंलोकम् (वा) यँल्लोकम्

ह्रस्वस्वरसे[1] परे छ को च्छ होताहै। सित + छत्रम् = सितच्छत्रम्

परि + छदः = परिच्छदः, अव + छेदः = अवच्छेदः

पदान्त क् को ग् होताहै स्वर और सघोषवर्ण परे होनेसे

दिक् + अन्तः = दिगन्तः, वाक् + आडम्बरः = वागाडम्बरः

तक् + इन्द्रियम् = तगिन्द्रियम्, वाक् + ईशः = वागीशः

सम्यक् + उक्तम् = सम्यगुक्तम्, धिक् + ऋणकारिणम् = धिगृणकारिणम्

प्राक् + एव = प्रागेव, धिक् + ऐश्वर्य्यमत्तम् = धिगैश्वर्य्यमत्तम्

सम्यक् + ओजः = सम्यगोजः; वाक् + औचित्यम् = वागौचित्यम्

दिक् + गजः = दिग्गजः, प्राक् + घनोदयः = प्राग्घनोदयः

वाक् + जालम् = वाग्जालम्, सम्यक् + झङ्कारः = सम्यग्झङ्कारः

सम्यक् + डयते = सम्यग्डयते, सम्यक् + ढौकते = सम्यग्ढौकते

वाक् + दानम् = वाग्दानम्, धिक् + धनगर्वितम् = धिग्धनगर्वितम्

वाक् + बाहुल्यम् = वाग्बाहुल्यम्, दिक् + भागः = दिग्भागः

धिक् + याचकम् = धिग्याचकम्, वाक् + रोधः = वाग्रोधः

धिक् + लोभिनम् = धिग्लोभिनम्, सम्यक् + वदति = सम्यग्वदति, दिक् + हस्ती = दिग्हस्ती[2]

(१) कोइयोंके मतमे दीर्घसे परेभी छ को च्छ होताहै यथा चेच्छिद्यते। पदान्त दीर्घसे परे विकल्प करके च्छ होताहै यथा लक्ष्मीःच्छाया, लक्ष्मी छाया। आ, मा, उपसर्गसे परे च्छ नित्य होताहै यथा आच्छादयति, माच्छिदत्।

(२) ग से परे ह् को घ भी होजाताहै यथा दिग्घस्ती।

पदान्त त् थ् ध् को द् होता है स्वर तथा ग् घ् द् ध् ब् भ् य् र् व् ह् पर होनेसे

जगत् + अन्तः = जगदन्तः, जगत् + आदिः = जगदादिः

जगत् + इन्द्रः = जगदिन्द्रः, जगत् + ईशः = जगदीशः

भवत् + उक्तं = भवदुक्तं, भवत् + ऊहनं = भवदूहनं

भवत् + ऋणं = भवदृणं, जगत् + एतत् = जगदेतत्

महत् + ऐश्वर्य्यम् = महदैश्वर्य्यम्, महत् + ओजः = महदोजः

जगत् + औषधं = जगदौषधम्, अग्निमथ् + आसनम् = अग्निमदासनम्

समिध् + अत्र = समिदत्र

बृहत् + गहनम् = बृहद्गहनम्, बृहत् + घटः = बृहद्घटः

भवत् + दर्शनम् = भवद्दर्शनम्, महत् + धनुः = महद्धनुः

जगत् + बन्धुः = जगद्बन्धुः, महत् + भयम् = महद्भयम्

बृहत् + यानम् = बृहद्यानम्, बृहत् + रथः = बृहद्रथः

महत् + वनम् = महद्वनम्, तत् + हविः = तद्[1]हविः

पदान्त च् को ज् ट् को ड् और प् भ् को ब होता है स्वर और सम्वार् वर्ण पर होनेसे।

अच् + अन्तः = अजन्तः, अच् + वत् = अज्वत्

परिव्राट् + अयम् = परिव्राडयम्, परिव्राट् + गच्छति = परिव्राड्गच्छति

परिव्राट् + वदति = परिव्राड्वदति, परिव्राट् + हसति = परिव्राड्[2]हसति

अप् + इन्धनः = अबिन्धनः, अप् + घटः = अब्घटः, अप् + जः = अब्जः

अप् + भक्त = अब्भक्त, अप् + वासः = अब्वासः, अप् + हरणम् = अब्[3]हरणम्

ककुभ् + ईशः = ककुबीशः

पदान्त क् को ग् अथवा ङ् होता है न अथवा म[4] पर होनेसे

दिक् + नागः = दिग्नागः (वा) दिङ्नागः, प्राक् + मुखः = प्राग्मुखः (वा) प्राङ्मुखः

च् को ज ञ .... अच् + नासि = अज्नासि (वा) अञ्नासि

अच् + मध्यम् = अज्मध्यम् (वा) अञ्मध्यम्

---

(१) त् द् से परे ह् को ध भी होजाता है यथा तद्धविः (२) ड् से परे ह् को ढ भी हो जाता है यथा परिव्राड्ढसति

(३) ब से परे ह् को भ भी होजाता है यथा अब्भरणम् (४) मात्र किम्वा मय प्रत्यय परे होने से पदान्तस्थित वर्गीय प्रथम वर्ण के स्थानमे केवल पञ्चम वर्ण होता है यथा वाक् + मयम् = वाङ्मयम्, अच् + मात्रम् = अञ्मात्रम्, मधुलिट् + मात्रं = मधुलिण्मात्रम्, चित् + मयम् = चिन्मयम्, अप् + मयम् = अम्मयम्॥

ट् को ड् ण् ...... मधुलिट् + नदति = मधुलिड्नदति (वा) मधुलिण्नदति [1]

मधुलिट् + मन्त्रः = मधुलिड्मन्त्रः (वा) मधुलिण्मन्त्रः

त् को द् न् ...... जगत् + नाथः = जगद्नाथः (वा) जगन्नाथः

भवत् + मतम् = भवद्मतम् (वा) भवन्मतम्

प् को ब् म् ...... अप् + नदी = अब्नदी (वा) अम्नदी

अप् + मानम् = अब्मानम् (वा) अम्मानम्

क् + ह् = ग्घ भी होता है ...... दिक् + हस्ती = दिग्घस्ती

च् + ह् = ज्झ ...... अच् + हलौ = अज्झलौ

ट् + ह् = ड्ढ ...... षट् + हलानि = षड्ढलानि

त + ह् = द्ध ...... तत् + हविः = तद्धविः

प + ह् = ब्भ ...... अप् + हरणम् = अब्भरणम्

पदान्त क् च् ट् त् प् से परे श को छ भी होता है स्वर परे होने से

वाक् + शूरः = वाक्छूरः (पक्षे) वाक्शूरः

षट् + शूराः = षट्छूराः (वा) षट्शूराः

जगत् + शरण्यः = जगच्छरण्यः (वा) जगच्शरण्यः [2]

तद् + शरीरम् = तच्छरीरम् (वा) तच्शरीरम्

ककुप् + शासनम् = ककुप्छासनम् (वा) ककुप्शासनम्

विसर्ग को स [3] होता है त थ [4] परे होने से

कः + तनोति = कस्तनोति, सः + थूर्वति = सस्थूर्वति

---

(१) पदान्त ट् से परे नवति और नगरी शब्दों के न को भी ण हो जाता है यथा । षट् + नवतिः षण्णवतिः, (षट् + नगर्यः षण्णगर्यः और दधृ + नाम् इसका बलाम् बनता है (२) पदान्त त् को च् होता है श पर होने से । त् को च् और श को छ नहिं होता जो उस श के साथ र युक्त हो यथा उत् श्नाति (३) नमः, पुरः, तिरः के विसर्ग को स होता है कृधातु परे होने से यथा नमस्करोति, पुरस्कारः तिरस्करिणी। अः को अस होता है कर, कार, कान्त, काम, कुम्भ, क, कस्य, काम्य, पाश, और पात्र शब्द परे होने से यथा अयस्कारः, प[illegible] स्कारः, अयस्कान्तः, मनस्कामः, यशस्कः, यशस्कस्य, यशस्काम्यः, यशस्पाशः, पयस्पात्रम्, परन्तु कस्य से पूर्व अव्यय होने से विसर्ग का स नहिं होता यथा प्रातःकस्य। और काम्य परे होने से धातु वयव निष्पन्न विसर्ग को भी स नहिं होता यथा गीःकाम्य (यहां गिर् से गीः बना है)। । नमस्कारः, मेदोपिण्डः, कस्कः, भास्करः, अहस्करः, वाचस्पतिः, दिवस्पतिः, अधस्पदः शिरस्पदः, अयस्कालः इन शब्दों में भी विसर्ग के स्थान में स हुआ है। (४) विसर्ग को स नहिं होता जो त्स उससे परे हो यथा शठः + त्सरति = शठःत्सरति दृढः + त्सरुः = दृढःत्सरुः ॥

विसर्गको ष् होता है ट् ठ् परे होनेसे।

कः + टीकते = कष्टीकते, कः + ठक्कुरः = कष्ठक्कुरः

श् होता है च् छ् परे होनेसे।

रामः + चरति = रामश्चरति, मेघः + छादयति = मेघश्छादयति

श् ष् स् भी क्रमसे होता है श ष् स् परे होनेसे।

कः शेते (पते) कश्शेते, कः षष्ठः कष्षष्ठः

कः सरति कस्सरति

अः + अ = ओऽ   नरः + अयम् = नरोऽयम्

अः को ओ होता है सघोष वर्ण परे होनेसे।

शोभनः + गन्धः = शोभनोगन्धः, नूतनः + घटः = नूतनोघटः

सद्यः + जातः = सद्योजातः, मधुरः + झङ्कारः = मधुरोझङ्कारः

नवः + डमरुः = नवोडमरुः, गजः + ढौकते = गजोढौकते

मूर्द्धन्यः + णकारः = मूर्द्धन्योणकारः, निर्वाणः + दीपः = निर्वाणोदीपः

अश्वः + धावति = अश्वोधावति, उन्नतः + नगः = उन्नतोनगः

दृढः + बन्धः = दृढोबन्धः, अकुतः + भयः = अकुतोभयः

अतीतः + मासः = अतीतोमासः

कृतः + यत्नः = कृतोयत्नः, शान्तः + रोषः = शान्तोरोषः

कृतः + लोभः = कृतोलोभः, शीतः + वायुः = शीतोवायुः

वामः + हस्तः = वामोहस्तः

---

(८) निः, आविः, बहिः, दुः, प्रादुः, द्विः त्रिः चतुः इन शब्दोंके विसर्गको ष् होता है क, ख, प, फ, परे होनेसे यथा निष्कामः, निष्खेटः, निष्पीडितः, निष्फलः; आविष्कृतम्; बहिष्कृतः, दुष्कृतम्, प्रादुष्कृतम्, द्विष्करोति, त्रिष्करोति, चतुष्कोणम् इत्यादि॥ भ्रातः + पुत्र के विसर्गको भी ष् होता है यथा भ्रातुष्पुत्रः। हविः, सर्पिः, बर्हिः, अर्चिः, रोचिः, शोचिः, आयुः धनुः, चक्षुः, वपुः, यजुः इत्यादि के विसर्गको विकल्प करके ष् होता है क प परे होनेसे यथा हविष्पतति इत्यादि। परन्तु समास में नित्य ष् होता है यथा हविष्पानम्। इः उः को इष् उष् होता है तकारादि तद्धित प्रत्यय परे होनेसे यथा सर्पिः त्वम् = सर्पिष्ट्वम्, चतुष्टयम्। क, ख, परे होनेसे विसर्ग जिह्वामूलीय भी हो जाता है जिसका रूप यह ᳵ है; और प फ परे होनेसे उपध्मानीय होजाता है जिसका रूप ᳶ यह है यथा कः करोति (वा) कᳵकरोति, कः फलति (वा) कᳶफलति। परन्तु उ.ऊ.वर्णों से परे स् हो तो नहिं होता यथा जना बनः तोमनः, रामः स्नातः॥

अकारसे परे विसर्ग का लोप श अथवा य होताहै अकारभिन्न स्वर परे होनेसे

(लोप श होनेसे फेर सन्धि नहीं होती)

कुतः + आगतः = कुतआगतः (वा) कुतयागतः
नरः + इव = नरइव ………… नरयिव
कः + ईहते = कईहते ………… कयीहते
चन्द्रः + उदेति = चन्द्रउदेति ………… चन्द्रयुदेति
इतः + ऊर्द्धम् = इतऊर्द्धम् ………… इतयूर्द्धम्
देवः + ऋषिः = देवऋषिः ………… देवयृषिः
उच्चारितः + ऌकारः = उच्चारितऌकारः उच्चारितयॢकारः
कः + एषः = कएषः ………… कयेषः
कुतः + ऐक्यम् = कुतऐक्यम् ………… कुतयैक्यम्
रक्तः + ओष्ठः = रक्तओष्ठः ………… रक्तयोष्ठः
राज्ञः + औदार्य्यम् = राज्ञऔदार्य्यम् राज्ञयौदार्य्यम्

आकारसे परे विसर्ग का लोप श अथवा य होताहै स्वर परे होनेसे।

अश्वाः + अमी = अश्वाअमी (वा) अश्वायमी
गजाः + इमे = गजाइमे ………… गजायिमे
ताराः + उदिताः = ताराउदिताः ………… तारायुदिताः
आगताः + ऋषयः = आगताऋषयः आगतायृषयः
नराः + एते = नराएते ………… नरायेते

आकारसे परे विसर्ग का लोपश होताहै सञ्चारवर्णपरे होनेसे।

हताः + गजाः = हतागजाः, हताः + भटाः = हताभटाः
पुत्राः + जाताः = पुत्राजाताः, मधुराः + झङ्काराः = मधुराझङ्काराः
नवाः + डमरवः = नवाडमरवः, गजाः + ढौकन्ते = गजाढौकन्ते
निर्वाणाः + दीपाः = निर्वाणादीपाः, अश्वाः + धावन्ति = अश्वाधावन्ति

उन्नताः + नगाः = उन्नतानगाः, दृष्टाः + वन्याः = दृष्टावन्याः

नराः + भीताः = नराभीताः, प्रतीताः + मासाः = प्रतीतामासाः

छात्राः + यतन्ते = छात्रायतन्ते, पन्ताः + रथ्याः = पन्तारथ्याः

नराः + लभन्ते = नरालभन्ते, वाताः + वान्ति = वातावान्ति

बालकाः + हसन्ति = बालकाहसन्ति

इकारादि स्वरवर्णों से परे विसर्ग को र होता है स्वर और सम्वार वर्ण परे होने से

कविः + अयम् = कविरयम्, गतिः + इयम् = गतिरियम्

रविः + उदेति = रविरुदेति, श्रीः + असौ = श्रीरसौ

सुधीः + एषः = सुधीरेषः, वन्धुः + आगतः = वन्धुरागतः

गुरुः + उवाच = गुरुरुवाच, वधूः + एषा = वधूरेषा

भूः + इयम् = भूरियम्, मातृः + अन्वेयः = मातृरन्वेय

दुहितुः + आहूय = दुहितुराहूय, रवेः + उदयः = रवेरुदयः

नैः + ऊर्क्तं = नैरूर्क्तं, विधोः + अस्तगमनम् = विधोरस्तगमनम्

प्रभोः + आदेशः = प्रभोरादेशः, गौः + अयम् = गौरयम्

ऋषिः + गच्छति = ऋषिर्गच्छति, हविः + घ्राणम् = हविर्घ्राणम्

गुरुः + जयति = गुरुर्जयति, कृतैः + कङ्कारैः = कृतैर्कङ्कारैः

नवैः + डमरुभिः = नवैर्डमरुभिः, गौः + ढौकते = गौर्ढौकते

रवेः + दर्शनम् = रवेर्दर्शनम्, निः + धनः = निर्धनः

दुः + नीतिः = दुर्नीतिः, निः + बन्धः = निर्बन्धः

निः + भयः = निर्भयः, मुहुः + मुहुः = मुहुर्मुहुः

बहिः + योगः = बहिर्योगः, विधुः + लीयते = विधुर्लीयते

वायुः + वाति = वायुर्वाति, शिशुः + हसति = शिशुर्हसति

अकार से परे रेफ जाति(1) विसर्ग को र् होता है स्वर और सम्वार वर्ण परे होने से

पुनः + अपि = पुनरपि, पुनः + आगतः = पुनरागतः

(1) पुनः प्रातः अन्तः स्वः प्रभृति पद का विसर्ग, और ऋकारान्त शब्द के सम्बोधन के एक वचन के पद का विसर्ग, रेफ जाति विसर्ग अर्थात् र् स्थानीय विसर्ग है॥ पदान्त अहन् शब्द के विसर्ग को र होता है, पर रात्रि, रूप अथवा रथन्तर शब्द परे होने से नहीं होता यथा अहरहः। अब पक परे होने से रेफ विकल्प करके होता है यथा अहः पति अहर्पति, अहः पति॥

प्रातः + इहागतः = प्रातरिहागतः, प्रातः + एव = प्रातरेव

भ्रातः + आगच्छ = भ्रातरागच्छ, पितः + अनुमन्यस्व = पितरनुमन्यस्व

स्वः + गतः = स्वर्गतः, मातः + देहि = मातर्देहि

अन्तः + धानम् = अन्तर्धानम्, पितः + नमस्ते = पितर्नमस्ते

दुहितः + याहि = दुहितर्याहि, भ्रातः + लुनीहि = भ्रातर्लुनीहि

जामातः + वद = जामातर्वद, भ्रातः + हस = भ्रातर्हस

विसर्गस्थानीय रेफ को लोप होता है र परे होनेसे और पूर्व स्वर को दीर्घ होता है।

पितर् + रक्तः = पितारक्तः, निर् + रसः = नीरसः

मातर् + रोदनम् = मातारोदनम्, विधुर् + राजते = विधूराजते

सः एषः इन पदोंके विसर्ग का लोपश्च होता है अकार भिन्न स्वर अथवा व्यञ्जन् परे होनेसे।

सः + आगतः = सआगतः, सः + इच्छति = सइच्छति

सः + ईहते = सईहते, सः + उवाच = सउवाच

सः + करोति = सकरोति, सः + गच्छति = सगच्छति

सः + चलति = सचलति, सः + हसति = सहसति

एषः + आयाति = एषआयाति, एषः + पति = एषपति

एषः + धावति = एषधावति, एषः + रोदिति = एषरोदिति

एषः + वदति = एषवदति, एषः + शेते = एषशेते

भोः भगोः अघोः इन पदोंका विसर्ग लोपश्च होता है स्वर(१) और सघार वर्ण परे होनेसे।

भोः + अम्बरीष = भोअम्बरीष, भोः + ईशान = भोईशान

भोः + उमापते = भोउमापते, भोः + गदाधरः = भोगदाधर

भोः + जनमेजय = भोजनमेजय, भोः + दामोदर = भोदामोदरः

भोः + माधव = भोमाधव, भोः + यदुपते = भोयदुपते

भगोः + नमस्ते = भगोनमस्ते, अघोः + याहि = अघोयाहि

(१) भोः, भगोः, अघोः, इनके विसर्गको कोईओंके मतमे य् भी विकल्प करके होता है स्वरपर होनेसे यथा भो अच्युत भो यच्युतः ॥

णत्वविधान

ऋ ॠ र् ष् से परे न् को ण होता है। यथा

नृ + नाम् = नृणाम्, नॄ + नाम् = नॄणाम्

चतुर् + नाम् = चतुर्णाम्, पुष् + नाति = पुष्णाति

तथा स्वर, कवर्ग, पवर्ग, य् व् ह् और अनुस्वार का व्यवधान होने से भी न को ण होता है।[1] यथा

कर् + अनम् = करणम्, हरी + नाम् = हरीणाम्, गुरु + ना = गुरुणा

पर् + एन = परेण, अर्क + एन = अर्केण, मूर्ख + एन = मूर्खेण

मृग् + एन = मृगेण, दीर्घ + एन = दीर्घेण, दर्प + एन = दर्पेण

रेफ + एन = रेफेण, गर्भ + एन = गर्भेण, द्रुम् + एन = द्रुमेण

रय + एन = रयेण, गर्व + एन = गर्वेण, ग्रह + एन = ग्रहेण

बृंह + अनम् = बृंहणम्॥

परन्तु पदान्त न् को ण नहीं होता। यथा

नरान्, हरीन्, गुरून्, भ्रातॄन्, ग्रहान्, द्रुमान्, मृगान्, वृषान्,

तथा तवर्ग[2] प और भ युक्त न को ण नहीं होता। यथा

कृन्तति, ग्रन्थनम्, वृन्दः, रुन्धन्ति, तृप्नोति, स्तभ्नाति,

तथा जो एक पद में ऋ ॠ र् ष् हो और अन्य पद में न हो तो उसको ण नहीं होता।[3] यथा

नृ-यानम्, वृष-यानम्, सुरा-पानम्, गिरि-गहनम्,

(1) एतद्व्यतिरिक्त अन्य वर्ण का व्यवधान होने से न को ण नहीं होता यथा अर्चना, मूर्छना, अर्जनम्, किरीटेन, रड़ेन, दृढेन, आर्तेन, अर्थेन, विमर्दन, अर्द्धेन, विरलेन, स्पर्शेन, रसेन

(2) नभित्र

(3) यदि अन्य पदस्थित न, विभक्ति स्थाने जात अथवा विभक्ति युक्त हो, अथवा स्त्रीलिङ्ग के ई प्रत्यय के साथ मिलित हो, तो उसके स्थान में विकल्प करके ण होता है। यथा; प्रभावेण, (वा) प्रभावेन; प्रभावाणाम्, (वा) प्रभावानाम्; नगरयायिणा = (वा) नगरयायिना; नगरयायिणी (वा) नगरयायिनी। परन्तु युवन् शब्द से परे विभक्ति युक्त न होने-

से, और भगिनी प्रभृति शब्दों के न को, ण नहि होता; यथा, स्त्रयुवानौ, क्षत्रिययूना, शूद्रयूनाम्, पितृभगिनी, हरकामिनी, हरिभामिनी, चोरयामिनी, क्षत्रिययूनी।

यदि अन्य पद एकस्वर विशिष्ट अथवा कवर्ग युक्त हो तो न को नित्यहि ण होता है। यथा प्रभुणा, वृत्रहणः, श्रीकामेण, स्वर्गकामिणा, परिपाकेण। परन्तु पक्व शब्द युक्त न को ण नहि होता यथा परिपक्वेन, परिपक्वानि, परिपक्वानाम्।

औषधिवाचक और वृक्षवाचक शब्दों से परे वन शब्द के न को विकल्प करके ण होता है; (शस्य के पक जाने सेहि जिन उद्भिदों का जीवन शेष होता है उन्को औषधि कहते हैं) यथा (औषधिवाचक) व्रीहिवणम् (वा) व्रीहिवनम्, दूर्वावणम् (वा) दूर्वावनम्, रम्भावणम् (वा) रम्भावनम्, हरिद्रावणम् (वा) हरिद्रावनम्, आर्द्रकवणम् (वा) आर्द्रकवनम्। (वृक्षवाचक) लोध्रवणम् (वा) लोध्रवनम्, बदरीवणम् (वा) बदरीवनम्। परन्तु वे शब्द द्विस्वर अथवा त्रिस्वर न हों तो उनसे परे वन के न को ण नहि होता यथा देवदारुवनम्, उडुम्बरवनम् (यहां दो तीन से अधिक स्वर हैं)।

शरादि शब्दों से परे वन के न को नित्य ण होता है। यथा, शरवणम्, इक्षुवणम्, प्लक्षवणम्, आम्रवणम्, खदिरवणम्।

प्र, निर, अन्तर, और अग्रे, इन शब्दों से परे भी वन के न को नित्य ण होता है। यथा, प्रवणम्, निर्वणम्, अन्तर्वणम्, अग्रेवणम्।

अन्यपदस्थित पान शब्द के न को, रप्रभृति के परे होने से, विकल्प करके ण होता है। यथा, क्षीरपाणम् (वा) क्षीरपानम्, नीरपाणम् (वा) नीरपानम्, विषपाणम् (वा) विषपानम्, कषायपाणम् (वा) कषायपानम्।

वयस् अर्थ मे त्रि, चतुर् शब्द से परे हायन के न को ण होता है। यथा, त्रिहायणो वत्सः, चतुर्हायणी गौः।

प्रादि कई एक शब्द से परे अह्न शब्द के न को ण होता है यथा प्राह्णः, पूर्वाह्णः, अपराह्णः।

निम्नलिखित शब्दों मे भी न को ण हुआ है।

परायणम्, पारायणम्, उत्तरायणम्, चान्द्रायणम्, नारायणः, अग्रणीः, ग्रामणीः। शूर्पणखा, प्रणसः, द्रुणसः, खरणसः, वाध्रीणसः।

गिरिनदी, स्वर्नदी, गिरिनितम्ब, गिरिनख, गिरिनद्ध, चक्रनदी, चक्रनितम्ब, तूर्यमान, माषोन, आग्रयन, इन शब्दों के न को विकल्प करके ण होता है। यथा, गिरिणदी इत्यादि।

पहिले पद के अन्त मे ष् होने से पर पद के न को ण नहि होता। यथा, निष्पानम्, हविष्पानम्, आयुष्कामेन, निष्कामानाम्, दुष्विना, सर्पिष्पायिना।

प्र, परा, परि, निर्, इन चार उपसर्गों से और अन्तर शब्द से परे नदादि धातुओं के न् को ण होता है यथा प्रणदति; प्रणामः; प्रणयति; (नश् धातु के श को ष् होने से न को ण नहि होता यथा प्रनष्टः इत्यादि) परिणयः, निर्णयः; प्रणोदः; प्राणः; अन्तर्हेणनम्। हन् धातु के ह को घ होने से न को ण नहि होता यथा प्रघ्नन्ति, प्राघ्नुः।

तथा यदि हन् धातु का न्, म् अथवा व् से युक्त हो तो उसे विकल्प करके ण होता है। यथा, प्रहण्मि (वा) प्रहन्मि, प्रहण्वः (वा) प्रहन्वः।

तथा निंस, निक्ष, निन्द, इन तीन धातुओं के न् को विकल्प करके ण होता है। यथा प्रणिंसितव्यम्, (वा) प्रनिंसितव्यम्, प्रणिक्षणम् (वा) प्रनिक्षणम्, प्रणिन्दति (वा) प्रनिन्दति।

तथा हिनु और मीना के न् को ण होता है यथा प्रहिणोति, प्रहिणुतः, प्रमीणाति, प्रमीणन्ति।

तथा लोट की आनि विभक्ति के न् को ण होता है। यथा, प्रभवाणि, परिवहाणि, निर्वपाणि, अन्तर्वपाणि।

तथा गद्, पत्, दा, धा, हन्, नद्, पद्, दान्, दो, सो, दे, धे, मा, या, वा, द्रा, प्सा, वप्, वह्, चि, दिह्, इन धातुओं के पूर्व वर्त्ती नि उपसर्ग को णि हो जाता है। यथा प्रणिगदति, प्रणिपतति, प्रणिददाति, प्रणिधानम् इत्यादि॥

प्रादिसे परे कृत् प्रत्यय के न को भी ण होता है। यथा प्रयाणम्, निर्याणः, अन्तर्याणीयं, प्रापणम्, प्रेङ्खणम्, परिहीणः,

परन्तु जिन धातुओं के आदि में व्यञ्जन वर्ण हों और उनकी उपधा में अर्थात् अन्त्य वर्ण के पूर्व नामी स्वर हों तो उनसे परे कृत् प्रत्यय के न् को विकल्प करके ण् होता है (अ, आ भिन्न सारे स्वरों को नामी कहते हैं) यथा, प्रकोपणम्, परिगोपणीयम्।

तथा णिजन्त धातुओं के उत्तर कृत् प्रत्यय के न् को विकल्प करके ण् होता है। यथा, प्रयापणम्, वा प्रयापनम्

परन्तु भा, भू, पू, कम्, गम्, प्याय, वेप्, कम्प, इन धातुओं के उत्तर कृत् प्रत्यय के न को ण नहिं होता। यथा, परिभानीयम्, परिभवनीयम्, परिपवनीयम्, परिकमनीयम्, परिगमनीयम्, परिप्यायनीयम्, परिवेपनीयम्, परिकम्पनीयम्,

कृत् प्रत्यय के न् को व्यञ्जन वर्ण में युक्त होने से भी ण नहिं होता। यथा, प्रभग्नः, परिमग्नः, निर्विघ्नः, ।

षत्वविधान

इकारादि स्वर क, र्, अथवा र् से परे प्रत्यय के स को ष होता है। यथा(१)

मुनि + सु = मुनिषु, नदी + सु = नदीषु

साधु + सु = साधुषु, वधू + सु = वधूषु

भ्रातृ + सु = भ्रातृषु, नरे + सु = नरेषु

अग्ने + सीत् = अग्नेषीत्, गो + सु = गोषु

नौ + सु = नौषु, दिक् + सु = दिक्षु

प्राङ्खु + सु = प्राङ्खुषु, चतुर् + सु = चतुर्षु

तथा ..... अनुस्वार(२) और विसर्ग के व्यवधान होने से भी प्रत्यय के स को ष होता है। यथा

हवीं + सि = हवींषि, धनूं + सि = धनूंषि

आशीः + सु = आशीःषु, आयुः + सु = आयुःषु
(३)

इति सन्धिप्रकरणम्

(१) सात प्रत्यय के स को ष नहिं होता; यथा अग्निसात्

(२) क्लीव लिङ्ग की प्रथमा और द्वितीया के बहुवचन में जो अनुस्वार होता है तद्भिन्न अनुस्वार का व्यवधान हो तो स को ष नहिं होता यथा पुंस् शब्द का पुंसु यहां पुंषु नहिं होता।

(३) षोपदेश धातु को अभ्यस्त करने से यदि धातु का दूसरा स, इ, उ, ए, ओ, इनसार

वर्णों से परे हो तो उसके स्थान मे ष होता हैं। सञ्ज, सद, सह, साधू, सिच्, सिध, सिव, सु, सू, सेव, सो, स्तम्भ, स्तु, स्तुभ, स्तै, स्था, स्निह, स्नु, स्मि, स्वञ्ज, स्वद स्वप स्विद इत्यादि षोपदेश धातु हैं। यथा सिषेच:, तुष्टुभे, सेषिच्यते, परन्तु धातु के उत्तर विहित सन् प्रत्यय के स को ष होने से धातु के स को ष नहि होता। यथा सिसिक्षति। धातु को होता है यथा तुष्टूषति। यङ्प्रत्यय परे होने से सिच् धातु के स् को ष् नहि होता यथा सेसिच्यते। एपन्न धातुओं मे केवल स्विद, स्वद, और सह धातु के स को ष नहि होता सन् प्रत्यय के स को ष होनेसे, और सबों को होता है, यथा सिस्वेदयिषति, सिस्वादयिषति, सिसहायिषति (अन्यथा) सुष्वापयिषति ॥

इकारान्त (नि, वि, परि, प्रति, अति, अधि, अपि, अभि,) और उकारान्त (सु, अनु,) उपसर्ग के परिस्थित स्वादि धातु के स को ष होताहै। सु, तुदादिगणीय सू, सो, स्तु, स्तुभ, स्था, सेनि, सिध, सिच, सञ्ज, स्वञ्ज, सद, स्तम्भ ये त्रयोदश धातु स्वादि हैं। यथा अभिषुणोति, प्रतिषेधति, अनुषीदति, अनुष्टुभ्नोति। परलट् और लृङ् विभक्ति और स्यत प्रत्यय परे होने से नहि होता, यथा अभिसोष्यति, अभ्यसोष्यत्, प्रतिसोष्यत्। और गमनार्थ सिध धातु को नहि होता, यथा गृहं प्रतिसेधति। तथा प्रति पूर्वक सद् धातु को नहि होता यथा प्रतिसीदति। आलम्बन और सामीप्य अर्थ मे अव पूर्वक स्तम्भ धातु को भी होता हैं यथा यष्टिमवष्टभ्य आस्ते (यष्टिमालम्ब्यतिष्ठतीत्यर्थ:), गो: (गो: समीपे वर्त्तते इत्यर्थ:)। अट् का व्यवधान होने से भी स् को ष होता है यथा अभ्यषुणोत् इत्यादि; परि, नि, वि, पूर्वक स्तु और स्वञ्ज धातु को विकल्प करके होता है यथा पर्य्यष्टावीत् (वा) पर्य्यस्तावीत्; पर्य्यष्वजत पर्य्यस्वजत ॥

परि, नि, वि, पूर्वक सेव, सिव, सह धातु के स् को ष होता है यथा परिषेवते, विषहते (पर सह के स्थान मे सोढ़ होने से ष् नहि होता यथा परिसोढ़ा) अट् के व्यवधान होने से भी होता है परन्तु सेव धातु को नित्य और सिव सह धातु को विकल्प करके यथा पर्य्यषेवत, पर्य्यषव्यत् (वा) पर्य्यसीव्यत्, न्यषहत (वा) न्यसहत। एपन्न करने से लङ् विभक्ति मे सिव और सह धातु के स को ष् नहि होता; यथा पर्य्यसीसिवत्, पर्य्यसीसहत् ॥

इकारान्त उकारान्त उपसर्ग से परे सेनि, सिध, सिच्, सञ्ज, स्वञ्ज, सद, सेव, धातु अभ्यस्त होने से दोनो स को ष होता है यथा अभिषिषेणयिषति, निषिषेध, अभिषिषेचयिषति, (यङ्प्रत्यय होनेसे नहि होता यथा अभिसेसिच्यते) परिषास्वज्यते (लिट् विभक्ति मे स्वञ्ज और सद धातु के द्वितीय स को ष नहि होता यथा परिषस्वजे, निषसाद)

इकारान्त उकारान्त उपसर्ग से परे अभ्यस्त स्था और स्तम्भ धातु के स् को त का व्यवधान होने से भी ष होता है, यथा अनुतष्ठौ, अभितष्टम्भ (प्रतिस्तब्ध और निस्तब्ध इन दोनों के स को ष नहि होता। और एपन्न करने से लङ् विभक्ति मे स्तम्भ के स को ष नहि होता यथा पर्य्यतस्तम्भत्) ॥

परि पूर्वक स्कृ धातु के स् को ष् होता है। यथा परिष्करोति। अट् के व्यवधान होने से विकल्प करके होता है यथा पर्य्यष्करोत् (वा) पर्य्यस्करोत्, पर्य्यष्कार्षीत्, (वा) पर्य्यस्कार्षीत् ॥

अनु, वि, परि, अभि, नि, पूर्वक स्यन्द धातु के स को विकल्प करके ष होता होता है यथा

अनुष्यन्दते (वा) अनुस्यन्दते, निष्यन्दते (वा) निस्यन्दते (प्राणीकर्त्ता होने से ष् नहि होता यथा अनुस्यन्दते मत्स्यः) ॥

परि पूर्वक स्कन्द धातु के स् को विकल्प करके ष् होता है यथा परिष्कन्दति (वा) परिस्कन्दति । निष्ठाभिन्न कृत प्रत्यय परे होने से वि पूर्वक स्कन्द धातु के स् को विकल्प करके ष् होता है यथा विष्कन्ता (वा) विस्कन्ता, विष्कन्तुम् (वा) विस्कन्तुम् (निष्ठा होने से) विष्कन्नः, विष्कन्नवान् ।

निर्, नि, वि, पूर्वक स्फुर और स्फुल धातु के स् को विकल्प करके ष् होता है, यथा निःष्फुरति, (वा) निःस्फुरति, निःष्फुलति (वा) निस्फुलति ॥

वि पूर्वक स्कम्भ धातु के स् को ष् होता है यथा विष्कभ्नाति विष्कम्भकः ॥

सु, वि, निर्, दुर् उपसर्ग के परवर्ती स्वप् के स्थान मे कृत सुप् के स् को ष् होता है यथा सुषुप्तः, दुःषुप्तः ॥

इकारान्त उकारान्त उपसर्ग और प्रादुः शब्द के परवर्त्ती अस् धातु के स् को ष् होता है यथा निषन्ति, प्रादुःषन्ति । परन्तु सकार त थ म व के साथ युक्त होने से ष् नहि होता अधिस्त, प्रतिस्थ, अधिस्मः, अनुस्वः ।

वस धातु के स्थान मे उस् होने से उस के स् को ष होता है यथा उषितः ऊषुः ॥

घस धातु के घ् को क् होने से उसके स को ष् होता है यथा जक्षतुः ॥

सह् धातु निष्पन्न साह शब्द सात् और साड् होने से स् को ष् होता है यथा तराषाट्, तुराषाड् (अन्यथा) तुरासाहौ

समास होने से अङ्गुलि शब्द के परस्थित सङ्ग शब्द के स को ष् होता है यथा अङ्गुलिषङ्गः ॥

सु, वि, निर्, दुर् उपसर्ग के परस्थित सम शब्द के स् को ष् होता है यथा सुषमा, सुषमा, विषमः, विषमा ॥

संज्ञा अर्थ मे अ आ भिन्न स्वर के परस्थित सेना शब्द के स को ष होता है, यथा सुषेणः (अन्यथा) कुरुसेना ।

भूमि और दिवि शब्द के परवर्त्ती स्थ शब्द के स् को ष् होता है यथा भूमिष्ठः दिविष्ठः और युधि से परे स्थिर के स् को ष् होता है यथा युधिष्ठिरः

समास मे मातृ पितृ शब्द के परवर्त्ती स्वसृ शब्द के प्रथम स् को ष् होता है यथा मातृष्वसा, पितृष्वसा (विभक्ति का लोप न होने से विकल्प करके होता है यथा मातुःष्वसा, मातुःस्वसा । (असमासे) मातुःस्वसा पितुःस्वसा ।

अथ नामप्रकरणम्

प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी; पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी ये सात विभक्तियां हैं। शब्द के आगे यहि सात विभक्तियें लगती हैं। विभक्ति युक्त शब्द को पद कहते हैं ॥

प्रत्येक विभक्ति के तीन तीन वचन हैं; एकवचन, द्विवचन, बहुवचन शब्द मे एकवचन की विभक्ति लगाने से एक वस्तु जानी जाती है, द्विवचन की विभक्ति लगाने से दो वस्तु, और बहुवचन मे दो से अधिक सब संख्या समझी जाती हैं ॥

विभक्तियें का स्वरूप और अर्थ (१)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन	अर्थ	भाषाविभक्ति
प्रथमा	ः	औ	अः	कर्त्ता	०, ने
द्वितीया	अम्	औ	अः	कर्म्म	को
तृतीया	आ	भ्याम्	भिः	करण	से, द्वारा
चतुर्थी	ए	भ्याम्	भ्यः	सम्प्रदान	को, अर्थ, निमित्त
पञ्चमी	अः	भ्याम्	भ्यः	अपादान	से
षष्ठी	अः	ओः	आम्	सम्बन्ध	का, की
सप्तमी	इ	ओः	सु	आधार	मे

किन किन शब्दों मे कौन कौनसी विभक्तियां लग कर कैसे कैसे पद होते हैं सो क्रम से लिखा जाता है। सम्बोधन मे भी प्रथमा विभक्ति होती है परंतु एकवचन मे उसके स्वरूप की कुछ विभिन्नता है (२) इसी लिये एकवचन के रूप पृथक लिखे जावेंगे; जहां पृथक न लिखे हों वहां समझना कि कुछ विभिन्नता नहि है।

(१) संस्कृत वैयाकरण लोग इन विभक्तियों का रूप इन के साथ इस प्रकार लिखते हैं (वि) सु औ जस् २ अम् औट् शस् ३ टा भ्याम् भिस् ४ ङे भ्याम् भ्यस् ५ ङसि भ्याम् भ्यस् ६ ङ· स् ओस् आम् ७ ङि ओस् सुप्।
(२) सम्बोधन के एकवचन की विभक्ति को धि कहते हैं।

विभक्ति का योग होने से, कहीं शब्द का, कहीं विभक्ति का, कोई अंश रूपान्तर प्राप्त अथवा लुप्त होता है । कहां किस प्रकार रूपान्तर हुआ है यह निम्न लिखित प्रयोगों से हि जाना जा सकता है ॥

स्वरान्त शब्द

पुंलिङ्ग

अकारान्त नर शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नरः	नरौ	नराः
द्वितीया	नरम्	नरौ	नरान्
तृतीया	नरेण	नराभ्याम्	नरैः
चतुर्थी	नराय	नराभ्याम्	नरेभ्यः
पञ्चमी	नरात्	नराभ्याम्	नरेभ्यः
षष्ठी	नरस्य	नरयोः	नराणाम्
सप्तमी	नरे	नरयोः	नरेषु
सम्बोधन	नर	नरौ	नराः

प्रायः सारे अकारान्त पुंलिङ्ग शब्द नर शब्द की न्याईं हैं॥

(१) अल्पप्रभृति और द्वितीय तृतीयभिन्न । अल्प प्रभृति के प्रथमा के बहुवचन मे दो प्रकार के रूप होते हैं यथा, अल्पे, अल्पाः । अल्प प्रभृति शब्द ये हैं; अल्प, प्रथम, चरम, अर्द्ध, कतिपय, द्वय, त्रय, द्वितीय, तृतीय, चतुष्टय, इत्यादि । द्वितीय तृतीय शब्द के केवल चतुर्थी, पञ्चमी और सप्तमी के एक वचन मे दो प्रकार के रूप होते हैं यथा

	चतुर्थी	पञ्चमी	सप्तमी
द्वितीय	द्वितीयस्मै	द्वितीयस्मात्	द्वितीयस्मिन्
	द्वितीयाय	द्वितीयात्	द्वितीये
तृतीय	तृतीयस्मै	तृतीयस्मात्	तृतीयस्मिन्
	तृतीयाय	तृतीयात्	तृतीये

कई एक और अकारान्त शब्दों के रूप भी कुछ विलक्षण होते हैं यथा निर्ज्जर मे जरा शब्द जो स्वरादि विभक्ति परे होने से विकल्प करके जरस् होजाता है यथा निर्ज्जरः, निर्ज्जरौ (वा) निर्ज्जरसौ इत्यादि । कोई पण्डित टा विभक्ति के स्थान मे इन और ङसि के स्थान मे आत् करते हैं, इससे तृतीयैकवचन के रूप निर्ज्जरसिन वा निर्ज्जरेण और पञ्चम्येकवचन के निर्ज्ज-

रसात् वा निर्झेरान् रूपहोते हैं ॥ पादशब्द के स्थान मे पद, दन्त के स्थान मे दत्, यूष के स्थान मे यूषन्, मास के स्थान मे मास्, आसन के स्थान मे आसन्, उदक के स्थान मे उदन्, हृदय के स्थान मे हृद्, शीर्ष के स्थान मे शीर्षन्, दोष के स्थान मे दोषन् विकल्प करके होता है शसादि विभक्ति, तद्धित का स्वर यकार, और स्त्रीलिङ्ग का ईप् प्रत्यय परे होने से यथा पादः, पादौ, पादाः, पादम्, पादौ, पादान्, वा पदः, पादेन (वा) पदा, पादाभ्याम् (वा) पद्भ्याम्, इत्यादि एवं दन्तः, दन्तान् (वा) दतः, दन्ताभ्याम् (वा) दद्भ्याम् इत्यादि एवं यूषः, यूषान् (वा) (शब्दान्त अन् के अ का नित्य लोप होता है शसादि स्वर, तद्धित स्वर और यकार परे होने से और ईकार और ङि प्रत्यय परे होने से विकल्प करके होता है, परम्, व, का संयोग होने से (यथा ब्रह्मन्, यज्वन्, प्रभृति मे) इन स्थानों मे अ का लोप नहि होता इस नियमानुसार यूष्णः हुआ, तथा यूषेण (वा) यूष्णः, (शब्दान्त न का लुप होता है और विराम मे धिभिन्नहसादि विभक्ति परे होने से, लुप होने से फेर सन्धि नहि होती, अतएव) यूषभ्याम् इत्यादि एव मासः, मासौ, मासः, (वा) मासान्, माःसु वा मासेषु इत्यादि एवं द्व्यहः (संख्यावाचक और वि साय शब्दों के परे अह्न के स्थान मे अहन् विकल्प करके होता है ङि विभक्ति परे होने से यथा) द्व्यह्नि (वा) द्व्यहनि ।

आकारान्त सोमपा शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सोमपाः	सोमपौ	सोमपाः
द्वितीया	सोमपाम्	सोमपौ	सोमपः
तृतीया	सोमपा	सोमपाभ्याम्	सोमपाभिः
चतुर्थी	सोमपे	सोमपाभ्याम्	सोमपाभ्यः
पञ्चमी	सोमपः	सोमपाभ्याम्	सोमपाभ्यः
षष्ठी	सोमपः	सोमपोः	सोमपाम्
सप्तमी	सोमपि	सोमपोः	सोमपासु
सम्बोधन	सोमपाः		

हाहा शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	हाहाः	हाहौ	हाहाः
द्वितीया	हाहाम्	हाहौ	हाहान्
तृतीया	हाहा	हाहाभ्याम्	हाहाभिः
चतुर्थी	हाहै	हाहाभ्याम्	हाहाभ्यः

पञ्चमी	हाहाः	हाहाभ्याम्	हाहाभ्यः
षष्ठी	हाहाः	हाहौः	हाहाम्
सप्तमी	हाहे	हाहौः	हाहासु
सम्बोधन	हाहाः		

धातु वाले आकारान्त शब्द के रूप सोमपा की न्याई होते हैं तद्भिन्न के हाहा की न्याई

इकारान्त मुनिशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मुनिः	मुनी	मुनयः
द्वितीया	मुनिम्	मुनी	मुनीन्
तृतीया	मुनिना	मुनिभ्याम्	मुनिभिः
चतुर्थी	मुनये	मुनिभ्याम्	मुनिभ्यः
पञ्चमी	मुनेः	मुनिभ्याम्	मुनिभ्यः
षष्ठी	मुनेः	मुन्योः	मुनीनाम्
सप्तमी	मुनौ	मुन्योः	मुनिषु
सम्बोधन	मुने		

पति[1] सखि बिना सारे[2] इकारान्त पुल्लिङ्ग शब्द के रूप मुनि शब्द की न्याई होते हैं॥

पति शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पतिः	पती	पतयः
द्वितीया	पतिम्	पती	पतीन्
तृतीया	(३) पत्या	पतिभ्याम्	पतिभिः
चतुर्थी	पत्ये	पतिभ्याम्	पतिभ्यः
पञ्चमी	पत्युः	पतिभ्याम्	पतिभ्यः
षष्ठी	पत्युः	पत्योः	पतीनाम्
सप्तमी	पत्यौ	पत्योः	पतिषु
सम्बोधन	पते		

(१) परन्तु समासान्त पतिशब्द के रूप मुनिशब्द की न्याई होते हैं यथा श्रीपतिना इत्यादि।
(२) (डतिप्रत्ययान्त) कति, यति, तति शब्द बहुवचनान्त हि होते हैं, इनके आगे जस् शस् विभक्ति का लुक् होजाता है यथा कति, कति, कतिभिः, कतिभ्यः, कतिभ्यः, कतीनाम्, कतिषु एवं यति तति।
(३) तृतीयादि विभक्ति मे पति [illegible] मुनि शब्द की न्याई भी होते हैं यथा पतिना नीयमाना याः उरः मुक्तो नद्‌ष्यति; सीतायाः पतये नमः नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीबे च पतिते पतौ इत्यादि गीयमानकंमि।

सखिशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सखा	सखायौ	सखायः
द्वितीया	सखायम्	सखायौ	सखीन्
तृतीया	सख्या	सखिभ्याम्	सखिभिः
चतुर्थी	सख्ये	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
पञ्चमी	सख्युः	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
षष्ठी	सख्युः	सख्योः	सखीनाम्
सप्तमी	सख्यौ	सख्योः	सखिषु
सम्बोधन	हे सखे		

ईकारान्त सुधीशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सुधीः	सुधियौ	सुधियः
द्वितीया	सुधियम्	सुधियौ	सुधियः
तृतीया	सुधिया	सुधीभ्याम्	सुधीभिः
चतुर्थी	सुधिये	सुधीभ्याम्	सुधीभ्यः
पञ्चमी	सुधियः	सुधीभ्याम्	सुधीभ्यः
षष्ठी	सुधियः	सुधियोः	सुधियाम्
सप्तमी	सुधियि	सुधियोः	सुधीषु
सम्बोधन	हे सुधीः		

(१) धातु के ई को इय् और ऊ को उव् हो जाता है विभक्ति का स्वर परे होने से। (यहां धी धातु है और औ अः प्रभृति स्वर हैं)

सेनानीशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सेनानीः	सेनान्यौ[1]	सेनान्यः
द्वितीया	सेनान्यम्	सेनान्यौ	सेनान्यः
तृतीया	सेनान्या	सेनानीभ्याम्	सेनानीभिः
चतुर्थी	सेनान्ये	सेनानीभ्याम्	सेनानीभ्यः
पञ्चमी	सेनान्यः[2]	सेनानीभ्याम्	सेनानीभ्यः
षष्ठी	सेनान्यः[2]	सेनान्योः	सेनान्याम्
सप्तमी	सेनान्याम्[3]	सेनान्योः	सेनानीषु
सम्बोधन	सेनानीः		

अग्रणी ग्रामणी प्रभृति कई एक शब्दों के सिवा प्राय सारे ईकारान्त शब्दों के सुधी शब्द की न्याई रूप होते हैं। अग्रणी प्रभृति के रूप सेनानी की न्याई होते हैं। प्रधी प्रभृति के रूप भी सेनानी की न्याई होते हैं परन्तु सप्तमी के एकवचन मे प्रध्यि इस प्रकार रूप होताहै। वातप्रमी प्रभृति कई एक शब्द हैं जिन्के रूप सेनानी की न्याई होते हैं; केवल इतना विशेष है कि द्वितीया के एकवचन मे वातप्रमीम् द्वितीयाके बहुवचन मे वातप्रमीन् और सप्तमी के एकवचन मे वातप्रम्यि इस प्रकार रूप होते हैं।

(१) कारकादि धातु, अव्ययादिधातु, और अनेकस्वरधातु के ईको य और ऊ को व हि होता है (इय् उव् नहिं होता) विभक्ति का स्वर परे होने से; परन्तु उस ई ऊ के पूर्व यदि धातु के व्यञ्जनवर्ण संयुक्त हों तो उन्को य व नहि होता, इय् उव् होता है; और सुधीशब्द के ई को य नहि होता और दृन्भू, पुनर्भूः वर्षाभू, करभू, कार भू इन्के सिवा भूशब्द के ऊ को व् नहिं होता। कारकादि धातु के शब्द सेनानी ग्रामणी प्रभृति हैं, अव्ययादि धातु के शब्द प्रधीः इत्यादि, अनेकस्वर धातु के शब्द दिधीः वेवीः इत्यादि, संयुक्त धातु के शब्द यवक्रीः प्रभृति, भूधातु के शब्द स्वभूः इत्यादि

(२) नी वा उस्का आदेश नी और खी के पर्से परे पञ्चमी षष्ठी के अः विभक्ति को उः होजाताहै विकल्प करके यथा सुख्युः वा सुख्यः, सुत्युः (वा) सुत्यः, सख्युः (वा) सख्यः।

(३) नी से परे इ विभक्ति को आम् होजाता है।

उकारान्त साधु शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	साधुः	साधू	साधवः
द्वितीया	साधुम्	साधू	साधून्
तृतीया	साधुना	साधुभ्याम्	साधुभिः
चतुर्थी	साधवे	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
पञ्चमी	साधोः	साधुभ्याम्	साधुभ्यः
षष्ठी	साधोः	साध्वोः	साधूनाम्
सप्तमी	साधौ	साध्वोः	साधुषु
सम्बोधन	साधो		

सर्व[1] उकारान्त पुंल्लिङ्ग शब्द साधु शब्द की न्याईं हैं ॥

ऊकारान्त प्रतिभू शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	प्रतिभूः	प्रतिभुवौ	प्रतिभुवः
द्वितीया	प्रतिभुवम्	प्रतिभुवौ	प्रतिभुवः
तृतीया	प्रतिभुवा	प्रतिभूभ्याम्	प्रतिभूभिः
चतुर्थी	प्रतिभुवे	प्रतिभूभ्याम्	प्रतिभूभ्यः
पञ्चमी	प्रतिभुवः	प्रतिभूभ्याम्	प्रतिभूभ्यः
षष्ठी	प्रतिभुवः	प्रतिभुवोः	प्रतिभुवाम्
सप्तमी	प्रतिभुवि	प्रतिभुवोः	प्रतिभूषु
सम्बोधन	प्रतिभूः		

(१) क्रोष्टु शब्द के रूप कुछ विलक्षण हैं यथा—

१	२	३	४	५	६	७	८
क्रोष्टा	क्रोष्टारम्	क्रोष्ट्रा (वा)	क्रोष्ट्रे क्रोष्टवे	क्रोष्टुः (वा)	क्रोष्टुः (वा)	क्रोष्टरि (वा)	क्रोष्टो
क्रोष्टारौ	क्रोष्टारौ	क्रोष्टुना,	क्रोष्टुभ्याम्	क्रोष्टोः	क्रोष्टोः,	क्रोष्टौ,	
क्रोष्टारः	क्रोष्टून्	क्रोष्टुभ्याम्	क्रोष्टुभ्यः	क्रोष्टुभ्याम्	क्रोष्ट्रोः (वा)	क्रोष्ट्रोः (वा)	
		क्रोष्टुभिः		क्रोष्टुभ्यः	क्रोष्टोः,	क्रोष्टोः	
					क्रोष्टूनाम्	क्रोष्टुषु	

क्रोष्टु शब्द के स्थान में तृ विकल्प करके होता है शसादि विभक्ति, तद्भिन्न स्वर यकार और इप् परे होने से।

दृन्भू, पुनर्भू, वर्षाभू, करभू, काराभू, सल्लू, खलपू, हूहू, प्रभृति शब्दों के सिवाय (२९ पृ १ पं) प्राय सारे ऊकारान्त शब्दों के रूप प्रतिभू शब्द की न्याई होते हैं।

सल्लू शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सल्लूः	सल्वौ	सल्वः
द्वितीया	सल्वम्	सल्वौ	सल्वः
तृतीया	सल्वा	सल्लूभ्याम्	सल्लूभिः
चतुर्थी	सल्वे	सल्लूभ्याम्	सल्लूभ्यः
पञ्चमी	सल्वः	सल्लूभ्याम्	सल्लूभ्यः
षष्ठी	सल्वः	सल्वोः	सल्वाम्
सप्तमी	सल्वि	सल्वोः	सल्लूषु
सम्बोधन	सल्लूः		

दृन्भू प्रभृति[1] के रूप भी इसी प्रकार

ऋकारान्त दातृ शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	दाता	दातारौ	दातारः
द्वितीया	दातारम्	दातारौ	दातॄन्
तृतीया	दात्रा	दातृभ्याम्	दातृभिः
चतुर्थी	दात्रे	दातृभ्याम्	दातृभ्यः
पञ्चमी	दातुः	दातृभ्याम्	दातृभ्यः
षष्ठी	दातुः	दात्रोः	दातॄणाम्
सप्तमी	दातरि	दात्रोः	दातृषु
सम्बोधन	दातः		

पितृ भ्रातृ देवृ जामातृ सव्येष्ठृ नृ शब्दों के सिवाय सारे ऋकारान्त शब्द

(१) हूहू, अतिचमू प्रभृति शब्दों के रूप भी सल्लू की न्याई होते हैं, परन्तु 'धातु न होने से जो ईकारान्त, ऊकारान्त शब्द के आगे अम् विभक्ति को म् और शस् को न् हो जाता है' इसलिये इनके विभक्तियों में ? ? ? और ? ? ? रूप होते हैं।

धातृ शब्द की न्याईं होते हैं॥

भ्रातृ शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भ्राता	भ्रातरौ	भ्रातरः
द्वितीया	भ्रातरम्	भ्रातरौ	भ्रातॄन्

इनके सिवाय और सारी विभक्तियों मे दातृ शब्द की न्याईं रूप होते है। पितृ, देवृ, जामातृ, सव्येष्टृ, और नृ शब्द भ्रातृ शब्द की न्याई; केवल नृ शब्द की षष्ठी के बहुवचन मे नृणाम्, और नॄणाम् ये दो रूप होते हैं॥

ओकारान्त गो शब्द (१)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	गौः	गावौ	गावः
द्वितीया	गाम्	गावौ	गाः
तृतीया	गवा	गोभ्याम्	गोभिः
चतुर्थी	गवे	गोभ्याम्	गोभ्यः
पञ्चमी	गोः	गोभ्याम्	गोभ्यः
षष्ठी	गोः	गवोः	गवाम्
सप्तमी	गवि	गवोः	गोषु
सम्बोधन	गौः		

सारे पुल्लिङ्ग ओकारान्त शब्द इसी प्रकार होते हैं।

औकारान्त ग्लौ शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	ग्लौः	ग्लावौ	ग्लावः
द्वितीया	ग्लावम्	ग्लावौ	ग्लावः
तृतीया	ग्लावा	ग्लौभ्याम्	ग्लौभिः
चतुर्थी	ग्लावे	ग्लौभ्याम्	ग्लौभ्यः

(१) ऐकारान्त रै शब्द मात्र है [illegible] राय: (द्वि) रायम् रायौ राय: (तृ) राया राभ्याम् राभिः (च) राये राभ्याम् राभ्यः (पं) रायः राभ्याम् राभ्यः (ष) [illegible] रायोः [illegible] (स) रायि रायोः रासु (सं) हे राः

पञ्चमी	ग्लावः	ग्लौभ्याम्	ग्लौभ्यः
षष्ठी	ग्लावः	ग्लावोः	ग्लावाम्
सप्तमी	ग्लावि	ग्लावोः	ग्लौषु
सम्बोधन	ग्लौः		

सारे पुंलिङ्ग औकारान्त शब्द इसी प्रकार होते हैं।

स्त्रीलिङ्ग

आकारान्त-लताशब्द

	एक वचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	लता	लते	लताः
द्वितीया	लताम्	लते	लताः
तृतीया	लतया	लताभ्याम्	लताभिः
चतुर्थी	लतायै	लताभ्याम्	लताभ्यः
पञ्चमी	लतायाः	लताभ्याम्	लताभ्यः
षष्ठी	लतायाः	लतयोः	लतानाम्
सप्तमी	लतायाम्	लतयोः	लतासु
सम्बोधन	लते		

अम्बा(१), द्वितीया(२), तृतीया(३), जरा(४) भिन्न(५) सारे आकारान्त स्त्रीलिंङ्ग शब्दों के रूप लता शब्द की न्याई होते हैं।

(१) अम्बा शब्द के सम्बोधन के एकवचन मे "अम्ब" इस प्रकार पद होता है, इतना हि विशेष है; और सब विभक्तियों मे इसके लता शब्द की न्याई रूप होते हैं। अक्का और अल्ला शब्दों के रूप भी अम्बा की न्याई होते हैं॥

(२) द्वितीया तृतीया शब्द की चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी सप्तमी के एकवचन मे केवल विशेष है यथा

चतुर्थी	पञ्चमी	षष्ठी	सप्तमी
द्वितीयस्यै (वा) द्वितीयायै	द्वितीयस्याः (वा) द्वितीयायाः	द्वितीयस्याः (वा) द्वितीयायाः	द्वितीयस्याम् (वा) द्वितीयायाम्

इसी प्रकार तृतीया के रूप॥

(३) जराशब्द के रूप ये हैं।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	जरा	जरसौ, जरे	जरसः, जराः
द्वितीया	जरसम्, जराम्	जरसौ, जरे	जरसः, जराः
तृतीया	जरसा, जरया	जराभ्याम्	जराभिः
चतुर्थी	जरसे, जरायै	जराभ्याम्	जराभ्यः
पञ्चमी	जरसः, जरायाः	जराभ्याम्	जराभ्यः
षष्ठी	जरसः, जरायाः	जरसोः, जरयोः	जरसाम्, जराणाम्
सप्तमी	जरसि, जरायाम्	जरसोः, जरयोः	जरासु
सम्बोधन	जरे		

(४) निशा, नासिका, पृतना इन तीनों शब्दों के रूप लताशब्द की न्याईं तो होते हैं, पर द्वितीया के बहुवचन से लेकर सप्तमी के बहुवचन तक विकल्प करके निम्नलिखित रूप भी होते हैं यथा

विभक्ति	निशा	नासिका	पृतना
शस्	निशः	नसः	पृतः
टा	निशा	नसा	पृता
भ्याम्	निड्भ्याम्	नोभ्याम्	पृद्भ्याम्
भिस्	निड्भिः	नोभिः	पृद्भिः
ङे	निशे	नसे	पृते
भ्याम्	निड्भ्याम्	नोभ्याम्	पृद्भ्याम्
भ्यस्	निड्भ्यः	नोभ्यः	पृद्भ्यः
ङसि	निशः	नसः	पृतः
भ्याम्	निड्भ्याम्	नोभ्याम्	पृद्भ्याम्
भ्यस्	निड्भ्यः	नोभ्यः	पृद्भ्यः
ङस्	निशः	नसः	पृतः
ओस्	निशोः	नसोः	पृतोः
आम्	निशाम्	नसाम्	पृताम्
ङि	निशि	नसि	पृति
ओस्	निशोः	नसोः	पृतोः
सुप्	निट्सु, निट्त्सु	नःसु	पृत्सु

* शब्द के अन्त शकार छकार को और राज्, भ्राज्, यज्, सृज्, मृज्, भ्रस्ज् शब्दों के ज और च् को श होता है हल परे होने से और पदान्त में और परिव्राज् शब्द के ज को ष होता है पदान्त में और ष को ड् होता है पदान्त में और स, भ, परे होने से कोई के मत में निजभ्याम् निजभिः, निजभ्यः, निच्छु ये रूप भी होते हैं (

° उपरोक्त नियमों से ड होकर निम्नलिखित नियमानुसार ट् होता है।

ल॑ वर्ग के पहिले चार वर्णों को यथाक्रम वर्ग का पहिला वर्ण होता है विदारवर्ण परे होने से॥

॥ स, र को विसर्ग होता है हल परे होने से और पदान्त में (पीछे सन्धि के नियमानुसार ओ हो जाता है)

(५) स्त्रीलिङ्ग के आ प्रत्ययान्त शब्द हि लता शब्द की न्याईं होते हैं। जो आ प्रत्ययान्त नहिं, यथा गोपा प्रभृति शब्द, उन्के रूप पुंलिङ्ग के सोमपा की न्याईं होते हैं॥

इकारान्त मति शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मतिः	मती	मतयः
द्वितीया	मतिम्	मती	मतीः
तृतीया	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
चतुर्थी	मत्यै, मतये	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
पञ्चमी	मत्याः, मतेः	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
षष्ठी	मत्याः, मतेः	मत्योः	मतीनाम्
सप्तमी	मत्याम्, मतौ	मत्योः	मतिषु
सम्बोधन	मते		

सारे इकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द इसी प्रकार।

ईकारान्त नदी शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	नदी	नद्यौ	नद्यः
द्वितीया	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृतीया	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
चतुर्थी	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
पञ्चमी	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
षष्ठी	नद्याः	नद्योः	नदीनाम्
सप्तमी	नद्याम्	नद्योः	नदीषु
सम्बोधन	नदि		

स्त्री लिङ्ग के ई[1] प्रत्ययान्त प्रायः सारे शब्द नदी शब्द की न्याई हैं[2] तदतिरिक्त के रूप श्री शब्द की न्याई होते हैं। यथा,

(१) स्त्रीप्रत्ययप्रकरण में देखो
(२) स्त्री शब्द के रूप विशेष हैं यथा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः
द्वितीया	स्त्रियम्, स्त्रीम्	स्त्रियौ	स्त्रियः, स्त्रीः
तृतीया	स्त्रिया	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभिः
चतुर्थी	स्त्रियै	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
पञ्चमी	स्त्रियाः	स्त्रीभ्याम्	स्त्रीभ्यः
षष्ठी	स्त्रियाः	स्त्रियोः	स्त्रीणाम्
सप्तमी	स्त्रियाम्	स्त्रियोः	स्त्रीषु
सम्बोधन	स्त्रि		

समासान्त स्त्री शब्द पुल्लिङ्ग होने से उसके रूप ऐसे होते हैं

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अतिस्त्रिः	अतिस्त्रियौ	अतिस्त्रयः
द्वितीया	अतिस्त्रिम्, अतिस्त्रियम्	अतिस्त्रियौ	अतिस्त्रियः, अतिस्त्रीन्
तृतीया	अतिस्त्रिणा	अतिस्त्रिभ्याम्	अतिस्त्रिभिः
चतुर्थी	अतिस्त्रये	अतिस्त्रिभ्याम्	अतिस्त्रिभ्यः
पञ्चमी	अतिस्त्रेः	अतिस्त्रिभ्याम्	अतिस्त्रिभ्यः
षष्ठी	अतिस्त्रेः	अतिस्त्रियोः	अतिस्त्रीणाम्
सप्तमी	अतिस्त्रौ	अतिस्त्रियोः	अतिस्त्रिषु
सम्बोधन	अतिस्त्रे		

समासान्त स्त्री शब्द नपुंसक होने से उसके रूप ऐसे होते हैं

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अतिस्त्रि	अतिस्त्रिणी	अतिस्त्रीणि
द्वितीया	अतिस्त्रि	अतिस्त्रिणी	अतिस्त्रीणि
तृतीया	अतिस्त्रिणा	अतिस्त्रिभ्याम्	अतिस्त्रिभिः
चतुर्थी	अतिस्त्रये, अतिस्त्रिणे	अतिस्त्रिभ्याम्	अतिस्त्रिभ्यः
पञ्चमी	अतिस्त्रेः, अतिस्त्रिणः	अतिस्त्रिभ्याम्	अतिस्त्रिभ्यः
षष्ठी	अतिस्त्रेः, अतिस्त्रिणः	अतिस्त्रियोः, अतिस्त्रिणोः	अतिस्त्रीणाम्
सप्तमी	अतिस्त्रौ, अतिस्त्रिणि	अतिस्त्रियोः, अतिस्त्रिणोः	अतिस्त्रिषु
सम्बोधन	अतिस्त्रे, अतिस्त्रि		

समासान्त स्त्री शब्द स्त्रीलिङ्ग होने से उसके रूप ऐसे होते हैं

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अतिस्त्रिः	अतिस्त्रियौ	अतिस्त्रयः
द्वितीया	अतिस्त्रिम्	अतिस्त्रियौ	अतिस्त्रीः, अतिस्त्रियः
तृतीया	अतिस्त्रिया	अतिस्त्रिभ्याम्	अतिस्त्रिभिः
चतुर्थी	अतिस्त्रियै, अतिस्त्रये	अतिस्त्रिभ्याम्	अतिस्त्रिभ्यः
पञ्चमी	अतिस्त्रियाः, अतिस्त्रेः	अतिस्त्रिभ्याम्	अतिस्त्रिभ्यः
षष्ठी	अतिस्त्रियाः, अतिस्त्रेः	अतिस्त्रियोः	अतिस्त्रीणाम्
सप्तमी	अतिस्त्रियाम्, अतिस्त्रौ	अतिस्त्रियोः	अतिस्त्रिषु
सम्बोधन	अतिस्त्रि, अतिस्त्रे		

सतीशब्द के रूप नदीशब्द की न्याईं होते हैं।

श्रीशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	श्रीः	श्रियौ	श्रियः
द्वितीया	श्रियम्	श्रियौ	श्रियः
तृतीया	श्रिया	श्रीभ्याम्	श्रीभिः
चतुर्थी	श्रियै, श्रिये	श्रीभ्याम्	श्रीभ्यः
पञ्चमी	श्रियाः, श्रियः	श्रीभ्याम्	श्रीभ्यः
षष्ठी	श्रियाः, श्रियः	श्रियोः	श्रीणाम्, श्रियाम्
सप्तमी	श्रियाम्, श्रियि	श्रियोः	श्रीषु
सम्बोधन	श्रीः		

इसी प्रकार धी भी ह्री प्रभृति शब्द। लक्ष्मी तरी तन्त्री अवी प्रभृति शब्द स्त्री लिङ्ग के ई प्रत्ययान्त नहिं है इसलिये उन्की प्रथमा के एक बचन मे विसर्ग होता है यथा लक्ष्मीः, और सब विभक्तियों मे इन्के रूप नदी शब्द की न्याई होते हैं। वातप्रमी ग्रामणी सेनानी प्रभृति शब्दों के रूप पुंलिङ्ग की न्याई होते हैं।

उकारान्त-धेनुशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	धेनुः	धेनू	धेनवः
द्वितीया	धेनुम्	धेनू	धेनूः
तृतीया	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
चतुर्थी	धेन्वै, धेनवे	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
पञ्चमी	धेन्वाः, धेनोः	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
षष्ठी	धेन्वाः, धेनोः	धेन्वोः	धेनूनाम्
सप्तमी	धेन्वाम्, धेनौ	धेन्वोः	धेनुषु
सम्बोधन	धेनो		

सारे[२] उकारान्त स्त्री लिङ्ग शब्द इसी प्रकार हैं।

(१) प्रधी शब्द के रूप लक्ष्मी शब्द की न्याई होते हैं, पर कोइयों के मत मे पुंलिङ्ग की न्याई भी होते हैं। यदि "प्रकृष्टा धीरिति प्रधीः" इस प्रकार समास मे हो तो इसके रूप लक्ष्मी शब्द की न्याई हि होते हैं, केवल इतना विशेष है कि द्वितीया के एकवचन मे उस्का रूप "प्रध्यम्" और द्वितीया के बहुवचन मे "प्रध्यः" होता है। सुधी शब्द के "सुष्ठु धीर्यस्याः" अथवा "सुष्ठु ध्यायति" इस प्रकार समास होने से, श्री शब्द की न्याई रूप होते हैं, पर कोइयों के मत मे पुंलिङ्ग की न्याई रूप होते हैं। "सुष्ठु धी" इस प्रकार समास होने से तो उसके श्री शब्द की न्याई हि रूप होते हैं।

(२) क्रोष्टु शब्द स्त्री लिङ्ग मे क्रोष्ट्री हो जाता है और इस्के रूप इस प्रकार होते हैं।

	एकवचन	द्वि.	बहु.
प्रथमा	क्रोष्ट्री	क्रोष्ट्र्यौ	क्रोष्ट्र्यः

इत्यादि नदीवत्

गुरु लघु प्रभृति शब्द नित्य स्त्री लिङ्ग नहि हैं इसलिये स्त्री लिङ्ग मे होने से भी साधु शब्द की न्याई होते हैं।

ऊकारान्त-वधूशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वधूः	वध्वौ	वध्वः
द्वितीया	वधूम्	वध्वौ	वधूः
तृतीया	वध्वा	वधूभ्याम्	वधूभिः
चतुर्थी	वध्वै	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
पञ्चमी	वध्वाः	वधूभ्याम्	वधूभ्यः
षष्ठी	वध्वाः	वध्वोः	वधूनाम्
सप्तमी	वध्वाम्	वध्वोः	वधूषु
सम्बोधन	वधु		

भू, भ्रू, सुभ्रू प्रभृति भिन्न सारे[1] ऊकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के वधू शब्द की न्याई रूप होते हैं। (३९९का १पर्य्याय देखो)

भ्रूशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भ्रूः	भ्रुवौ	भ्रुवः
द्वितीया	भ्रुवम्	भ्रुवौ	भ्रुवः
तृतीया	भ्रुवा	भ्रूभ्याम्	भ्रूभिः
चतुर्थी	भ्रुवै, भ्रुवे	भ्रूभ्याम्	भ्रूभ्यः
पञ्चमी	भ्रुवाः, भ्रुवः	भ्रूभ्याम्	भ्रूभ्यः
षष्ठी	भ्रुवाः, भ्रुवः	भ्रुवोः	भ्रूणाम्, भ्रुवाम्
सप्तमी	भ्रुवाम्, भ्रुवि	भ्रुवोः	भ्रूषु
सम्बोधन	भ्रूः		

(१) पुनर्भू शब्द के रूप सत्त्रू शब्द की न्याई होते हैं केवल इतना विशेष है कि सम्बोधन के एकवचन में "पुनर्भु" और षष्ठी के बहुवचन मे पुनर्भूणाम् इस प्रकार रूप होते हैं। वर्षाभू शब्द पुनर्भू शब्द की न्याई है, पर इसका अर्थ यदि भेक हो तो कोइयों के मत मे धि का रूप "हे वर्षाभूः" इस प्रकार होता है। पुनर्नवा अर्थ मे तो "हे वर्षाभु" इस प्रकार रूप हि होता है। स्वयम्भू, प्रतिभू, खलपू प्रभृति शब्द के रूप पुंलिङ्ग की न्याई।

भू और सम्भू शब्दों के रूप भी ऐसे हि होते हैं; केवल सम्भू शब्द के सम्बोधन के एकवचन मे "सम्भु" इस प्रकार पद होता है।(१)

ऋकारान्त दुहितृशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	दुहिता	दुहितरौ	दुहितरः
द्वितीया	दुहितरम्	दुहितरौ	दुहितॄः
तृतीया	दुहित्रा	दुहितृभ्याम्	दुहितृभिः
चतुर्थी	दुहित्रे	दुहितृभ्याम्	दुहितृभ्यः
पञ्चमी	दुहितुः	दुहितृभ्याम्	दुहितृभ्यः
षष्ठी	दुहितुः	दुहित्रोः	दुहितॄणाम्
सप्तमी	दुहितरि	दुहित्रोः	दुहितृषु
सम्बोधन	दुहितः		

स्वसृ शब्द के सिवाय सारे ऋकारान्त(२) स्त्रीलिङ्ग शब्द इसी प्रकार होते हैं

स्वसृशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	स्वसा	स्वसारौ	स्वसारः
द्वितीया	स्वसारम्	स्वसारौ	स्वसॄः

इनके सिवाय और सब विभक्तियों मे दुहितृ शब्द के तुल्य।

ऐ ओ औकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्द के रूप पुंलिङ्ग की न्याई होते हैं। अतएव रैशब्द रैशब्द के तुल्य, गोशब्द गोशब्द के तुल्य, और नौशब्द ग्लौशब्द के तुल्य हैं।

---

(१) यथा "विमानना सुभ्रु कुतः पितुर्गृहे" इति कुमारः। परन्तु सिद्धान्तकौमुदी के मत मे यह पद अशुद्ध है हे सुभ्रूः होना चाहिये।

(२) अर्थात् मातृ, ननान्दृ और यातृशब्द

क्लीबलिङ्ग

अकारान्त फलशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	फलम्	फले	फलानि
द्वितीया	फलम्	फले	फलानि

और विभक्तियों मे पुंलिङ्ग अकारान्त शब्द की न्याई ॥

प्रायः[1] सारे अकारान्त क्लीब लिङ्ग शब्द इसी प्रकार।

आकारान्त श्रीपाशब्द

क्लीब लिङ्ग मे आकारान्त शब्द के रूप अकारान्त फल शब्द की न्याई होते हैं यथा श्रीपम् इत्यादि।

इकारान्त वारिशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वारि	वारिणी	वारीणि
द्वितीया	वारि	वारिणी	वारीणि
तृतीया	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
चतुर्थी	वारिणे	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
पञ्चमी	वारिणः	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
षष्ठी	वारिणः	वारिणोः	वारीणाम्
सप्तमी	वारिणि	वारिणोः	वारिषु
सम्बोधन	वारे, वारि		

(१) अजर शब्द के रूप पुंलिङ्ग के निर्ज्जर शब्द की न्याई होते हैं प्रथमा और द्वितीया मे विशेष है यथा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अजरम्	अजरसी, अजरे	अजरांसि, अजराणि
द्वितीया	अजरम्, अजरसम्	अजरसी, अजरे	अजरांसि, अजराणि

२९ ह० प० के अनुसार हृदय, उदक, आस्य, मांस, को शसादि स्वर परे होने से हृद्, उदन्, आसन्, मांस्, आदेश विकल्प करके होता है अतएव इनके दूसरे रूप इस प्रकार भी होते हैं यथा हृन्दि, हृदा, हृद्भ्याम् इत्यादि। आसानि, आस्ना, आसभ्यां इत्यादि। मांसि, मांसा, मांभ्यां इत्यादि।

दधि, अस्ति, अस्थि, सक्थि, भिन्न सारे इकारान्त क्लीव लिङ्ग विशेष्य शब्द के रूप इसी प्रकार हैं ॥

दधि-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	दधि	दधिनी	दधीनि
द्वितीया	दधि	दधिनी	दधीनि
तृतीया	(२) दध्ना	दधिभ्याम्	दधिभिः
चतुर्थी	दध्ने	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
पञ्चमी	दध्नः	दधिभ्याम्	दधिभ्यः
षष्ठी	दध्नः	दध्नोः	दध्नाम्
सप्तमी	दध्नि, दधनि	दध्नोः	दधिषु
सम्बोधन	दधे, दधि		

अस्ति, अस्थि और सक्थि शब्द भी इसी प्रकार हैं ।

ईकारान्त-सुधीशब्द

क्लीव लिङ्ग में ईकारान्त शब्द इकारान्त होजाते हैं । अतएव सुधी शब्द के रूप सुधि सुधिनी सुधीनि प्रभृति होते हैं (३)

उकारान्त-मधुशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मधु	मधुनी	मधूनि
द्वितीया	मधु	मधुनी	मधूनि
तृतीया	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
चतुर्थी	मधुने	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
पञ्चमी	मधुनः	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
षष्ठी	मधुनः	मधुनोः	मधूनाम्

(१) उक्त पुंस्क इ ई उ, ऊ ऋकारान्त क्लीव लिङ्ग शब्दों के, टादि स्वर परे होने से विकल्प करके पुंलिङ्ग की न्याई भी रूप होते हूँ, यथा (च) अनादये (वा) अनादिने, इत्यादि। जिस शब्द का अर्थ पुंलिङ्ग हो उसे उक्त पुंस्क कहहते हैं।

(२) दधि प्रभृति शब्दान्त समस्त पद के भी ऐसे हि रूप होते हैं। यथा अतिदध्ना

(३) विशेषण अर्थात् उक्त पुंस्क होने से टादि विभक्ति में सुधिया (वा) सुधिना इस प्रकार दो दो रूप बनेंगे । इसी प्रकार प्रधी शब्द के रूप प्रध्या (वा) प्रधिना प्रभृति बनेंगे

सप्तमी	मधुनि	मधुनोः	मधुषु
संबोधन	मधो; मधु		

सारे उकारान्त क्लीव लिङ्ग विशेष्य(१) शब्दों के ऐसे हि रूप होते हैं ।

ऋकारान्त-धातृशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	धातृ	धातृणी	धातॄणि
द्वितीया	धातृ	धातृणी	धातॄणि
तृतीया	धातृणा (वा) धात्रा(२)	धातृभ्याम्	धातृभिः
चतुर्थी	धातृणे, धात्रे	धातृभ्याम्	धातृभ्यः
पञ्चमी	धातृणः, धातुः	धातृभ्याम्	धातृभ्यः
षष्ठी	धातृणः, धातुः	धातृणोः, धात्रोः	धातॄणाम्
सप्तमी	धातृणि, धातरि	धातृणोः, धात्रोः	धातृषु
सम्बोधन	धातः, धातृ		

इसी प्रकार ज्ञातृ कर्त्रादि शब्दों के रूप होते हैं

क्लीव लिङ्ग ऐकारान्त शब्दों के रूप इकारान्त की न्याई, और ओकारान्त औकारान्त शब्दों के रूप उकारान्त की न्याई होते हैं। यथा अतिरै, प्रै, उपगो, प्रद्यो, अतिनौ शब्दों के प्रथमैकवचन अतिरि, प्रि, उपगु, प्रद्यु, अतिनु होते हैं इत्यादि ।

(१) स्वादु प्रभृति विशेषण शब्दों के टादि स्वर परे होने से दो दो रूप होंगे यथा (च) स्वादुने (वा) स्वादवे। पीलु एक वृक्ष का नाम है जिसके फल का नाम भी पीलु है, जहां फल अर्थ है वहां पीलुना इस प्रकार एक रूप हि बनेगा क्यों कि फल नित्य क्लीव है । शसादि परे होने सानु शब्द को स्नु आदेश भी हो जाता है यथा सानूनि (वा) स्नूनि सानुना, स्नुना, सानुभ्याम्, स्नुभ्याम् इत्यादि। प्रियक्रोष्टु शब्द के रूप इस प्रकार होते हैं यथा

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
(प्रथमा द्विती)	प्रियक्रोष्टु	प्रियक्रोष्टुनी	प्रियक्रोष्टूनि
तृतीया	प्रियक्रोष्टुना, प्रियक्रोष्ट्रा	प्रियक्रोष्टुभ्याम्	प्रियक्रोष्टुभिः
चतुर्थी	प्रियक्रोष्टुने, प्रियक्रोष्ट्रे, प्रियक्रोष्टवे	प्रियक्रोष्टुभ्याम्	प्रियक्रोष्टुभ्यः
(पंचमी षष्ठी)	प्रियक्रोष्टुनः, प्रियक्रोष्टुः, प्रियक्रोष्टोः इत्यादि		

स्वरादौ साधुवत् दातृवत् मधुवच्च त्रीणि त्रीणि रूपाणि एवं खल्वा, खलुना, यथा स्वल्पाद यः

(२) दूसरे रूप पुंलिंग की न्याई, उक्त पुंस्क होने से हुए हैं ॥

व्यञ्जनान्त शब्द

पुंलिङ्ग

ककारान्त-सर्व्वशाक शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्व्वशाक(वा)सर्वशाग्	सर्व्वशाकौ	सर्व्वशाकः
द्वितीया	सर्व्वशाकम्	सर्व्वशाकौ	सर्व्वशाकः
तृतीया	सर्व्वशाका	सर्व्वशाग्भ्याम्	सर्व्वशाग्भिः
चतुर्थी	सर्व्वशाके	सर्व्वशाग्भ्याम्	सर्व्वशाग्भ्यः
पञ्चमी	सर्व्वशाकः	सर्व्वशाग्भ्याम्	सर्व्वशाग्भ्यः
षष्ठी	सर्व्वशाकः	सर्व्वशाकोः	सर्व्वशाकाम्
सप्तमी	सर्व्वशाकि	सर्व्वशाकोः	सर्व्वशाक्षु (वा) सर्व्वशाक्षु
सम्बोधन	सर्व्वशाक(वा)सर्व्वशाग्		

सब ककारान्त इसी प्रकार

खकारान्त-चित्रलिख शब्द

खकारान्त शब्दों के रूप भी ककारान्त की न्याई होते हैं केवल स्वर विभक्तियों मे ख के स्थान मे क नहि होता यथा;

चित्रलिक(वा)चित्रलिग्, चित्रलिखौ इत्यादि

चकारान्त-जलमुच् शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	जलमुक् (वा) जलमुग्	जलमुचौ	जलमुचः
द्वितीया	जलमुचम्	जलमुचौ	जलमुचः
तृतीया	जलमुचा	जलमुग्भ्याम्	जलमुग्भिः

चतुर्थी	जलमुचे	जलमुग्भ्याम्	जलमुग्भ्यः
पञ्चमी	जलमुचः	जलमुग्भ्याम्	जलमुग्भ्यः
षष्ठी	जलमुचः	जलमुचोः	जलमुचाम्
सप्तमी	जलमुचि	जलमुचोः	जलमुक्षु
सम्बोधन	जलमुक् (वा) जलमुग्		

सारे चकारान्त पुंलिङ्ग शब्दोंके ऐसे हि रूप हैं। परन्तु कई एक समस्त शब्द जिन्का अन्तपद अच् (वा) अन्च् हैं उन्के, और सहस्य प्रभृति के रूप कुछ विशेष होते हैं। यथा

प्राच्-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	प्राङ्	प्राञ्चौ	प्राञ्चः
द्वितीया	प्राञ्चम्	प्राञ्चौ	प्राञ्चः

और विभक्तियोंमे जलमुच् की न्याई (१)

छकारान्त-सर्बप्राछ् शब्द

छकारान्त शब्द के छ को ट् (वा) ड् होना है सुविभक्ति मे, ड् होना है भ् परे होने से, और ट् होता है सुप मे; स्वरादि विभक्ति परे होने से छ को विकल्प करके श होना है। यथा सर्बप्राट् (प्र.१) (वा) सर्बप्राड्, सर्बप्राछौ (द्वि.२), (वा) सर्बप्राशौ, सर्बप्राड्भ्याम् (तृ.२), सर्बप्राट्सु (स.ब.)।

---

(१) प्रानच् शब्द प्राच् की न्याई, केवल इतना विशेष है, कि शसादि स्वर विभक्तियोंमे च् के पूर्व न् होता है और भस के पूर्व न्च के स्थान मे ङ् होता है (और सुप् विभक्ति को विकल्प करके क् भी होता है) यथा प्राञ्चः, प्राङ्भ्याम्, प्राङ्क्षु (वा) प्राङ्षु।
कुन्च्, उदन्च्, शब्दों के रूप प्रान्च् की न्याई होते हैं। प्रत्यच् शब्द " और " तक प्राच की न्याई और शसादि स्वर परे होने से प्रतीच् रूप धारण करता है यथा प्रत्यङ् (प्रं.), प्रत्यञ्चौ (द्वि.), प्रत्यञ्चः (ब.ब.)। प्रतीचः (द्वि.), प्रतीचा, प्रत्यग्भ्याम्, प्रतीचोः (ष.द्वि.), प्रतीचाम् (ष.ब.), प्रतीचि, प्रत्यक्षु (स.ब.), इसी प्रकार विष्वद्रङ् और देवद्रङ्।
* अच् के अकार का लोप होता है और पूर्व स्वर दीर्घ होता है शसादि स्वर (तद्धित स्वर यकार अथवा स्त्री-ईप् परे होने से) तिर्यच्, अमुमुयच्, अदमुयच्, उदच्, इनके स्थान मे यथाक्रम तिरश्च्, अमुमुईच्, अदमुईच्, उदीच् आदेश होता है शसादि स्वर (तद्धित स्वर यकार और स्त्री-ईप्) परे होने से। यथा तिर्यङ्, तिरश्चः, तिरश्चौ, तिर्यग्भ्याम्, तिर्यक्षु। अमुमुयङ्, अमुमुईचः, अमुमुयग्भ्याम्, अमुमुयक्षु। एवं अदमुईचः इत्यादि। उदीचः, उदग्भ्याम्, उदक्षु॥ अदद्रङ् अदद्रीचः। विष्वद्रङ्, विष्वद्रीचः। सम्यच् के रूप; सम्यङ्, समीचः इत्यादि। सध्रच् के रूप; सध्रङ्, सध्रीचः इत्यादि। सहस्य के रूप। सहट् (वा) सहड्, सहस्यौ, सहस्यः, सहड्भ्याम् सहट्स (वा) सहट्सु।

जकारान्त-ऋत्विज् शब्द[1]

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	ऋत्विक् (वा) ऋत्विग्	ऋत्विजौ	ऋत्विजः
द्वितीया	ऋत्विजम्	ऋत्विजौ	ऋत्विजः
तृतीया	ऋत्विजा	ऋत्विग्भ्याम्	ऋत्विग्भिः
चतुर्थी	ऋत्विजे	ऋत्विग्भ्याम्	ऋत्विग्भ्यः
पञ्चमी	ऋत्विजः	ऋत्विग्भ्याम्	ऋत्विग्भ्यः
षष्ठी	ऋत्विजः	ऋत्विजोः	ऋत्विजाम्
सप्तमी	ऋत्विजि	ऋत्विजोः	ऋत्विक्षु

राज[2]प्रभृति कई एक शब्द भिन्न सारे जकारान्त शब्दों के ऐसे हि रूप होते हैं। ऊर्ज्ज शब्द के पहिले जकार का लोप होजाता है सभादि विभक्ति मे, और सब प्रकार से इसके रूप ऋत्विज् की न्याई होते हैं यथा ऊर्क् (वा) ऊर्ग्, ऊर्ज्जम्, उर्ग्भ्याम्, ऊर्क्षु।

तिरस् पूर्वक अच् का तिर्य्यच् होता है। अदस् पूर्वक अच् के अमुमयच्, अदमुयच् और अदद्र्यच् येतीन शब्द होते हैं। उत् पूर्वक अच् का उदच् होता है) सम् पूर्वक अच् का सम्यच् होता है) सह पूर्वक अच् का सध्र्यच् होता है)

(१) ऋतु पूर्वक युज् का ऋत्विज् होता है

(२) राज, सम्राज्, देवराज्, विराज्, विश्वराज्, विभ्राज्, परिब्राज्, देवेज्, विश्वसृज्, परिमृज्, भ्रस्ज प्रभृति शब्दों के ज् को ट् (वा) ड् होता है सविभक्ति मे, ड् होता है भादि विभक्ति मे, और ट् होता है सुप मे; और सब विभक्तियों मे ऋत्विज् की न्याई रूप होते हैं (यथा) राट्, राड् राजौ राड्भिः राट्सु (वा) राट्त्सु (११८ १५)। एवं सम्राजादि। (विभ्राज् शब्द मे "टुभ्राज्" धातु का ग्रहण है, अन्यत्र भ्राजादीनों मे क् ग् हि होता है यथा विभ्राक्, विभ्राग्भ्याम्।) विश्वराज् के ज् को ट ड् होने से विश्व के अ को दीर्घ होता है यथा विश्वाराड्, विश्वराजौ, विश्वाराड्भ्याम्। अपदान्त स् को ज् परे होने से ज हो जाता है इसलिये भ्रस्ज के रूप भृट्, भृड्, भृज्जौ, भृड्भ्याम्, भृट्सु इस प्रकार होते हैं। युज् शब्द के रूप यथा, युङ्, युञ्जौ, युञ्जः। युञ्जम् युञ्जौ युजः इत्यादि जलमुचवत्। खन्ज् के रूप; यथा खन् खञ्जौ खञ्जौ खंभ्याम् खन्सु। अवयाज् शब्द के रूप यथा, अवयाः, अवयाजौ, अवयोभ्याम्, अवयःसु, हे अवयाः (वा) अवय (अवयाज् को अवयस् होता है स् भ् परे होने से) (समासान्त युज् शब्द के रूप युङ्, युञ्जौ प्रभृति नहि होते, जलमुच् की न्याई होते हैं यथा अश्वयुक्, अश्वयुजौ। युजिर समाधौ धातु के रूप भी युङ् प्रभृति नहि होते युक् प्रभृति होते हैं)

णकारान्त-सुगणशब्द

यथा

(१) प्र.१	द्वि.व.	ब.व.
सुगण्	सुगणौ	सुगणः

तृ.द्वि.व. सुगण्भ्याम्, स.ब. सुगणसु (वा) सुगण्टसु (वा) सुगण्ट्त्सु

इसी प्रकार सब णकारान्त

नकारान्त-भूम्नशब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	भूम्न्, (वा) भूम्नद्	भूम्नौ	भूम्नः
द्वितीया	भूम्नम्	भूम्नौ	भूम्नः
तृतीया	भूम्ना	भूम्भ्याम्	भूम्भिः
चतुर्थी	भूम्ने	भूम्भ्याम्	भूम्भ्यः
पञ्चमी	भूम्नः	भूम्भ्याम्	भूम्भ्यः
षष्ठी	भूम्नः	भूम्नोः	भूम्नाम्
सप्तमी	भूम्नि	भूम्नोः	भूम्नसु
सम्बोधन	भूम्न-द्		

अन्, मन्, मत्, वत्, तवत्, प्रत्ययान्त और महत् भिन्न सारे नकारान्त शब्दों के भूम्न की न्याई रूप होते हैं। और इन्के भी सु से औट् तक प्रथम पांच विभक्तियों मे रूप भेद हैं, अगली विभक्तियोंमे सब भूम्न् की न्याई होते हैं। यथा

अन्प्रत्ययान्त-पावन्शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पावन्	पावनौ	पावनः
द्वितीया	पावनम्	पावनौ	पावनः

आगे भूम्न् की न्याई

मन् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप भी अन् प्रत्ययान्त वालों की न्याई होते हैं

(१) सुगणौ, सुगणौ, सुगणः, सुगणसु, प्रभृति होते हैं।

अभ्यस्त[1] धातु और जक्षत्, दरिद्रत्, शासत्, चकासत्, दीध्यत्, वेव्यत् भिन्न सारे अत् और यत् प्रत्ययान्त शब्दों के धावत् शब्द की न्याई रूप होते हैं। अभ्यस्त प्रभृति के रूप भूभृत् की न्याई होते हैं॥

मत् वत् और तवत् प्रत्ययान्त शब्द सब अत् प्रत्ययान्त धावत् की न्याई होते हैं; केवल प्रथमा के एकवचन मे नकार के पहिले अकार को दीर्घ होजाता है, पर सम्बोधन मे नहि होता,[2] यथा श्रीमत् का श्रीमान्; ज्ञानवत् का ज्ञानवान्; प्रज्ञावत् का प्रज्ञावान्, श्रुतवत् का श्रुतवान्, कृतवत् का कृतवान् इत्यादि।

महत् शब्द के त् के पूर्व अ को पहिली पांचो विभक्तियों मे दीर्घ होता है यथा महान्(प्र.१), महान्तौ(२व.), महान्तः(ब.व.); महान्तम्(द्वि.१), महान्तौ(२व.), हे महन्; और सब विभक्तियों मे भूभृत् की न्याई॥

थकारान्त-अग्निमथ् शब्द

थकारान्त शब्द सारे तकारान्त भूभृत् की न्याई होते हैं, (स्वरादि विभक्तियों मे थ् का थ् हि रहता है) यथा अग्निमत् (वा) अग्निमद्, अग्निमथौ इत्यादि

दकारान्त-सुहृद् शब्द

दकारान्त शब्द सारे[3] तकारान्त भूभृत् की न्याई होते हैं (स्वरादि विभक्तियों मे दकार हि रहता है) यथा सुहृत्(वा) सुहृद्, सुहृदौ इत्यादि

धकारान्त-वीरुध् शब्द

धकारान्त शब्द सारे तकारान्त भूभृत् की न्याई होते हैं[4] (स्वरादि विभक्तियों मे ध का ध हि रहता है) यथा वीरुत्(वा) वीरुद्, वीरुधौ इत्यादि।

---

(१) अभ्यस्त धातु वे हैं जिन्के पूर्वभाग को द्वित्व होता है यथा ददत्, दधत्, बिभ्रत् इत्यादि

(२) भगवत्, अघवत्, भवत् इन तीन शब्दों के सम्बोधन के एकवचन मे विकल्प करके हे भगोः, अघोः, भोः ये रूप भी होते हैं।

(३) पादान्त शब्द के पाद को पद् होजाता है शसादि स्वर परे होने से यथा सुपात्(प्र.१) (वा) सुपाद्, सुपदः(द्वि.ब.), सुपाद्भ्याम् इत्यादि।

(४) बुध् शब्द के ब् को भ् होजाता है सभादि विभक्ति परे होने से यथा भुत्(वा) भुद्, बुधौ, भुद्भ्याम् भुत्सु।

नकारान्त

नकारान्त शब्द तीन प्रकारके हैं। इन् भागान्त, अन् भागान्त और हन् भागान्त

इन्भागान्त-गुणिन्शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	गुणी	गुणिनौ	गुणिनः
द्वितीया	गुणिनम्	गुणिनौ	गुणिनः
तृतीया	गुणिना	गुणिभ्याम्	गुणिभिः
चतुर्थी	गुणिने	गुणिभ्याम्	गुणिभ्यः
पञ्चमी	गुणिनः	गुणिभ्याम्	गुणिभ्यः
षष्ठी	गुणिनः	गुणिनोः	गुणिनाम्
सप्तमी	गुणिनि	गुणिनोः	गुणिषु
सम्बोधन	गुणिन्		

पथिन् मथिन् ऋभुक्षिन् भिन्न सारे इन् भागान्त शब्द गुणिन् शब्द की न्याई हैं।

पथिन्-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	पन्थाः	पन्थानौ	पन्थानः
द्वितीया	पन्थानम्	पन्थानौ	पथः
तृतीया	पथा	पथिभ्याम्	पथिभिः
चतुर्थी	पथे	पथिभ्याम्	पथिभ्यः
पञ्चमी	पथः	पथिभ्याम्	पथिभ्यः
षष्ठी	पथः	पथोः	पथाम्
सप्तमी	पथि	पथोः	पथिषु

मथिन् शब्द भी इसी प्रकार। ऋभुक्षिन् शब्द पथिन् शब्द की न्याई है, केवल प्रथम पांच विभक्तियों मे कुछ रूप भेद है; यथा ऋभुक्षाः, ऋभुक्षाणौ, ऋभुक्षाणः, ऋभुक्षाणम्, ऋभुक्षाणौ ।

अन्‌भागान्त-लघिमन्‌शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	लघिमा	लघिमानौ	लघिमानः
द्वितीया	लघिमानम्	लघिमानौ	लघिम्नः
तृतीया	लघिम्ना	लघिमभ्याम्	लघिमभिः
चतुर्थी	लघिम्ने	लघिमभ्याम्	लघिमभ्यः
पञ्चमी	लघिम्नः	लघिमभ्याम्	लघिमभ्यः
षष्ठी	लघिम्नः	लघिम्नोः	लघिम्नाम्
सप्तमी	लघिम्नि (वा) लघिमनि	लघिम्नोः	लघिमसु
सम्बोधन	लघिमन्		

आत्मन्, युवन्, मघवन्, श्वन्, अर्यमन्, अर्वन्, प्रभृति भिन्न सारे अन्-भागान्त शब्द लघिमन् शब्द की न्याईं होते हैं। [१]

आत्मन्-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः
द्वितीया	आत्मानम्	आत्मानौ	आत्मनः
तृतीया	आत्मना	आत्मभ्याम्	आत्मभिः
चतुर्थी	आत्मने	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः
पञ्चमी	आत्मनः	आत्मभ्याम्	आत्मभ्यः
षष्ठी	आत्मनः	आत्मनोः	आत्मनाम्
सप्तमी	आत्मनि	आत्मनोः	आत्मसु
सम्बोधन	आत्मन्		

(१) जिन अन्‌-न्त शब्दों का मकार संयुक्तम् अथवा व् के साथ मिला हुआ हो उन्के रूप आत्मन् शब्द की न्याईं होने हैं। यथा यज्वन् शब्द के रूप; यज्वा, यज्वानौ, यज्वानः; यज्वन; यज्वभ्याम् इत्यादि। जो ऐसे नहिं हैं उन्के रूप लघिमन् शब्द की न्याईं होते हैं यथा ब्रह्मणः, ब्रह्म भ्याम्। इत्यादि।

राजा, राजानौ, राजानः, राज्ञः, राजभ्याम् इत्यादि।
जिस धातु के अन्त मे र् (वा) नू हो और उसके पूर्व इ, उ, अथवा ऋ हो तो अन् का जहां अकार लोप होता है अर्थात् शसादि स्वर परे होने से [वहां] उस इ, उ, ऋ को दीर्घ होता है यथा परिदिवा, परिदीव्नः, परिदिवभ्याम्।
समस्त अहन् शब्द के रूप लघिमन् शब्द की न्याई होते हैं पर भादि विभक्ति परे होने से न् के स्थान मे उ होजाता है यथा दीर्घाहोभ्याम्।

युवन्-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	युवा	युवानौ	युवानः
द्वितीया	युवानम्	युवानौ	यूनः
तृतीया	यूना	युवभ्याम्	युवभिः
चतुर्थी	यूने	युवभ्याम्	युवभ्यः
पञ्चमी	यूनः	युवभ्याम्	युवभ्यः
षष्ठी	यूनः	यूनोः	यूनाम्
सप्तमी	यूनि	यूनोः	युवसु
सम्बोधन	युवन्		

मघवन्-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मघवा	मघवानौ	मघवानः
द्वितीया	मघवानम्	मघवानौ	मघोनः
तृतीया	मघोना	मघवभ्याम्	मघवभिः
चतुर्थी	मघोने	मघवभ्याम्	मघवभ्यः
पञ्चमी	मघोनः	मघवभ्याम्	मघवभ्यः
षष्ठी	मघोनः	मघोनोः	मघोनाम्
सप्तमी	मघोनि	मघोनोः	मघवत्सु
सम्बोधन	मघवन्		

श्वन्-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	श्वा	श्वानौ	श्वानः
द्वितीया	श्वानम्	श्वानौ	शुनः
तृतीया	शुना	श्वभ्याम्	श्वभिः
चतुर्थी	शुने	श्वभ्याम्	श्वभ्यः
पञ्चमी	शुनः	श्वभ्याम्	श्वभ्यः
षष्ठी	शुनः	शुनोः	शुनाम्
सप्तमी	शुनि	शुनोः	श्वसु
सम्बोधन	श्वन्		

अर्य्यमन् लघिमन् की न्याई है केवल औ, जस् अम् और विभक्तियों मे इसके म् का अकार दीर्घ नहिं होता यथा अर्य्यमा, अर्य्यमणौ, अर्य्यमणः, अर्य्यमणम्, अर्य्यमणौ, अर्य्यम्णः, इत्यादि (१)
अर्वन् शब्द की प्रथमा का एकवचन अर्वा है; और (२) सब विभक्तियों मे इस के रूप तकारान्त धावत् शब्द की न्याई होते हैं यथा अर्वन्तौ, अर्वन्तः, अर्वतः अर्वद्भ्याम् इत्यादि।

हन्भागान्त-वृत्रहन्शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वृत्रहा	वृत्रहणौ	वृत्रहणः
द्वितीया	वृत्रहणम्	वृत्रहणौ	वृत्रघ्नः
तृतीया	वृत्रघ्ना	वृत्रहभ्याम्	वृत्रहभिः
चतुर्थी	वृत्रघ्ने	वृत्रहभ्याम्	वृत्रहभ्यः
पञ्चमी	वृत्रघ्नः	वृत्रहभ्याम्	वृत्रहभ्यः
षष्ठी	वृत्रघ्नः	वृत्रघ्नोः	वृत्रघ्नाम्
सप्तमी	वृत्रघ्नि (वा) वृत्रहणि	वृत्रघ्नोः	वृत्रहसु
सम्बोधन	वृत्रहन्		

(२) परन्तु अर्वन् का यदि नञ् के साथ समास हो तो उसके रूप आत्मन् शब्द की न्याई होते हैं यथा अनर्वा अनर्वाणौ, अनर्वाणः, अनर्वणः, अनर्वभ्याम् इत्यादि

(१) पूषन् शब्द अर्य्यमन् की न्याई है पर [illegible] का विकल्प करके पूष भी हो जाता है यथा पूष्णः (वा) पूषः।

सारे हन् भागान्त शब्दों के ऐसे हि रूप होते हैं। हन् के स्थान में घ्न होने से न को ण नहि होता।

पकारान्त-गुप्शब्द

यथा। गुप् (प्र.१) (वा) गुब्, गुपौ (२व.), गुब्भ्याम् (२व.), गुप्सु (स.व.)

मकारान्त-प्रशाम्शब्द

स भ् के पूर्व म् को न् होजाता है। यथा प्रशान् (प्र.१), प्रशामौ (२व.), प्रशान्भ्याम् (त.२), प्रशान्सु (स.व.) (वा) प्रशान्त्सु।

लकारान्त-कमल्शब्द

यथा कमल् (प्र.२), कमलौ (२व.), कमल्षु (स.व.)

वकारान्त-सुदिव्शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सुद्यौः	सुदिवौ	सुदिवः
द्वितीया	सुदिवम्	सुदिवौ	सुदिवः
तृतीया	सुदिवा	सुद्युभ्याम्	सुद्युभिः
चतुर्थी	सुदिवे	सुद्युभ्याम्	सुद्युभ्यः
पञ्चमी	सुदिवः	सुद्युभ्याम्	सुद्युभ्यः
षष्ठी	सुदिवः	सुदिवोः	सुदिवाम्
सप्तमी	सुदिवि	सुदिवोः	सुद्युषु

शकारान्त-विश्शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विट् (वा) विड्	विशौ	विशः
द्वितीया	विशम्	विशौ	विशः

तृतीया	विशा	विड्भ्याम्	विड्भिः
चतुर्थी	विशे	विड्भ्याम्	विड्भ्यः
पञ्चमी	विशः	विड्भ्याम्	विड्भ्यः
षष्ठी	विशः	विशोः	विशाम्
सप्तमी	विशि	विशोः	विट्सु

दृश, स्पृश, प्रभृति[1] भिन्न सारे शकारान्त शब्द विश शब्द की न्याईं होते हैं

दृश्, स्पृश्, शब्दों के श को क् और ग् यथा क्रम होता है जहां विश् के श् को ट् और ड् होता है यथा दृक् (वा) दृग्, दृशौ, दृग्भ्याम्, दृक्षु

षकारान्त-द्विष् शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	द्विट् (वा) द्विड्	द्विषौ	द्विषः
द्वितीया	द्विषम्	द्विषौ	द्विषः
तृतीया	द्विषा	द्विड्भ्याम्	द्विड्भिः
चतुर्थी	द्विषे	द्विड्भ्याम्	द्विड्भ्यः
पञ्चमी	द्विषः	द्विड्भ्याम्	द्विड्भ्यः
षष्ठी	द्विषः	द्विषोः	द्विषाम्
सप्तमी	द्विषि	द्विषोः	द्विट्सु (वा) द्विट्त्सु

दोष प्रभृति शब्दों के सिवा सारे षकारान्त शब्द द्विष् शब्द की न्याईं होते हैं।

(१) क्विन् प्रत्ययान्त शब्द दृश की न्याईं और तद्भिन्न विश की न्याईं होते हैं। दृश, स्पृश, शब्द समासान्त होने से भी उनके वैसे हि रूप होते हैं यथा ईदृक्, तादृक्, कीदृक्, एतादृक्, भवादृक्; बहुस्पृक्, मर्म्मस्पृक्, घृतस्पृक्, इत्यादि।
पुरोडाश शब्द के रूप सभादि विभक्ति परे होने से पुरोड्स की न्याईं होते हैं; यथा पुरोडाः, पुरोडाशौ, पुरोडोभ्याम्, पुरोडःसु।
नश शब्द के रूप विश की न्याईं भी और दृश की न्याईं भी दोनो प्रकार के होते हैं।

दोष-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	दोः	दोषौ	दोषः
द्वितीया	दोषम्	दोषौ	दोषः (वा) दोष्णः
तृतीया	दोषा (वा) दोष्णा	दोर्भ्याम्	दोर्भिः
चतुर्थी	दोषे (वा) दोष्णे	दोर्भ्याम्	दोर्भ्यः
पञ्चमी	दोषः (वा) दोष्णः	दोर्भ्याम्	दोर्भ्यः
षष्ठी	दोषः (वा) दोष्णः	दोषोः (वा) दोष्णोः	दोषाम् (वा) दोष्णाम्
सप्तमी	दोषि (वा) दोष्णि	दोषोः (वा) दोष्णोः	दोःषु (वा) दोष्षु

सजुष् प्रभृति शब्द, जिन्के अन्त्य स को इकारादि स्वर निमित्तक षू हुआ है (पृ. २१), इन्के ष् को विसर्ग होजाता है सु सुप् विभक्ति मे, और र् होजाता है भ्यादि विभक्ति मे और पूर्व स्वर दीर्घ होजा है यथा सजूः सजुषौ सजूर्भ्याम् सजूःषु (वा) सजूष्षु (१)

दधृष्[2] प्रभृति शब्द के ष् को दृश् शब्दवत् क् ग् होता है सभादि विभक्ति परे होने से यथा दधृक् (वा) दधृग्, दधृषौ, दधृग्भ्याम्, दधृक्षु।

तान्त शब्दों के क् अथवा ष्[3] का लोप होता है सभादि विभक्ति परे होने से और उन विभक्तियों मे उन्के रूप षान्त अथवा कान्त शब्दों की न्याई होते हैं। यथा; तक्ष शब्द का, तट् (वा) तड्, तक् (वा) तग्, तक्षौ, तड्भ्याम् (वा) तग्भ्याम्, तट्सु (वा) तक्षु। इसी प्रकार गोरक्ष शब्द।

सकारान्त-वेधस्‌शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	वेधाः	वेधसौ	वेधसः
द्वितीया	वेधसम्	वेधसौ	वेधसः
तृतीया	वेधसा	वेधोभ्याम्	वेधोभिः

(१) सन्प्रत्ययके षू वाले शब्दों के भी ऐसे हि रूप होते हैं यथा पिपठीः पिपठिषौ पिपठीर्भ्याम् इत्यादि
(२) अर्थात् क्विन्प्रत्ययान्त शब्द।
(३) जो क् के साथ सन् प्रत्यय के ष् का योग हो तो ष का हि लोप होता हैं; यथा पिपक्षशब्दका, पिपक् (वा) पिपग्।

चतुर्थी	वेधसे	वेधोभ्याम्	वेधोभ्यः
पञ्चमी	वेधसः	वेधोभ्याम्	वेधोभ्यः
षष्ठी	वेधसः	वेधसोः	वेधसाम्
सप्तमी	वेधसि	वेधसोः	वेधःसु, वेधस्सु
सम्बोधन	वेधः		

(१) प्राय सारे शब्द जिनके अन्तमे अस है, उन्के रूप वेधस शब्द की न्याई होते हैं॥ जिनके अन्तमे इस, उस है उन्के रूप भी कुछ ऐसे हि होते हैं, कुछ नहि; यथा; सुपिस शब्द के — सुपीः, सुपिसो, सुपीर्भ्याम्, सुपीःषु (वा) सुपीष्षु। एवं सुतुस शब्द

विद्वस-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
द्वितीया	विद्वांसम्	विद्वांसौ	विदुषः
तृतीया	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
चतुर्थी	विदुषे	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
पञ्चमी	विदुषः	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
षष्ठी	विदुषः	विदुषोः	विदुषाम्
सप्तमी	विदुषि	विदुषोः	विद्वत्सु
सम्बोधन	विद्वन्		

(२) सारे वस् प्रत्ययान्त शब्द विद्वस शब्द की न्याई होते हैं।

(१) अस् यदि धातु का अवयव हो तो सु विभक्ति मे विसर्ग के पूर्व ह्रस्व अकार हि रहता है यथा सुवस् शब्द का - सुवः। अनेहस्, उशनस्, पुरुदंशस् इन तीन शब्दों के सु विभक्ति मे, अनेहा, उशना, पुरुदंशा, ये रूप होते हैं, और उशनस् के "धि" मे उशनः, उशन, उशनन् ये तीन रूप होते हैं। उक्थशास शब्द के रूप कुछ वेधस शब्द की न्याई होते हैं कुछ नहि यथा, उक्थशाः, उक्थशासौ, उक्थशोभ्याम्, उक्थशाःसु, हे उक्थशाः (वा) उक्थशः।

(२) वस के पूर्व यदि इ हो तो उस इ को लोप होता है जहां व का उ हो जाता है यथा सेदिवान्, सेदुषः, सेदिवद्भ्याम् इत्यादि। वस के पूर्व यदि तन्निमित्तक न् हो तो उस न् का म् होता है जहां व का उ हो जाता है यथा जगन्वान्, जग्मुषः, जगन्वद्भ्याम् इत्यादि

लघीयस्-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	लघीयान्	लघीयांसौ	लघीयांसः
द्वितीया	लघीयांसम्	लघीयांसौ	लघीयसः
तृतीया	लघीयसा	लघीयोभ्याम्	लघीयोभिः
चतुर्थी	लघीयसे	लघीयोभ्याम्	लघीयोभ्यः
पञ्चमी	लघीयसः	लघीयोभ्याम्	लघीयोभ्यः
षष्ठी	लघीयसः	लघीयसोः	लघीयसाम्
सप्तमी	लघीयसि	लघीयसोः	लघीयःसु, लघीयस्सु
सम्बोधन	लघीयन्		

सारे ईयस् प्रत्ययान्त शब्द इसी प्रकार हैं

शब्द के अन्त्य स के पूर्व यदि व्यञ्जन वर्ण हो तो स का लोप होता है स-भ्यादि विभक्ति में यथा हिन्स शब्द के-हिन् हिंसौ हिन्भ्याम् हिन्सु (१)

हकारान्त-मधुलिह्-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	मधुलिट् (वा) मधुलिड्	मधुलिहौ	मधुलिहः
द्वितीया	मधुलिहम्	मधुलिहौ	मधुलिहः
तृतीया	मधुलिहा	मधुलिड्भ्याम्	मधुलिड्भिः
चतुर्थी	मधुलिहे	मधुलिड्भ्याम्	मधुलिड्भ्यः
पञ्चमी	मधुलिहः	मधुलिड्भ्याम्	मधुलिड्भ्यः
षष्ठी	मधुलिहः	मधुलिहोः	मधुलिहाम्
सप्तमी	मधुलिहि	मधुलिहोः	मधुलिट्सु (वा) मधुलिट्त्सु

दुहादि ध्येनवाह् और अनडुह् शब्दों के सिवा सारे हकारान्त शब्दों के इसी प्रकार रूप होते हैं।

---

(१) पुंस शब्द के रूप और विभक्ति तक विलक्षण हैं यथा, पुमान्, पुमांसौ, पुमांसः। पुमांसम्, पुमांसौ, पुंसः, पुंसा, पुंभ्याम्, पुंसु (वा) पुंत्सु, हे पुमन्। क्विन् प्रत्ययान्त स्रंस ध्वंस शब्दों के अनुस्वार का लोप हो जाता है और सभादि विभक्तियों में तकारान्त शब्द की न्याईं इनके रूप होते हैं यथा, ध्वत् (वा) ध्वद् ध्वसौ, ध्वसः, ध्वद्भ्याम् इत्यादि।

(२) दकारादि हान्त शब्द के ह को क ग होता है स भ्यादि में, क होता है सुप् में और ग होता है भ्यादि विभक्तियों में

और सभादि मे ड् का ध् भी होजाता है यथा दुह का धुक्(वा) धुग्, दुहौ, धुग्भ्याम्, धुक्षु। मुह, स्नुह, स्निह, मधुलिह शब्द की न्याई और विकल्प करके दुहादि की न्याई भी होते हैं यथा मुक्(वा) मुग्, मुग्भ्याम्, मुक्षु इत्यादि
द्रुह, दह, के रूप मुह के दोनो रूप की न्याई होते हैं, पर द् को ध् दुह की न्याई होजाता है यथा ध्रुक्, ध्रुग्, ध्रुट्, ध्रुड्। जिस शब्द के उत्तरपद मे वाह् हो उसके वा को ऊ होजाता है शसादि स्वर विभक्तियों मे (और स्त्री के ई मे) और वह ऊ पूर्वपद के अन्त्य अकार के साथ मिल कर औ होता है, जो पूर्व पद का अन्त्य वर्ण अन हो तो उसकी ऊ के साथ यथा नियम सन्धि होती है यथा विश्ववाट्(वा) विश्ववाड्, विश्ववाहौ, विश्ववाहः, विश्वौहः, विश्ववाड्भ्याम् इत्यादि। भूवाट्, भूहः इत्यादि। एवं वारिवाट्, शालिवाट् इत्यादि। श्वेतवाह् और अनडुह् के रूप कुछ विलक्षण हैं यथा

※ जिन धातुओं मे एक स्वर होके और अन्त मे उसके घ्, ढ्, ध्, (वा) भ् होवे तो सभादि विभक्तियों मे उसके आदि ग्, ड्, द्, ब को यथा क्रम घ्, ढ्, ध्, भ् हो जाते हैं

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	श्वेतवाः	श्वेतवाहौ	श्वेतवाहः
द्वितीया	श्वेतवाहम्	श्वेतवाहौ	श्वेतवाहः, श्वेतौहः
तृतीया	श्वेतवाहा, श्वेतौहा	श्वेतवोभ्याम्	श्वेतवोभिः
चतुर्थी	श्वेतवाहे, श्वेतौहे	श्वेतवोभ्याम्	श्वेतवोभ्यः
पञ्चमी	श्वेतवाहः, श्वेतौहः	श्वेतवोभ्याम्	श्वेतवोभ्यः
षष्ठी	श्वेतवाहः, श्वेतौहः	श्वेतवाहोः, श्वेतौहः	श्वेतवाहाम्, श्वेतौहाम्
सप्तमी	श्वेतवाहि, श्वेतौहि	श्वेतवाहोः, श्वेतौहः	श्वेतवःसु, श्वेतवस्सु
सं	श्वेतवाः, (वा) श्वेतवः		

अनडुह्-शब्द

प्रथमा	अनड्वान्	अनड्वाहौ	अनड्वाहः
द्वितीया	अनड्वाहम्	अनड्वाहौ	अनडुहः
तृतीया	अनडुहा	अनडुद्भ्याम्	अनडुद्भिः
चतुर्थी	अनडुहे	अनडुद्भ्याम्	अनडुद्भ्यः
पञ्चमी	अनडुहः	अनडुद्भ्याम्	अनडुद्भ्यः
षष्ठी	अनडुहः	अनडुहोः	अनडुहाम्
सप्तमी	अनडुहि	अनडुहोः	अनडुत्सु
सं	अनड्वन्		

स्त्रीलिङ्ग

हलन्त स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूप पुंलिङ्ग की न्याई होते हैं, इसलिये प्रत्येक प्रकार के स्त्रीलिङ्ग शब्दों के रूपों का फेर दिखाना अनावश्यक है। कोई २ शब्द अथवा जिनमे कुछ विशेष है, उन्ही के रूप आगे दिखाये जाते हैं

चकारान्त-वाच् शब्द

वाक (वा) वाग्, वाचौ, वाग्भ्याम्, वाक्षु (जलमुच् शब्दवत्)

जकारान्त-स्रज् शब्द

यथा स्रक (वा) स्रग्, स्रजौ, स्रग्भ्याम्, स्रक्षु, इत्यादि ऋत्विज्‌वत्

पकारान्त-अप् शब्द

इसका केवल बहुवचन है

प्रथमा	आपः
द्वितीया	अपः
तृतीया	अद्भिः
चतुर्थी	अद्भ्यः
पञ्चमी	अद्भ्यः
षष्ठी	अपाम्
सप्तमी	अप्सु

भकारान्त-ककुभ् शब्द

यथा ककुप् (वा) ककुब्, ककुभौ, ककुब्भ्याम्, ककुप्सु इत्यादि गुप् शब्दवत्।

रकारान्त-गिर् शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	गीः	गिरौ	गिरः

द्वितीया	गिरम्	गिरौ	गिरः
तृतीया	गिरा	गीर्भ्याम्	गीर्भिः
चतुर्थी	गिरे	गीर्भ्याम्	गीर्भ्यः
पञ्चमी	गिरः	गीर्भ्याम्	गीर्भ्यः
षष्ठी	गिरः	गिरोः	गिराम्
सप्तमी	गिरि	गिरोः	गीर्षु

एवं पुर, पुर् शब्द यथा पूः पुरौ पूर्भ्याम् पूर्षु इत्यादि

वकारान्त—दिव् शब्द

यथा द्यौः, दिवौ, द्युभ्याम्, द्युषु, इत्यादि सुदिववत्

शकारान्त—दिश् शब्द

यथा दिक् (वा) दिग्, दिशौ, दिग्भ्याम्, दिक्षु, इत्यादि दृशवत्

षकारान्त—त्विष् शब्द

यथा त्विट् (वा) त्विड्, त्विषौ, त्विड्भ्याम्, त्विट्सु (वा) त्विटत्सु इत्यादि द्विषवत्

सकारान्त—आशिस् शब्द

यथा आशीः, आशिषौ, आशीर्भ्याम्, आशीःषु (वा) आशीष्षु (सजुषवत्)

हकारान्त—उष्णिह् शब्द

यथा उष्णिक् (वा) उष्णिग्, उष्णिहौ, उष्णिग्भ्याम्, उष्णिक्षु, इत्यादि।

उपानह् शब्द के रूप सभादि विभक्तियों मे धकारान्त की न्याई होते हैं। यथा उपानत् (वा) उपानद्, उपानहौ, उपानद्भ्याम्, उपानत्सु,

क्लीबलिङ्ग

क्लीब लिङ्ग मे प्रथमा और द्वितीया के रूप एक से होते हैं; इसलिये केवल एक के रूप आगे दिखलाए जाते हैं। तृतीयादि विभक्तियों के रूप पुंलिङ्ग की न्याई होते हैं, इसलिये उन्का दिखलाना अनावश्यक समझा गया; पर जहां इन विभक्तियों मे रूप विशेष हैं वे पर्याय मे दिखलाए जायंगे।

क्लीब लिङ्ग मे "औ" विभक्ति को ई और जस् शस् को इ होजाता है, और इ होने से अन्त्य हल के पूर्व प्रायशः न् आजाता है, और उस के पूर्व स्वर को कहीं दीर्घ होजाता है जैसा कि आगे दिखलाया जाता है।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
ककारान्त सर्वशक् शब्द	सर्वशक्, सर्वशग्	सर्वशकी	सर्वशङ्कि
खकारान्त चित्रलिख्	चित्रलिक्, चित्रलिग्	चित्रलिखी	चित्रलिङ्खि
गकारान्त सवल्ग्[1] शब्द	सवल्क्	सवल्गी	सवन्ल्गि
चकारान्त वाच् शब्द	वाक्, वाग्	वाची	वाञ्चि
प्राच्[2] शब्द	प्राक्, प्राग्	प्राची	प्राञ्चि
प्रत्यच्[2] शब्द	प्रत्यक्, प्रत्यग्	प्रतीची	प्रत्यञ्चि
तिर्यच्[2] शब्द	तिर्यक्, तिर्यग्	तिरश्ची	तिर्यञ्चि
उदच्[2] शब्द	उदक्, उदग्	उदीची	उदञ्चि
गवाच्[3] शब्द (गवौ)	गवाक्, गवाग्	गोची	
	गोअक्, गोअग्		
	गोक्, गोग्		
	गवाङ्	गवाञ्ची	गवाञ्चि
	गोअङ्	गोअञ्ची	गोअञ्चि
	गोङ्	गोञ्ची	गोञ्चि

(१) टादिस्वर मे सवल्गा इत्यादि। भादि मे सवल्भ्याम् इत्यादि। सुपि—सवल्क्षु

(२) पूजार्थ होने से १वचन के अन्त्य क को ङ् होता है और २वचन के रूप बहुवचन की न्याई पर अन्त्य इ दीर्घ होती है।

(३) टादि स्वर परे होने से गवाच् शब्द के चार चार रूप होते हैं यथा गोचा, गवाञ्चा गोअञ्चा गोञ्चा। भादि मे छ रूप यथा; गवाग्भ्याम्, गोअग्भ्याम्, गोग्भ्याम्, गवाङ्भ्याम्, गोअङ्भ्याम्, गोङ्भ्याम्, सुप् मे नव रूप यथा; गवाङ्क्षु, गोअङ्क्षु, गोङ्क्षु, गवाङ्षु, गोअङ्षु, गोङ्षु, गवाक्षु, गोअक्षु, गोक्षु। सब समेत ९० रूप; फेर कोई २ वर्णों का द्वित्व होकर ५२० रूप होते हैं, पर व्यवहार मे इतने कभी नहिं आते

जकारान्त असृज्श॰	असृक्	असृजी	असृञ्जि
ऊर्ज्[२] शब्द	ऊर्क, ऊर्ग	ऊर्जी	[३] उन्र्जि, ऊर्ञ्जि
तकारान्त-हरित्श॰	हरित्, हरिद्	हरिती	हरिन्ति
[४] यकृत्-शब्द	यकृत्	यकृती	यकृन्ति
[५] शकृत्-शब्द	शकृत्	शकृती	शकृन्ति
गतवत्-शब्द	गतवत्	गतवती	गतवन्ति
[६] भवत्-शब्द	भवत्	भवन्ती	भवन्ति
[७] ददत्-शब्द	ददत्	ददती	ददन्ति, ददति
[८] भविष्यत्-शब्द	भविष्यत्	भविष्यती	भविष्यन्ति
महत्-शब्द	महत्	महती	[९] महान्ति
थकारा॰ अग्निमथ्श॰	अग्निमत्, द्	अग्निमथी	अग्निमन्थि
दकारान्त हृद्-शब्द	हृद्	हृदी	हृन्दि
नकारान्त(अन्नन्त)[११] नामन्-शब्द	नाम[१०]	नाम्नी, नामनी	नामानि
मनन्त कर्मन्-शब्द	कर्म	कर्मणी	कर्माणि
वनन्त पर्वन्-श॰	पर्व	पर्वणी	पर्वाणि
हनन्त बहुब्रह्मन्	बहुब्रह्म	बहुब्रह्मणी	बहुब्रह्माणि
इनन्त स्थायिन्	स्थायि	स्थायिनी	स्थायीनि

(१) शसादि विभक्तियों मे असृज् शब्द का असन् भी विकल्प करके होता है यथा असानि, अस्ना, असभ्याम् असनि, असस्सु

(२) सभादि विभक्तियों मे एक ज् का लोप होता है यथा ऊर्ग्भ्याम्, ऊर्क्षु

(३) बहु के साथ समास होने से "बहूर्ञ्जि" इस प्रकार रूप होगा

(४) शसादि विभक्तियों मे यकृत् का यकन् भी विकल्प करके होता है यथा यकानि यक्ना यकभ्याम् यकसु

(५) तथा ———— शकृत् का शकन् भी ———— तथा

(६) अन्त्य त् के पूर्व यदि अ (वा) आ हो तो भ्वादि दिवादि और चुरादि गणीय धातुओं के शब्दों मे अ और त् के बीच न् आता है क्लीवलिङ्ग की ई विभक्ति अथवा स्त्री लिङ्ग का ई प्रत्यय परे होने से; तुदादि गणीय धातु मे और अदादि मे आ के पीछे विकल्प करके, और अन्य गणीय धातुओं मे कहीं आता है कहीं नहिं यथा (भ्वादि) भवन्ती (दिवादि) दीव्यन्ति (चुरादि) चोरयन्ती (तुदादि) तुदती (वा) तुदन्ती (अदादि) अदती, भाती (वा) भान्ती (स्वादि) सुन्वती, (रुधादि) रुन्धती, (तनादि) तन्वती (क्र्यादि) क्रीणति (वा) क्रीणन्ती

(७) परन्तु अभ्यस्त धातु के शब्दों मे ई परे होने से न् नहिं आता और जस् शस् की ई परे होने से विकल्प कर के आता है

(८) उक्त शतृप्रत्ययान्त शब्दों के सिवा और सारे अत् प्रत्ययान्त शब्दों के रूप भविष्यत् शब्द की न्याई होते हैं

(९) महत् शब्द का ह युक्त अकार दीर्घ हो जाता है इ परे होने से

(१०) सम्बोधन के एक वचन मे नकारान्त शब्द के न का लोप विकल्प करके होता है यथा हे ब्रह्मन्, हे ब्रह्म

(११) अहन् शब्द के रूप विशेष हैं यथा (प्र॰ द्वि॰) अहः, अह्नी (वा) अहनी, अहानि (तृतीयादि स्वर मे) अह्ना इत्यादि (भादि मे) अहोभ्याम् इत्यादि (सुपि) अहःसु (वा) अहस्सु (ङि से) अह्नि (वा) अहनि। संख्यावाचक शब्द, वि (वा) सायं के साथ अहन् का समास होने से अकारान्त पुंलिङ्ग की न्याई रूप होते हैं यथा सायाह्नः, सायाह्नौ, सायाह्नाः इत्यादि; पर ङि के तीन रूप होते हैं यथा सायाह्ने, सायाह्नि, वा सायाहनि। अन्य शब्दों के साथ समास होने से इसके अनन्त पुंलिङ्ग की न्याई रूप होते हैं यथा दी[illegible], दीर्घाहःसु, दीर्घाहस्सु।

पकारान्त-स्वप्[1] शब्द	स्वप्	स्वपी	स्वाम्पि, स्वम्पि
रकारान्त-वार्[2] शब्द	वाः	वारी	वारि
वकारान्त सुदिव् श॰	सुद्यु	सुदिवी	सुदिवि
शकारान्त विश शब्द	विट्(वा) विड्	विशी	विंशि
षकारान्त दोष् शब्द	दोः	दोषी	दोंषि
पिपठिष्-शब्द	पिपठीः	पिपठिषी	पिपठिंषि
सकारान्त-असन्त पयस्-शब्द	पयः	पयसी	पयांसि
वसन्त-विद्वस् श॰	विद्वत्	विदुषी	विद्वांसि
इवसन्त-सेदिवस् श॰	सेदिवत्	सेदुषी	सेदिवांसि
ईयसन्त-गरीयस् श॰	गरीयः	गरीयसी	गरीयांसि
इसन्त हविस्[3] श॰	हविः	हविषी	हवींषि
उसन्त धनुस्[4] श॰	धनुः	धनुषी	धनूंषि
सुपुंस शब्द[5]	सुपुम्	सुपुंसी	सुपुमांसि
हकारान्त-लिह्-शब्द	लिट्, लिड्	लिही	लिंहि
स्वनडुह्-शब्द	स्वनडुत्-द्	स्वनड्डही	स्वनड्वांहि

(१) तृतीयादि मे स्वपा, स्वब्भ्याम् इत्यादि
(२) तृतीयादि मे वारा, वार्भ्याम् इत्यादि
(३) तृतीयादि मे हविषा, हविर्भ्याम् इत्यादि
(४) तृतीयादि मे धनुषा, धनुर्भ्याम् इत्यादि
(५) तृतीयादि मे पुंस शब्दवत्

सर्वनाम

रूपों के वैलक्षण्य अनुसार सर्वनाम शब्द सारे पांच गणों मे वि-भक्त हैं। यथा; सर्वादि, अन्यादि, पूर्वादि यदादि और इदमादि गण।

सर्वादि[1]। सर्व, विश्व, उभ, उभय, भवत्, त्वत्[2] त्व, एक, एकतर, सम, सिम, नेम।

अन्यादि। अन्य, अन्यतर, इतर, कतर, कतम्, एकतम, यतर, यतम।

पूर्वादि। पूर्व, पर, अवर, अपर, दक्षिण, उत्तर, अधर, अन्तर, स्व।

यदादि। यद्, तद्, त्यद्, एतद्, किम्, द्वि।

इदमादि। इदम्, अदस्, युष्मद्, अस्मद्।

सर्वादि अन्यादि और पूर्वादि अकारान्त सर्वनाम शब्दों के रूप सामान्य अकारान्त शब्द की न्याई होते हैं; केवल प्रथमा और षष्ठी के बहुवचन मे और चतुर्थी पञ्चमी और सप्तमी के एकवचन मे रूपों का वैलक्षण्य है।

---

(१) सर्वादि शब्द अपने अपने मुख्य अर्थोंमे हि सर्वनाम होते हैं, गौण अर्थ अथवा संज्ञामे इन्के रूप पूर्वोक्त नियमानुसार साधारण होते हैं। द्वन्द्व समास, तृतीया तत्पुरुष समास, अथवा तृतीया समास के अर्थमे भी ये सर्वनाम नहि होते गौण अर्थ यथा अति सर्वाय जितं सर्वं येन तस्मै जितसर्वाय इत्यादि संज्ञा यथा, सर्वाय शिवाय; द्वन्द्व समासे यथा वर्णाश्रमेतराणाम्; तृतीया तत्पुरुषे यथा कालावराय; तृतीया अमसमासार्थे यथा कालेन पूर्वाय इत्यादि। मुख्य अर्थ इन्के ये हैं; (सर्व विश्व) सब (उभ) दोनें (उभय) दो अवयव वाला (भवत्) आप (त्वत्, त्व) अन्य (एक) कोई (एकतर) दोनो मे से एक (सम) सब (सिम) पूरा (नेम) आधा (अन्य) दूसरा (अन्यतर) और कोई (इतर) दूसरा (कतर) दोनो में से कौन (कतम) बहुतों मे से कौन (एकतम) बहुतों मे से एक (यतर) दोनों मे से जो (यतम) बहुतों मे से जो (पूर्व) पहिला, पूर्व दिशा वा देश (पर) पिछला काल, दिशा वा देश (अवर) पिछला, पश्चिम (अपर) दूसरा, उरला (दक्षिण) दहना, दक्षिण दिशा (उत्तर) पिछला, उत्तर दिशा (अधर) निचला (अन्तर) बाहिर और आच्छादन (स्व) अपना, परज्ञाति वा धन नहि (यद्) जो (तद्, त्यद्) वह, सो (एतद्) यह (किम्) क्या, कौन (द्वि) दो (इदम्) यह (अदस्) वह (अस्मद्) मैं (युष्मद्) तुम।

* पर द्वन्द्व होने से भी जस् विभक्ति मे सर्वादिगण विकल्प करके सर्वनाम होते हैं

(२) (वा) त्व

सर्वादि गण

सर्व-शब्द

पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वितीया	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

क्लीवलिङ्ग

प्रथमा	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीया	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि

तृतीयादि विभक्तियों मे पुंलिङ्ग की न्याई।

स्त्रीलिङ्ग

प्रथमा	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृतीया	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
षष्ठी	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सप्तमी	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु

विश्व उभय त्व एक[1] एकतर सम सिम नेम[2] इन सब शब्दों के रूप सर्व शब्द की न्याई हैं

उभ शब्द केवल द्विवचन है, इस्के रूप भी उक्त प्रकार। कोइयों के मत मे उभयशब्द का द्विवचन नहिं है।

(१) संख्या मे एक शब्द का द्विवचन, बहुवचन नहिं।

(२) पुंलिङ्ग जस् विभक्ति मे नेम का रूप विकल्प करके नेमाः भी होता है।

भवत् शब्द के रूप वत् प्रत्ययान्त शब्द की न्याई होते हैं और स्त्रीलिङ्ग मे नदी शब्द की न्याई यथा

(पुं) भवान्, भवन्तौ, भवन्तः, भवन्तं, भवन्तौ, भवतः, भवता, भवद्भ्याम् इत्यादि

(स्त्री) भवती, भवत्यौ, भवत्यः (क्लीव) भवत्, भवती, भवन्ति इत्यादि

त्वत् शब्द को कोई तकारान्त मानते हैं और कोई अकारान्त अर्थात् त्व; अकारान्त होने से इसके रूप सर्व शब्द की न्याई होंगे, तकारान्त होने से भूभृत् की न्याई

अन्यादि

अन्यादि शब्दों के रूप सर्वादि की न्याई होते हैं; केवल क्लीव लिङ्ग की प्रथमा और द्वितीया के एकवचन मे अन्त्यम् के स्थान मे त् द् होजाता है यथा अन्यत्, अन्यद्, अन्यतरत् द् इत्यादि

पूर्वादि

पूर्वादि शब्द के रूप भी सर्वादि की न्याई होते हैं केवल इतना विशेष है कि पुंलिङ्ग के जस्, ङसि, ङि, विभक्तियों मे विकल्प करके सामान्य अकारान्त शब्द की न्याई भी रूप होते हैं यथा पूर्वे (वा) पूर्वाः पूर्वस्मात् (वा) पूर्वात्, पूर्वस्मिन् (वा) पूर्वे इत्यादि

यदादि

यदादि शब्द अकारान्त होजाते हैं यथा य, त, त्य, एत[1], क, द्व और इनके रूप सर्वादि की न्याई होते हैं; केवल इतना विशेष है कि क्लीवलिङ्ग की प्रथमा और द्वितीया के एकवचन मे अन्त्यम् के स्थान मे द् (वा) त् होता है पर किम् शब्द का किम् हि रहता है और प्रथमा के एकवचन मे तद्, त्यद्, एतद् के पुंलिङ्ग मे सः स्यः एषः और स्त्रीलिङ्ग मे सा स्या एषा ये रूप होते हैं।

[2] द्वि शब्द का केवल द्विवचन है ॥

(१) जब किसी वाक्य मे एक वार एत शब्द का हो और द्वितीय वार उसकी फेर विवक्षा हो तो उस वार एत के स्थान मे एन भी होजाता है द्वितीया मे तृतीया के एकवचन मे और षष्ठी के द्विवचन मे अर्थात् (पुं) एनं, एनौ, एनान्, एनेन, एनयोः (स्त्री) एनां, एने, एनाः, एनया, एनयोः (क्लीव) एनत्, एनद्, एने, एनानि इत्यादि। यथा "एतेन व्याकरणमधीतमेनं हितोपदेशं पाठय"

(२) परन्तु अय, तय, तीय प्रत्यय लगने से द्वि, त्रि शब्द के सब वचन होते हैं, पर पुंलिङ्ग की जस् विभक्ति मे अय तय प्रत्ययान्त के रूप सर्व की न्याई भी होंगे और नर की न्याई भी यथा द्वये (वा) द्वयाः, त्रये (वा) त्रयाः, द्वितये (वा) द्वितयाः, त्रितये (वा) त्रितयाः और द्वितीय, तृतीय शब्दों के चतुर्थी, पञ्चमी और सप्तमी के एक वचन मे दो दो रूप होंगे यथा द्वितीयस्मै (वा) द्वितीयाय, द्वितीयस्मात् (वा) द्वितीयात्, द्वितीयस्मिन् (वा) द्वितीये, (स्त्री) द्वितीयस्यै (वा) द्वितीयायै, द्वितीयस्याः (वा) द्वितीयायाः, द्वितीयस्याम् (वा) द्वितीयायाम्।

इदमादि

इदमादि प्रत्येक शब्द के रूप पृथक् पृथक् हैं यथा;

इदम-शब्द

पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अयम्	इमौ	इमे
द्वितीया	इमम्	इमौ	इमान्
तृतीया	अनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पञ्चमी	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः	एषु

क्लीवलिङ्ग

प्रथमा, द्वितीया	इदम्	इमे	इमानि

तृतीयादि विभक्तियों मे पुंलिङ्ग की न्याई

स्त्रीलिङ्ग

	ए.	द्वि.	ब.
प्रथमा	इयम्	इमे	इमाः
द्वितीया	इमाम्	इमे	इमाः
तृतीया	अनया	आभ्याम्	आभिः
चतुर्थी	अस्यै	आभ्याम्	आभ्यः
पञ्चमी	अस्याः	आभ्याम्	आभ्यः
षष्ठी	अस्याः	अनयोः	आसाम्
सप्तमी	अस्याम्	अनयोः	आसु

अदस्-शब्द

पुंलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	असौ	अमू	अमी
द्वितीया	अमुम्	अमू	अमून्
तृतीया	अमुना	अमूभ्याम्	अमीभिः
चतुर्थी	अमुष्मै	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
पञ्चमी	अमुष्मात्	अमूभ्याम्	अमीभ्यः
षष्ठी	अमुष्य	अमुयोः	अमीषाम्
सप्तमी	अमुष्मिन्	अमुयोः	अमीषु

क्लीबलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा, द्वितीया	अदः	अमू	अमूनि

स्त्रीलिङ्ग

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	असौ	अमू	अमूः
द्वितीया	अमूम्	अमू	अमूः
तृतीया	अमुया	अमूभ्याम्	अमूभिः
चतुर्थी	अमुष्यै	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
पञ्चमी	अमुष्याः	अमूभ्याम्	अमूभ्यः
षष्ठी	अमुष्याः	अमुयोः	अमूषाम्
सप्तमी	अमुष्याम्	अमुयोः	अमूषु

युष्मद्-शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्, त्वा (१)	युवाम्, वाम् (१)	युष्मान्, वः (१)
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्, ते	युवाभ्याम्, वाम्	युष्मभ्यम्, वः

(१) च, वा, एवं, इन तीन अव्ययों के योग में युष्मद् शब्द के-त्वा, ते, वाम्, वः और अस्मद् शब्द के मा, मे, नौ, नः, इन पदों का प्रयोग नहिं होता। यथा गुरुः कृपया त्वां मां च उपदिशति—

	ए॰	द्वि॰	ब॰
पञ्चमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव, ते	युवयोः, वाम्	युष्माकम्, वः
सप्तमी	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

अस्मद्-शब्द

प्रथमा	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	माम्, मा	आवाम्, नौ	अस्मान्, नः
तृतीया	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
चतुर्थी	मह्यम्, मे	आवाभ्याम्, नौ	अस्मभ्यम्, नः
पञ्चमी	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	मम, मे	आवयोः, नौ	अस्माकम्, नः
सप्तमी	मयि	आवयोः	अस्मासु

युष्मद् अस्मद् शब्दों के रूप तीनों लिङ्गों मे एक से हैं

सकदा चिदपि तव मम च वचनं नस्तृणोति; तदाश्रयं विना युवयोरावयोश्च गतिर्नास्ति; तेनैवं क्रियमाणो युष्माकमस्माकंच का हानिः; इन स्थलों मे त्व आच उपदिशति इत्यादि नहि होंगे। इसी प्रकार वा और एव के योग मे भी वाक्य के अथवा श्लोक पाद के आरम्भ मे भी इन पदों का प्रयोग नहि होता, यथा(वाक्यारम्भे) तव पुस्तकं गृहाण, मम पुस्तकं देहि, युष्माकं प्रीतिर्वर्द्धते, अस्माकं सकाशमागच्छ, इन स्थलों मे ते पुस्तकं गृहाण इत्यादि प्रयोग नहि होंगे। (श्लोकपादारम्भे) त्वां सरस्वति यत्नेन, मां सद्दे हि निरन्तरम्, तवैव दोषो नैवान्, मम दोषोऽस्ति कश्चन। इस श्लोक मे त्वा, मा, ते, मे नहि होंगे गौण युष्मद्, अस्मद् शब्दों के रूप विलक्षण हैं यथा

(त्वामतिक्रान्तः) अतियुष्मद् शब्द

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा	अतित्वम्	अतित्वाम्	अतियूयम्
द्वितीया	अतित्वाम्	अतित्वाम्	अतित्वान्
तृतीया	अतित्वया	अतित्वाभ्याम्	अतित्वाभिः
चतुर्थी	अतितुभ्यम्	अतित्वाभ्याम्	अतित्वभ्यम्
पञ्चमी	अतित्वत्	अतित्वाभ्याम्	अतित्वत्
षष्ठी	अतितव	अतित्वयोः	अतित्वाकम्
सप्तमी	अतित्वयि	अतित्वयोः	अतित्वासु

(युवामतिक्रान्तः) अतियुष्मत् शब्द

प्रथमा	अतित्वम्	अतियुवाम्	अतियूयम्
द्वितीया	अतियुवाम्	अतियुवाम्	अतियुवान्
तृतीया	अतियुवया	अतियुवाभ्याम्	अतियुवाभिः
चतुर्थी	अतितुभ्यम्	अतियुवाभ्याम्	अतियुवभ्यम्
पञ्चमी	अतियुवत्	अतियुवाभ्याम्	अतियुवत्
षष्ठी	अतितव	अतियुवयोः	अतियुवाकम्
सप्तमी	अतियुवयि	अतियुवयोः	अतियुवासु

(युष्मानतिक्रान्तः) अतियुष्मत् शब्द

प्रथमा	अतित्वम्	अतियुष्माम्	अतियूयम्
द्वितीया	अतियुष्माम्	अतियुष्माम्	अतियुष्मान्
तृतीया	अतियुष्मया	अतियुष्माभ्याम्	अतियुष्माभिः
चतुर्थी	अतितुभ्यम्	अतियुष्माभ्याम्	अतियुष्मभ्यम्
पञ्चमी	अतियुष्मत्	अतियुष्माभ्याम्	अतियुष्मत्
षष्ठी	अतितव	अतियुष्मयोः	अतियुष्माकम्
सप्तमी	अतियुष्मयि	अतियुष्मयोः	अतियुष्मासु

(मामतिक्रान्तः) अत्यस्मद् शब्द

	एकव.	द्विव.	बहुव.
प्रथमा	अत्यहम्	अतिमाम्	अतिवयम्
द्वितीया	अतिमाम्	अतिमाम्	अतिमान्
तृतीया	अतिमया	अतिमाभ्याम्	अतिमाभिः
चतुर्थी	अतिमह्यम्	अतिमाभ्याम्	अतिमभ्यम्
पञ्चमी	अतिमत्	अतिमाभ्याम्	अतिमत्
षष्ठी	अतिमम	अतिमयोः	अतिमाकम्
सप्तमी	अतिमयि	अतिमयोः	अतिमासु

(आवामतिक्रान्तः) अत्यस्मद् शब्द

प्रथमा	एकव.	द्विव.	बहुवचन
प्रथमा	अत्यहम्	अत्यावाम्	अतिवयम्
द्वितीया	अत्यावाम्	अत्यावाम्	अत्यावान्
तृतीया	अत्यावया	अत्यावाभ्याम्	अत्यावाभिः
चतुर्थी	अतिमह्यम्	अत्यावाभ्याम्	अत्यावभ्यम्
पञ्चमी	अत्यावत्	अत्यावाभ्याम्	अत्यावत्
षष्ठी	अतिमम	अत्यावयोः	अत्यावाकम्
सप्तमी	अतिमयि	अत्यावयोः	अत्यावासु

(अस्मानतिक्रान्तः) अत्यस्मद् शब्द

प्रथमा	अत्यहम्	अत्यस्माम्	अतिवयम्
द्वितीया	अत्यस्माम्	अत्यस्माम्	अत्यस्मान्
तृतीया	अत्यस्मया	अत्यस्माभ्याम्	अत्यस्माभिः
चतुर्थी	अतिमह्यम्	अत्यस्माभ्याम्	अत्यस्मभ्यम्
पञ्चमी	अत्यस्मत्	अत्यस्माभ्याम्	अत्यस्मत्
षष्ठी	अतिमम	अत्यस्मयोः	अत्यस्माकम्
सप्तमी	अत्यस्मयि	अत्यस्मयोः	अत्यस्मासु

संख्या वाचक

एक शब्द-एकवचनान्त

एक शब्द तीनो लिङ्गो मे सर्व शब्द की न्याई है

द्वि शब्द-द्विवचनान्त

	पुंलिङ्ग	क्लीवलिङ्ग और स्त्री लिङ्ग
प्रथमा	द्वौ	द्वे
द्वितीया	द्वौ	द्वे
तृतीया	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
चतुर्थी	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
पञ्चमी	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
षष्ठी	द्वयोः	द्वयोः
सप्तमी	द्वयोः	द्वयोः

त्रि शब्द-बहुवचनान्त

	पुंलिङ्ग	क्लीवलिङ्ग	स्त्री लिङ्ग
प्रथमा	त्रयः	त्रीणि	तिस्रः
द्वितीया	त्रीन्	त्रीणि	तिस्रः
तृतीया	त्रिभिः	त्रिभिः	तिसृभिः
चतुर्थी	त्रिभ्यः	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः
पञ्चमी	त्रिभ्यः	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः
षष्ठी	त्रयाणाम्	त्रयाणाम्	तिसृणाम्
सप्तमी	त्रिषु	त्रिषु	तिसृषु

चतुर् शब्द-बहुवचनान्त

	पुंलिङ्ग	क्लीवलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
प्रथमा	चत्वारः	चत्वारि	चतस्रः
द्वितीया	चतुरः	चत्वारि	चतस्रः
तृतीया	चतुर्भिः	चतुर्भिः	चतसृभिः
चतुर्थी	चतुर्भ्यः	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः
पञ्चमी	चतुर्भ्यः	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः
षष्ठी	चतुर्णाम्	चतुर्णाम्	चतसृणाम्
सप्तमी	चतुर्षु	चतुर्षु	चतसृषु

पञ्चन् शब्द-बहुवचनान्त

प्र. पञ्च, द्वि. पञ्च, तृ. पञ्चभिः, च. पञ्चभ्यः, पं. पञ्चभ्यः, ष. पञ्चानाम्, स. पञ्चसु

षष् शब्द-बहुवचनान्त

षट् षट् षड्भिः षड्भ्यः षड्भ्यः षण्णाम् षट्सु

सप्तन् शब्द-पञ्चन् की न्याईं

अष्टन् शब्द-बहुवचनान्त

अष्टौ(वा) अष्टौ, अष्टाभिः अष्टाभ्यः अष्टाभ्यः अष्टानाम् अष्टासु
अष्ट अष्ट अष्टभिः अष्टभ्यः अष्टभ्यः अष्टसु

तीनों लिङ्गों में समान हैं

नवन् दशन् प्रभृति सारे नकारान्त संख्यावाचक शब्दों के रूप पञ्चन् की न्याईं होते हैं।

(१) इन के सिवा और जितने संख्यावाचक शब्द हैं सबों के रूप उनके लिङ्ग और अन्त्य वर्ण के अनुसार यथा नियम होते हैं। यथा; विंश-

---

(१) ये शब्द भी समासान्त गौण होने से इनके रूप, लिङ्ग और अन्त्य वर्ण के अनुसार होते हैं। यथा प्रियत्रिः मनुष्यः (अर्थात् तीन पियारे हों जिसको वह मनुष्य) प्रियत्रिः स्त्री, प्रियत्रिकुलं, प्रियतिस्रौ मनुष्यौ (अर्थात् जिन दो मनुष्यों को तीन स्त्रीयें प्यारी हों) प्रियतिसृकुलं। समासान्त चतुर् को चत्वार् होजाता है सु, अम्, औ विभक्तियों मे यथा प्रियचत्वाः; प्रियचत्वारौ, प्रियचत्वारः; प्रियचत्वारम्, प्रियचत्वारौ, प्रियचतुरः; प्रियचतुरा इत्यादि। समासान्त षष् शब्द के षान्त शब्द की न्याईं रूप होते हैं। नान्त संख्यावाचक शब्द उत्तर पद होने से, उनके रूप अनन्त शब्द की न्याईं होते हैं, पर समासान्त अष्टन् शब्द के रूप अनन्त की न्याईं भी होते हैं और विकल्प करके हाहा शब्द की न्याईं, और बहुवचन मे सामान्य अष्टन् की न्याईं भी होते हैं। यथा (प्र.) प्रियाष्टा, प्रियाष्टानौ, प्रियाष्टानः (अथवा) प्रियाष्टाः, प्रियाष्टौ, प्रियाष्टाः (वा) प्रियाष्टौ (द्वि.) प्रियाष्टानम्, प्रियाष्टानौ, प्रियाष्टनः (अथवा) प्रियाष्टाम्। प्रियाष्टैः प्रियाष्टाः प्रियाष्टान् (वा) प्रियाष्टौ, (तृ.) प्रियाष्टना, प्रियाष्टभ्याम्, प्रियाष्टभिः (अथवा) प्रियाष्टाभ्याम्, प्रियाष्टाभिः इत्यादि।

ति, षष्टि, सप्तति, अशीति, नवति प्रभृति शब्द स्त्रीलिङ्ग और इकारान्त हैं; इनके रूप मति शब्द की न्याई होते हैं। त्रिंशत्, चत्वारिंशत्, पञ्चाशत् शब्द तकारान्त और स्त्रीलिङ्ग हैं, इनके रूप भूभृत् शब्द की न्याई होते हैं। शत, सहस्र प्रभृति शब्द अकारान्त और क्लीव लिङ्ग हैं इनके रूप फल शब्द की न्याई होते हैं; विंशति अवधि सारे संख्या वाचक शब्द एकवचनान्त हैं, बहुवचन के विशेषण होने से भी इनका एकवचनान्त हि प्रयोग होता है। यथा विंशतिः पुरुषाः, त्रिंशत्स्त्रियः, सहस्रं फलानि इत्यादि (१)

विशेष्य विशेषण

जिससे केवल किसी वस्तु वा व्यक्ति का बोध हो उसको विशेष्य पद कहते हैं। यथा, गृहम्, जलम्, वृक्षः, लता, नौका, वस्त्रम्, पुस्तकम्, पृथिवी, चन्द्रः, सूर्य्यः, नक्षत्रम्, शिशुः इत्यादि।

जिससे विशेष्य की अवस्था और गुण जाना जाय उसको विशेषण पद कहते हैं। विशेषण पद प्राय विशेष्य के पूर्व होता है; यथा नूतनं गृहम्, निर्म्मलं जलम्, फलवान् वृक्षः, पुष्पिता लता, भग्ना नौका, छिन्नं वस्त्रम्, उत्तमं पुस्तकं, गोलाकारा पृथिवी, शीतलः चन्द्रः, प्रदीप्तः सूर्य्यः, उज्ज्वलं नक्षत्रं, धार्म्मिकः पुरुषः, सुशीलः शिशुः।

विशेष्य शब्द कोई पुंलिङ्ग, कोई स्त्रीलिङ्ग और कोई क्लीव लिङ्ग हैं। विशेष्य शब्द का जो लिङ्ग, विशेषण शब्द का भी वही लिङ्ग होता है; यथा, सुन्दरः शिशुः, सुन्दरी कन्या, सुन्दरं गृहम्, उज्ज्वलः शशी, उज्ज्वलं नक्षत्रम्, उज्ज्वला दीपशिखा, बुद्धिमान् पुरुषः, बुद्धिमती स्त्री, निर्म्मला बुद्धिः, निर्म्मलं जलम्॥

विशेष्य पद का जो वचन हो विशेषण पद का भी वही वचन होता है, अर्थात् विशेष्य पद एकवचनान्त हो तो विशेषण पद भी एकवचनान्त होता है, विशेष्य पद द्विवचनान्त हो तो विशेषण पद भी द्विवचनान्त होता है, विशेष्य पद बहुवचनान्त हो तो विशेषण पद भी बहुवचनान्त होता है, यथा बलवान् सिंहः, बलवन्तौ सिंहौ, बलवन्तः सिंहाः, वेगवती नदी, वेगवत्यौ नद्यौ, वेगवत्यः नद्यः, निविड़ं वनम्, निविड़े वने, निविड़ानि वनानि।

विशेष्य पद की जो विभक्ति विशेषण पद की भी वही विभक्ति होती है; यथा सुन्दरः शिशुः, सुन्दरं शिशुम्, सुन्दरेण शिशुना, सुन्दराय शिशवे, सुन्दरात् शिशोः, सुन्दरस्य शिशोः, सुन्दरे शिशौ, निर्म्मलं जलम्, निर्म्मलेन जलेन, निर्म्मलाय जलाय, निर्म्मलात् जलात्, निर्म्मलस्य जलस्य, निर्म्मले जले,

(१) परन्तु जहां किसी संख्या का द्विगुण, बहुगुण अर्थ हो वहां द्विवचन, बहुवचन भी होता है यथा विंशती, विंशतयः शतानि, सहस्राणि इत्यादि, कहीं २ सामान्य अर्थ मे भी बहुवचन देखा जाता है यथा "पञ्चाश

अव्यय शब्द

अव्यय शब्दों के उत्तर सब विभक्तियों का लोप होजाता है, और उनका रूप जैसा का तैसा रहता(१) है इसीलिये उनको अव्यय कहते हैं। अव्यय बहुत हैं, पर जो व्याकरणों मे प्रायशः गिने गए हैं और जो व्यवहार मे आते हैं उनको अर्थ के साथ नीचे लिखते हैं

अव्यय	अर्थ	अव्यय	अर्थ
अ	संबोधन, निषेध, अधिक्षेप, अभाव	अत्र	यहां
		अथ }	इससे, अनन्तर, अब
अकस्मात्	अचानचक	अथो }	
अग्रतस्	पहिले	अथकिम्	फेरकैसे, हां
अग्रे	पहिले	अथवा	वा, या
अइ	सम्बोधन	अद (३)	आश्चर्य प्रभृति द्योतक
अङ्ग	सम्बोधन, पुनरर्थ		
अचिरम् }		अद्धा	सचमुच
अचिरात् }	शीघ्र	अद्य	आज
अचिरेण }		अद्यत्वे	अब
अजस्रम्	लगातार	अध }	
अज्ञानतस्	नजानकर	अधस् }	नीचे
अञ्जसा	शीघ्र	अधस्तात् }	
अतस्	इससे, इसकारण	अधि (३)	अधिकार, गति (४)
अति (३) (२)	अतिक्रम	अधुना	अब
अतीव	बहुत	अनु (३)	पश्चात्

(१) पर अन्त्य स् र् का विसर्ग तो हो हि जाता है पदान्त अथवा हल परे होने से
(२) ३ चिह्नित अव्ययों की उपसर्ग संज्ञा भी होती है क्योंकि ये धातु के पूर्व लगते हैं, पर अतिक्रम अर्थ मे अति की उपसर्ग संज्ञा नहि
(३) नाम के आगे लगता है यथा अद्भुत
(४) गति अर्थ मे अधि की उपसर्ग संज्ञा नहि

अव्यय	अर्थ
अन्तर् (३)	भीतर
अनिशम्	सदा
अन्तरम्, अन्तरा, अन्तरे, अन्तरेण	सिवा, बीच
अन्यच्च	और भी
अन्यत्	और
अन्यत्र	और स्थान मे
अन्यथा	नहितो, और प्रकार
अन्वाजे (१) (करण)	दुर्बलकी सहायता करनी
अप (३)	अपगति, अपहार
अपरम्	और कुछ
अपरेद्युस्	और दिन
अपि (२)(३)	भी, सत्यम्
अयि	सम्बोधन, हर्ष, विषाद विस्मयद्योतक शब्द
अभि (३)	सन्मुख, समीप, ऊपर
अभितस्	चारों ओर से, शीघ्र, निकट
अभीक्ष्णम्	बारम्बार, शीघ्र
अम्	शीघ्र, थोड़ा
अमा	साथ
अमुत्र	वहां, परलोक मे

अव्यय	अर्थ
अये, अयो, अयि, अरे	सम्बोधन
अरम्	शीघ्र
अर्वाक् (३)	पीछे
अलम् (कारः)	भूषण, बस
अव (४)(३)	नीचे, पृथक्
अवे	नीचे, सम्बोधन
अवस्	बाहिर
असकृत्	बारम्बार
असम्प्रति	बेठीक
असाम्प्रतम्	बेठीक, असमय
अस्तम्	अस्त होना, बैठना
अलि	जोड़े, सखा
अस्तु	होवो
अस्मि	मैं
असि	तू
अह्नाय	दिन से
अह, अहो, अहोवत्	सम्बोधन
अहह	हर्ष, विषाद, विस्मय
आ	वाक्य, स्मरण
आ (३)	समन्तात्, मर्यादा
आतः	यहां से भी
आदह	उपक्रम, हिंसा, कुत्सन
आदि	अवशिष्ट, इत्यादि

(१) इस अव्यय के आगे करण क्रिया लगती है
(२) अपि के अकार का कहीं विकल्प करके लोप भी होजाता है यथा अपिधानं (वा) पिधानं पदार्थ सम्भावना, निन्दा, अन्वाचय और समुच्चय अर्थों में ... सन्तान हि होती

(३) इस अव्यय के आगे कृधातु लगता है भूषण अर्थ मे
(४) अव के आदि अकार का कहीं विकल्प करके लोप भी होजाता है, यथा अवगाह: (वा) गाह:

आनुषक् / आनुषट्	यथाक्रम
आम्	अङ्गीकार
आरात्	निकट, दूर
आर्य्यहलम्	बलपूर्वक
आविस्	उपस्थित, प्रकट
आविस् (आविर्भूतः)	प्रकट हुआ
आह / आहो	परन्तु, क्योंकर, क्षेप, नियोग, विकल्प, प्रश्न, विचार,
आहोस्वित्	विकल्प, प्रश्न, जिज्ञासा
इ	सम्बोधन, जुगुप्सा, विस्मय
इतस्	यहांसे
इतस्ततस्	इधर, उधर
इति	यहांतक, इसप्रकार समाप्तिका चिह्न
इतरम्	दूसरा, फेर
इतरेद्युस्	औरदिन
इतिह	कहावतसे, परम्पराश्रुत
इत्थम्	इसप्रकार
इदानीम्	अब
इद्धा	प्रकाश्य, सचमुच
इन्न	क्रोध वा खेद द्योतक शब्द
इव	न्याई, तुल्य
इह	यहां, इसलोकमे
ई	सम्बोधन, विषाद, अनुकम्पा, क्रोध, खेद, प्रत्यक्ष, सन्निधि
ईषत्	थोड़ा

उ	सम्बोधन, रोषोक्ति, पादपूरण, प्रश्न, अङ्गीकार, अनुकम्पा, वियोग
उच्चैस्	ऊंचा, महत्
उत्, उद् (उ)	ऊंचा, ऊपर
उत	भी, क्या, वा
उताह / उताहो	क्या, प्रश्न
उत्तरम्	पीछे
उत्तरेद्युस्	परदिन
उप	समीप, न्यून
उपधा	भेद
उपांशु	अप्रकाश्य उच्चारण, रहस्य, कानाफूसी
उभयतस्	दोनो ओरसे
उभयद्युस् / उभयेद्युस्	दोनोदिन
उररी / उरी / ऊररी / ऊरी	(करणं) स्वीकार, अङ्गीकार
उषा	अरुणोदय
ऊ	सम्बोधन, वाक्यारम्भ, रक्षा
ऋ	गर्हण, वाक्य
ऋतम्	सत्यम्
ऋते	विना

ऋधक्	सत्यम्
ऋ	वाक्यारम्भ, रक्षा, निन्दा, भय
ऌ	देवमाता, भूमि, पर्वत
ॡ	देवनारी, नार्य्यात्मा, माता
ए	सम्बोधन, स्मृति, असूया, अनुकम्पा, आमन्त्रण
एकत्र	एकस्थानमें, इकट्ठे
एकदा	एकसमय
एकधा	एकवार, एकप्रकार
एकपदे	अकस्मात्, एकवारहि
एतर्हि	अब
एव	हि, केवल, भी
एवम्	ऐसे, इसीप्रकार, और
एहि	आओ, आरम्भकरो
ऐ	सम्बोधन, स्मरण, आमन्त्रण
ओ	सम्बोधन, स्मरण, अनुकम्पा
ओं	प्रणव, ईश्वरका रकशब्द, हां
औ	सम्बोधन, विरोध, निर्णय
कम्	जल, शिर, सुख, मङ्गल
कच्चन } कच्चित् }	क्याजो, क्योंकरजो, जो कभी
कथम्	कैसे, क्योंकर
कथञ्चन } कथञ्चित् }	किसीप्रकारसे
कथन्नाम	क्योंकर नव
कथाच	अनादर

कदा	कब
कदाचित्	कभी
कर्हि	कब
कर्हिचित्	किसीसमय
कवाली } केवाली } केवासी }	(भूत:) मारागया
का } कु } (१)	खोटा अर्थ योनक
किङ्किल	क्या सच
किञ्च	और
किञ्चन } किञ्चित् }	कुछ
कित्	अवज्ञाबोधक शब्द
किन्तु	परन्तु, पर भी
किन्नु	परक्या, परक्योंकर
किम्	क्या
किमु } किमुत }	तो क्या
किमुत	या क्या
किमुह	क्या, क्योंकर
किंवा	अथवा, या
किंस्वित्	साक्षा, याऐसा होगा, या शायद
किल	निस्सन्देह, निश्चय, पादपूर्णार्थ शब्द
कुतस्	कहांसे क्योंकर
कुत्र	कहां

(१) येनाम के आगे लगते हैं यथा, कापुरुष, कोष्ण, कुकर्म

कुत्रचित्	कहीं
कुवित्	बहुत, प्रशंसा
कुषत्, कूपत्	बहुत अच्छे प्रकार से
कृतम्	बहुत हुआ, बस
क्व	कहां
क्वचित्	कहीं
क्षमा	सहिष्णुता, अपराध मार्जना
खलु	निश्चय, पादपूरणार्थ शब्द
च	और, पादपूरणार्थ शब्द
चनस्	अन्न
चन, चित् (१)	सामान्य अर्थ द्योतक प्रत्यय
चिरम् (२)	बहुत काल
चिरात्राय	बहुत काल से
चेत्	जो
चैव	और भी
जातु	कभी
जोषम्	चुपचाप, सुख से
ज्योक्	शीघ्र, भूयः
झगिति, झटिति	शीघ्र
तत् (तद्)	इसलिये, तब
ततस्	वहां से
तत्र	वहां

तथा	वैसे, तैसे, और
तथाहि	जैसे दिखलाया गया
तथैव	वैसे हि, उसी प्रकार
तदा, तदानीम्	तब
तस्मात्	इसलिये
तर्हि	तब
तावत्	सारा, यहां तक, इतना
ताली (भूतः)	फैला हुआ
तिरस्, तिर्यक्	टेढ़ा, तिर्छा
तु	तो, पर पादपूरणार्थ शब्द
तुम्	किसी को तुम कहना
तूष्णीकाम्, तूष्णीम्	चुपचाप
तेन	तिससे, तिसलिये
त्वै	पर, क्योंकर, विशेष, वितर्क
दिवा	दिन
दिष्ट्या	भाग्य से
दुःसमम्, दुष्ठु	बुराई से, कष्ट से
दुर् (३)	दुर्गति, कष्ट
दूरम्	दूर
दोषा	सन्ध्या के समय
घ	हिंसा, प्रातिलोम्य पादपूरणार्थ शब्द
है	वितर्क
द्राक्, द्राङ्	शीघ्र

(१) ये किम् प्रभृति शब्दों के आगे लगते हैं।
(२) विभक्त्यन्त होकर भी यह शब्द अव्यय होता है; यथा, चिराय, चिरेण, चिरात्, चिरस्य, चिरे।

शब्द	अर्थ
धिक्	धिक्कार, घृणा
न, नञ्	नहि, न
नकिम्, नकीम्, नकिर्	वर्ज्जन, कुछ नहि
नक्तम्	रात
नतु	पर नहि
ननु	जो
नमस्	नमस्कार
नवा	या नहि, जो नहि
नवरम्	केवल
नह	न, प्रत्यारम्भ
नहि	न
नाना	बहुतेरे
नाम	प्रकाश्य, सम्भावना, क्रोध, उपगम, कुत्सन, निन्दन, विस्मय, स्मरण, विकल्प
नास्ति	नहोना
नि (उ)	बहुत करके, बीच, नीचे, विरुद्ध
निकषा	निकट
निकामम्	इच्छापूर्वक, तीन, बहुत
निर् (उ)	निर्गत, रहित
नीचैस्	नीचे, अल्प
नु	जो, सन्देह, पादपूरणार्थशब्द
नुकम्	वा, या
नुवा	शायद, या जो
नूनं	निश्चय
नो	नहि
नोचेत्	जो नहि
न्वै	शायद, नुवा
परम्	पीछे
परन्तु	किन्तु
परश्वस्	परसों
परा (उ)	उलटा, ऊपर
परि (उ)	चारों ओर
परितस्	चारों ओर से
परेद्यवि, परेद्युस्	परदिन
पर्य्याप्तम्	बहुत होगया, पूर्ण, बस
पशु	अच्छा, ठीक
पशु (भूतः)	मारागया
पश्चात्	पीछे
पश्य, पश्यत	देखो
पाट्, प्याट्	सम्बोधन
पाणौ (करणे)	विवाह
पुनर्	फेर
पुरतस्, पुरस्, पुरस्तात्	साम्हने, आगे, पहिले
पुरा	पहिले, पूर्व

पूर्वतस्	पहिलेसे
पूर्वेद्युस्	पहिलेदिन, कलसे पहिला दिन
पृथक्	अलग, स्वतन्त्र
प्र (उ)	पहिला; प्रकर्ष
प्रगे	प्रातःकाल
प्रतान्	विस्तारसे
प्रताम् / प्रशाम्	थकावट
प्रशान्	सामर्थ्य
प्रति (उ)	फेर, उलटा, पर, को
प्रतिदिनम्	दिन दिन, हररोज़,
प्रत्युत	उलटा, उसके विरुद्ध
प्रभाते	प्रातःकाल
प्रवाहिका / प्रवाहुकं	एकसमय, ऊर्द्ध
प्रसह्य	बलसे
प्राक्	पहिले
प्रातर्	प्रातःकाल
प्रादुस् (भूत:)	प्रकट होना
प्राध्वम्	विरुद्ध, लगातार
प्राध्वम् (कृत)	यथाक्रम बंधागया
प्रायस्	बहुतकरके
प्राह्णे	दुपहरके पहिले
प्रेत्य	मृत्युके पीछे, परलोकमे
फट्	तन्त्रका शब्द
बदि	कृष्णपक्ष
बलवत् / बलात्	बलपूर्वक

बहिस्	बाहर
भवत्	होवो
भगोस् / भोस्	सम्बोधन
भाजक्	शीघ्र
भुवर्	अन्तरीक्षलोक
भूर्	पृथिवी
भूयस्	फेर, बारम्बार, बहुत
भृशं	बहुत
मनाक्	थोड़ा
मङ्क्षु	शीघ्र
मा, माङ् / मास्म	मत, नहि, न
माकिम् / माकीम् / माकिर्	नहि, वर्जन
माचिरम्	देरनहो
मिथस् / मिथो	आपसमे, परस्पर
मिथुर्	जोड़ा
मिथ्या	झूठ
मुधा	वृथा
मुहुस्	बारम्बार
मृषा	झूठ
यत् (यद्)	जो
यतस्	जहांसे, जिसलिये
यत्र	जहां
यथा	जैसे, अनादर

यथा कथाच	किसीप्रकारसे, कभी	विष्वक्	सारेमे
यथाक्रम्	एककेपीछेदूसरा	विषु	नाना
यथा तथा	ठीक, जहां तहां	विहायसा	आकाशमे
यदा	जब	वृथा	अनर्थक, मुधा
यद्वा	वा	वेट्	जो, हवनका शब्द
यदि	जो	वै	सचमुच, पादपूरणार्थ शब्द
यावत्	जितना, सारा		
युक्	बुरा	वौषट्	हवनका शब्द
युक्तम्	ठीक, उचित	शनैस्	धीरे धीरे
युगपत् (पद्)	एकसाथ, एकसमय, इकट्ठे	शश्वत्	सदा, नित्य
		शुकम्	शीघ्र
युत्	बुरा	श्रद्धा (करणं)	मानना, विश्वासकरना
येन	जिसकरके, जिसहेतु	श्रौषट्	हवनका शब्द
रात्रौ	रातको	श्वस्	कल, अनागतदिवस
रे रे	अवज्ञा पूर्वक सम्बोधन	सकृत्	एकवार
		सत्तु	शीघ्र
वत्	न्याई, तुल्य	संवत्	बरस
वत	खेद	सत्रस	साथ
वषट्	हवनका शब्द	सह	साथ
वा	अथवा, या, विकल्पकरके	सहितम्	साथ
		साकम्	साथ
वाट्	हवनका शब्द	सार्द्धम्	साथ
वाद्	सदृश, जैसा	सत्	अच्छा, यथार्थ
वाव	केवल	सत् (कार)	शिष्टाचार, सन्मान
वि (उ)	विशेषकरके, विगत	सततम्	सदा
विना	सिवा, अरते	सदा	सर्वदा, नित्य
विभाषा	विकल्पकरके	सद्यस्	त्वरित

सनत् सना सनात्	सदा, नित्य
सनुतर्	अन्तर्द्धान
सपदि	त्वरित, शीघ्र
सम् (3)	सम्यक्, मिलकर
समन्ततस्	चारों ओर से, पूरा
समम्	समान, साथ
समया	निकट
समीपम् समीपे	निकट
समीचीनम्	अच्छा, पूरा
समुपजोषम्	आनन्द से
सम्प्रति	अब, हाल में
सम्मुखम्	सामने
सम्यक्	अच्छा, पूरा
सर्वतस्	सब ओर, सब प्रकार से
सर्वत्र	सब स्थान में
सर्वदा	सदा
सहसा	शीघ्र, एक बारहि, हड़बड़ी से
साक्षात्	प्रकाश्यरूप से, प्रत्यक्ष
साक्षात् (भावः)	प्रकाश्य होना
साचि	टेढ़ेपन से
साकम्	साथ, समान
साम्प्रतम्	अब, ठीक समय पर
सायम्	सायङ्काल
सु (3)	अच्छा
सुकम्	बहुत
सुचिरम्	बहुत देर से
सुदि	शुक्लपक्ष
सुष्ठु	अच्छा
सूपत्	प्रश्न, प्रशंसा (वाचक शब्द)
स्म	भूतकाल द्योतक वा पादपूरणार्थक शब्द
स्यात्	जो होवे
स्वधा	पितरों को दान का शब्द
स्वयम्	आप
स्वर्	स्वर्ग
स्वस्ति	मङ्गल
स्वाहा	देवताओं को हविदान का शब्द
स्वित् (1)	प्रश्न वा सन्देह द्योतक प्रत्यय
स्वी (करण)	मानना, अङ्गीकार

(3) उपसर्गों के वे अर्थ लिखे गये हैं जो वे प्रायशः द्योतन करते हैं, वस्तुतः उनके अपने अर्थ नहि, वे धातुओं के साथ मिलकर उन धातुओं के अनेक प्रकार के अर्थ करदेते हैं। कोई २ उपसर्ग स्वतन्त्र भी लगता है, यथा, अति, अधि, अनु, अन्तर, अप, अभि, आ, उप, परि और प्रति।

(1) यह और अव्ययों को लगता है

ह	पादपूरणार्थक शब्द, खेद	हे	सम्बोधन
हा	हर्ष विषाद विस्मय-द्योतक शब्द	हेतोः, हेतौ	इसलिये, इसकारण
हाहा, हाहो	खेद	है, हो, हैहो	सम्बोधन
हन्त	हर्ष, विषाद, अनुकम्पा, वाक्यारम्भ	हूं	तन्त्र का शब्द
हि	हि, निश्चय, हेतु, पादपूरणार्थक शब्द	ह्यस्	कल्ह, विगत दिवस
हिम्	चौंहक जाने का शब्द	इत्यादि (१)	
हिरुक्	सिवा, बिना, वर्ज्जन		
ही	विस्मय, दुःख, हेतु		
हुम्	असन्तोषप्रकाशक हुङ्कार, तन्त्र का शब्द		
ह्रीं	तन्त्र का बीजमन्त्र		

इति प्रथमभागः

(१) कृदन्त के क्त्वा, तोसुन्, कसुन्, णमुल्, ए, ऐ, ओ, औ वर्णान्त प्रत्यय और तद्धित के थाल्, च्वि, चशस्, वत्, कृत्वसुच् प्रभृति प्रत्यय जिन शब्दों के आगे लगें वे सब अव्यय होते हैं।

सरलव्याकरण

संस्कृतका

हिन्दीभाषामे

श्री नवीनचन्द्रराय कर्तृक प्रणीत

द्वितीयभाग

मित्रविलासयन्त्रलाहौरमें

पण्डितश्रीमुकुन्दरामयन्त्राध्यक्षने छापा

सम्वत् १९२८ विक्रम   सन १८७२ ईस्वी

द्वितीयसंस्करण   १२०० खण्ड

मूल्य ।)

द्वितीयभाग

अथ आख्यात प्रक्रिया।

१ क्रियावाचक शब्दोंको धातु कहते हैं। यथा भू, स्था, गम, दृश, रुद, हस, इत्यादि। धातुके उत्तर दश विभक्तियें होती हैं। यथा लट् १, लोट् २, लङ् ३, विधिलिङ् ४, लृट् ५, लृङ् ६, लुट् ७, आशीर्लिङ् ८, लिट् ९, लुङ् १०। विभक्तियोंके तीन पुरुष होते हैं, प्रथम १, मध्यम २, और उत्तम ३। अस्मद् शब्दके योगमे उत्तमपुरुष लगता है, युष्मद्मे मध्यम और तद्भिन्न सारे शब्दोंमे प्रथम पुरुष। हरएक पुरुषमे तीन तीन वचन होते हैं एकवचन, द्विवचन, बहुवचन॥

२ सारी विभक्तियें दोभागोंमे विभक्त हैं। प्रथमभागको परस्मैपद कहते हैं, दूसरे को आत्मनेपद। प्रत्येक विभक्ति के अठारे आकार हैं, परस्मैपदमे नव, और आत्मने पदमे नव। इसी लिये सब विभक्तियों के एकसो असी स्वरूप हैं, नव्वे परस्मैपदमे, और नव्वे आत्मनेपदमे। एकसो असी आकारोंके प्रत्येक को भी विभक्ति कहते हैं॥

(१) धातु की विभक्तियोंको तिङ् भी कहते हैं।

विभक्तियों की आकृति

लकार	पद	प्रथम पुरुष एक०	द्वि०	बहु०	मध्यम पुरुष एक०	द्वि०	बहु०	उत्तम पुरुष एक०	द्वि०	बहु०	काल
लट्	परस्मै०	ति	तः	अन्ति	सि	थः	थ	मि	वः	मः	वर्त्तमाने
	आत्मने०	ते	आते	अन्ते	से	आथे	ध्वे	ए	वहे	महे	
लोट्	परस्मै०	तु(१)	ताम्	अन्तु	हि(१)	तम्	त	आनि	आव	आम	आशीः
	आत्मने०	ताम्	आतां	अन्ताम्	स्व	आथां	ध्वम्	ऐ	आवहै	आमहै	प्रेरणयोः
लङ्	परस्मै०	त्	ताम्	अन्	ः	तम्	त	अम्	व	म	अतीत
	आत्मने०	त	आतां	अन्त	थाः	आथां	ध्वम्	इ	वहि	महि	अनद्यतने
विधि	परस्मै०	यात्	यातां	युः	याः	यातम्	यात	याम्	याव	याम	विधि
लिङ्	आत्म०	ईत	ईयातां	ईरन्	ईथाः	ईयाथां	ईध्वम्	ईय	ईवहि	ईमहि	संभावनयोः
लृट्	परस्मै०	स्यति	स्यतः	स्यन्ति	स्यसि	स्यथः	स्यथ	स्यामि	स्यावः	स्यामः	भविष्यति
	आत्म०	स्यते	स्येते	स्यन्ते	स्यसे	स्येथे	स्यध्वे	स्ये	स्यावहे	स्यामहे	
लृङ्	परस्मै०	स्यत्	स्यतां	स्यन्	स्यः	स्यतम्	स्यत	स्यम्	स्याव	स्याम	क्रियातिपत्तौ
	आत्म०	स्यत	स्येतां	स्यन्त	स्यथाः	स्येथां	स्यध्वं	स्ये	स्यावहि	स्यामहि	कचिद्भविष्यतौ
लुट्	परस्मै०	ता	तारौ	तारः	तासि	तास्थः	तास्थ	तास्मि	तास्वः	तास्मः	श्वोभा
	आत्म०	ता	तारौ	तारः	तासे	तासाथे	ताध्वे	ताहे	तास्वहे	तास्महे	विन्यर्थे
आशी	परस्मै०	यात्	यास्तां	यासुः	याः	यास्तं	यास्त	यासं	यास्व	यास्म	आशिषि
लिङ्	आत्म०	सीष्ट	सीयास्तां	सीरन्	सीष्ठाः	सीयास्थां	सीध्वं	सीय	सीवहि	सीमहि	
लिट्	परस्मै०	अ	अतुः	उः	थ	अथुः	अ	अ	व	म	परोक्षे
	आत्म०	ए	आते	इरे	से	आथे	ध्वे	ए	वहे	महे	अतीते
लुङ्	परस्मै०	त्	ताम्	अन्	ः	तम्	त	अम्	व	म	भूत
	आत्म०	त	आतां	अन्त	थाः	आथां	ध्वम्	इ	वहि	महि	सामान्ये

धातुविभाग।

२ संस्कृतधातु सारे दश गणोंमे विभक्त हैं; यथा तुदादि, भ्वादि, दिवादि, स्वादि, तनादि, क्र्यादि, रुधादि, अदादि, ह्वादि, और चुरादि॥

(१) तु और हि के स्थानमे तात् भी विकल्प करके होता है आशिषि अर्थमे

साधारणनियम

४ विभक्तिका अकार, एकार परे होनेसे पूर्व्व वर्त्ती अकारका लोप होताहै। यथा भव + अन्ति = भवन्ति, सेव + ए = सेवे।

५ विभक्तिका म और व परे होनेसे पूर्व्व वर्त्ती अकारको आ होताहै यथा भव + वः = भवावः, भव + मः = भवामः।

६ अकारके परस्थित आते, आथे, आताम्, आथाम्, इन विभक्तियों के आकारके स्थान मे इकार होताहै। यथा, सेव + आते = सेवेते, सेव + आथे = सेवेथे, सेव + आताम् = सेवेताम्, सेव + आथाम् = सेवेथाम्।

७ अकारके परस्थित विधिलिङ्के युः के स्थानमे इयुः, और याम् के स्थानमे इयम् होताहै। तद्भिन्न सारे या भाग के स्थानमे इ होताहै। यथा भव + युः = भवेयुः, भव + याम = भवेयम्, भव + यात् = भवेत्। भव + यातम् = भवेतम।

८ अकार और उ, नु, इन आगमों के परस्थित हि विभक्तिका लोप होताहै। यथा भव + हि = भव, कुरु + हि = कुरु, शृणु + हि = शृणु। परन्तु नु किसी और वर्ण के साथ संयुक्त होनेसे हि कालोप नहिं होता। यथा, आप्नु + हि = आप्नुहि।

९ वर्गोका प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, वर्ण अथवा ष, श, स, ह, इन वर्णोंके परस्थित हिके स्थान मे धि होताहै। यथा, विद् + हि = विद्धि।

१० अकार भिन्न वर्णोंके परस्थित अन्त, अन्ताम्, अन्ते, इन विभक्तियोंके न् को लोप होताहै। यथा; आस् + अन्त = आसत, आस + अन्ताम् = आसताम्, आस् + अन्ते = आसते। धातु अभ्यस्त[१] होनेसे अन्ति और अन्तु विभक्तियोंके न को भी लोप होताहै। यथा; जुहु + अन्ति = जुहुति, जुहु + अन्तु = जुहुतु।

११ अभ्यस्त धातु के परस्थित लङ्के अन् के स्थानमे उः होताहै। वह उः परे होनेसे अन्त्य स्वर को गुण होताहै; यथा, अजुहु + अन् = अजुहवुः।

(१) जिनधातुओंका द्वित्व होजाताहै उन्हें और जक्षादिको अभ्यस्त कहते हैं।

१२ लङ्, लुङ्, और ऌङ्, विभक्ति परे होनेसे धातु के आदिमे अकार होताहै। यथा, अभवत्, अभूत्, अभविष्यत्। परन्तु मा और मास्म शब्द के योग मे नहिं होता। यथा, मा भवत्। मास्मभूत्।

१३ लङ्, लुङ्, और ऌङ्, विभक्तियों मे धातु के आदिस्थित इ ई के स्थान मे ऐ, उ ऊ के स्थान मे औ, और ऋ के स्थान मे आर् होताहै। यथा, (इन्द) ऐन्दीत्, (ईह) ऐहिष्ट, (उख) औखीत्, (ऊह) औहिष्ट, (ऋच्छ) आर्छत्। परन्तु मा और मास्म शब्द के योगमे नहिं होता; यथा, मा ईहिष्ट, मास्म ऋच्छत्।

१४ व्यञ्जन वर्णसे परे लङ् केत्, और :, इन दोनो विभक्तियों का लोप होताहै। यथा; अवेद् + त् = अवेत्।

१५ स्वर परे होनेसे धातुके अन्तस्थित इ, ई, के स्थानमे इय् और उ, ऊ, के स्थानमे उव् होताहै[१] (१ भा॰ २८ पृ॰ १ प॰)। यथा; अधि + इ + अते = अधीयते, इ + आय = इयाय, स्तु + अन्ति = स्तुवन्ति, उ + औष = उवोष।

१६ जिस धातुमे एकसे अधिक स्वर हों[२] उस्के इ ई के स्थानमे इय् नहिं होता[३]। यथा; दि धी + आते = दिध्याते, निनी + ए = निन्ये। (१ भा॰ २९ पृ॰ ५ प॰ देखो)

१७ च्, छ्, ज्, श, ष्, द्, ह्[४], व्, इन सब वर्णोंसे परे स होनेसे दोनो मिलकर क्ष होजाताहै। यथा; वच् + स्यति = वक्ष्यति, प्रच्छ + स्यति = प्रक्ष्यति, यज + स्यति = यक्ष्यति, वश + सि = वक्षि, द्वेष + सि = द्वेक्षि, चक्ष + से = चक्षे, रोह + स्यति = रोक्ष्यति, जक्ष् + सन्तः = जक्षन्तः

१८ छ अथवा श[५] ष् के परे त होनेसे दोनो मिलकर ष्ट होताहै और थ होनेसे ष्ठ होताहै। यथा; प्रच्छ + ता = प्रष्टा, द्रश + ता = द्रष्टा, दद्रश + थ = दद्रष्ठ।

१९ क्ष्, श, ष, ह से परे ध् होनेसे, क्ष् श ष् ह के स्थानमे ड् और ध के स्थानमे ढ् होताहै। यथा; अप्रक्ष् + ध्वम् = अप्रड्ढ्वम्, अवेश + ध्वम् =

(१) जो गुण वृद्धि होने वाले धातु हों तो नहिं होता। (२) अभ्यस्त होनेसे जो एकसे अधिक स्वर विशिष्ट होजावे तो उसका भी इस नियम मे ग्रहण है (पर इ धातु को छोड़कर) (३) इ ई संयुक्त वर्णोंमे मिले होनेसे इय् होताहै। (४) पर नह के हकारको ध होताहै त, थ, ध, स परे होनेसे। (५) व्रश्च के च् का लोप होताहै तादि परे होनेसे।

अवेड्ढम्, अवेष + ध्वम् = अवेड्ढम्, चन्न + ध्वे = चड्ढे।

२० च्, ज्, के स्थानमे क् होताहै त्[1] अथवा थ् परे होनेसे, और ग् होताहै ध् परे होनेसे। यथा; मोच् + ता = मोक्ता, योज् + ता = योक्ता, भिज्+ध्वे=भिग्ध्वे

२१ परन्तु स्रज्, सृज्, यज्भस्ज इन धातुओंके जकार से परे त् होनेसे दोनो मिलकर ष्ट होताहै, थ होने से ष्ठ होताहै, और जो ध् हो, तो ज् के स्थान मे ड् और ध् के स्थानमे ढ होताहै। यथा; यज + ता = यष्टा, असृज् + था: = असृष्ठा:; अयज् + ध्वं = अयड्ढम्, भ्रस्ज + ता = भ्रष्टा॥

२२ हकारसे परे त्, थ्, ध्, के स्थानमे ढ होताहै और हकार का लोप होताहै। लुप्तहकारके पूर्वस्थित ह्रस्व स्वर[2] दीर्घ होते हैं[3] यथा; अगुह + त: = अगूढ:, लिह + त: = लीढ:।

२३ परन्तु दह्, दिह्, उह्, धातुओंके हकारसे परे त्, थ्, अथवा ध् होनेसे, दोनो मिलकर ग्ध् होताहै। यथा; दह् + ता = दग्धा, दिह् + ता = दिग्धा, उह् + ता = उग्धा, अदह् + था: = अदग्धा:।

२४ और मुह्, द्रुह्, स्नुह्, स्निह् धातुओं के हकारसे परे त्, थ्, अथवा ध् होने से दोनो मिलकर ग्ध होताहै; अथवा हकार का लोप होताहै, और त् थ्, ध्, के स्थानमे ढ होताहै, और लुप्त हकारका पूर्व स्थित ह्रस्व स्वर दीर्घ होताहै। यथा; मुह् + त: = मुग्ध:, मूढ:।

२५ विभक्ति का स् अथवा ध्[4] परे होनेसे, अथवा विभक्ति का लोप होने से, धातुके आदि ग्, द्, ब्, को यथाक्रम घ्, ध्, भ्, होताहै जो उसका अन्त्यवर्ण ह, ध, (वा) भ् हो। यथा; गाह् + स्यते = घात्स्यते, दह् + स्यति = धत्स्यति, दम्भ् + सति = धीप्सति, बुध् + स्यते = भोत्स्यते।

२६ स् को त् होताहै ऌट्, ऌङ्, लुङ् और स्यत् स्यत्प्रत्ययके स् परे होनेसे और द् अथवा लोप होताहै विभक्ति का ध् परे होनेसे यथा वस् + स्यामि = वत्स्यामि, असेविस् + ध्वम् = असेविड्ढम् (वा) असेविध्वम्।

२७ धकारसे परे त् थ् अथवा ध् होने से दोनो मिलकर द्ध होताहै। यथा, सिध् + तम् = सिद्धम्।

२८ भकार से परे त् थ् अथवा ध् होनेसे दोनो मिलकर ब्ध होताहै। यथा,

(१) मज्जके अन्त्य ज् का लोप होताहै तादि परे होनेसे। (२) ऋकार भिन्न। यथा; तृह् + त = तृढ।
(३) सह और वह धातुओंके लुप्त हकारके पूर्ववर्ती अकारको ओकार होताहै। (४) अन्त्यवर्ण का स्थानी ध होनेसे यह कार्य्य नहि होगा। यथा उद्ध + रि = उभ्यि॥

आरभ् + नम् = आरब्धम्, लभ् + नम् = लब्धम्।

२९ दको त् होताहै त थ स परे होनेसे। यथा; वेद् + ता = वेत्ता, विद् + थः = वित्थ, छेद् + स्यति = छेत्स्यति।

३० ध को त् और भ् को प् होताहै स परे होनेसे। यथा; सेध् + स्यति = सेत्स्यति, लभ् + स्यते = लप्स्यते।

३१ उत् उपसर्गसे परे स्था और स्तम्भ धातुके स को लोप होताहै यथा; उत्थानम्, उत्तम्भनम्।

३२ पदान्त र् और स् के स्थानमे :(विसर्ग) होताहै।

३३ पदान्त वर्ग के तृतीय और चतुर्थ वर्ण के स्थानमे प्रथम वर्ण होताहै।

३४ पदान्त च् और ज् के स्थानमे क् होताहै(१)

३५ पदान्त छ् श ष् और ह् के स्थानमे ट् होताहै।

३६ परन्तु दकारादि धातुके पदान्त ह् के स्थान मे क् होताहै।

३७ लट्, लोट्, लङ्, विधि लिङ्, भिन्न विभक्तियोंमे एकारान्त, ऐकारान्त, और ओकारान्त धातु आकारान्त होजाते हैं।

कर्तृवाच्य

कर्तृ वाच्यमे धातु तीन प्रकारके होते हैं; परस्मैपदी, आत्मनेपदी और उभयपदी। परस्मैपदी धातुके उत्तर परस्मैपद की विभक्तियें लगती हैं, आत्मनेपदी धातुके उत्तर आत्मनेपद की, और उभयपदीके उत्तर उभयपदकी। कर्तृवाच्य होने से कर्तृ पदमे विभक्ति का जो वचन हो क्रिया पदमे भी विभक्तिका वहि वचन होताहै।

लट्, लोट्, लङ्, (विधि)लिङ्

लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ्, इन चारों विभक्तियों मे प्रत्येक गणकी धातुओंके भिन्न २ प्रकार रूप होतेहैं इसी निमित्त इन चारों विभक्तियोंमे हर एक गण के धातुओंके रूप पृथक् पृथक् दिखलाये जावेंगे, और २ विभक्तियों मे गण भेद हेतुक रूपका भेद नहिं होता, इसी लिये उन प्रत्येक विभक्तियों मे सब गणके धातुओंके रूप इकट्ठे दिखाये जावेंगे।

(१) परन्तु पदान्त सृजधातुके ज के स्थानमे ट् होताहै।

तुदादिगण

३८ लङादि चारों विभक्तियों मे तुदादिगणीय धातुओं के उत्तर अ होता है। अकार अन्त्य वर्ण मे मिलजाता है।

स्पृश धातु (परस्मैपदी) अर्थ, छूना

विभक्ति	प्रथम पुरुष ए.	द्वि.	ब.	मध्यम पुरुष ए.	द्वि.	ब.	उत्तम पुरुष ए.	द्वि.	ब.
लट्	स्पृशति	स्पृशतः	स्पृशन्ति	स्पृशसि	स्पृशथः	स्पृशथ	स्पृशामि	स्पृशावः	स्पृशामः
लोट्	स्पृशतु	स्पृशतां	स्पृशन्तु	स्पृश	स्पृशतं	स्पृशत	स्पृशानि	स्पृशाव	स्पृशाम
लङ्	अस्पृशत्	अस्पृशतां	अस्पृशन्	अस्पृशः	अस्पृशतं	अस्पृशत	अस्पृशम्	अस्पृशाव	अस्पृशाम
विधिलि	स्पृशेत्	स्पृशेताम्	स्पृशेयुः	स्पृशेः	स्पृशेतम्	स्पृशेत	स्पृशेयम्	स्पृशेव	स्पृशेम

उ.

विज् धातु (आत्मनेपदी) अर्थ, भयकाना और चलना

विभक्ति									
लट्	विजते	विजेते	विजन्ते	विजसे	विजेथे	विजध्वे	विजे	विजावहे	विजामहे
लोट्	विजताम्	विजेताम्	विजन्तां	विजस्व	विजेथां	विजध्वम्	विजै	विजावहै	विजामहै
लङ्	अविजत	अविजेतां	अविजन्त	अविजथाः	अविजेथां	अविजध्वं	अविजे	अविजावहि	अविजामहि
विधिलि	विजेत	विजेयातां	विजेरन्	विजेथाः	विजेयाथां	विजेध्वम्	विजेय	विजेवहि	विजेमहि

उ.

तुद् धातु (उभयपदी) अर्थ, पीड़ना।

विभक्ति									
लट्	तुदति	तुदतः	तुदन्ति	तुदसि	तुदथः	तुदथ	तुदामि	तुदावः	तुदामः
	तुदते	तुदेते	तुदन्ते	तुदसे	तुदेथे	तुदध्वे	तुदे	तुदावहे	तुदामहे
लोट्	तुदतु	तुदतां	तुदन्तु	तुद	तुदतं	तुदत	तुदानि	तुदाव	तुदाम
	तुदताम्	तुदेताम्	तुदन्ताम्	तुदस्व	तुदेथां	तुदध्वम्	तुदै	तुदावहै	तुदामहै
लङ्	अतुदत्	अतुदतां	अतुदन्	अतुदः	अतुदतं	अतुदत	अतुदम्	अतुदाव	अतुदाम
	अतुदत	अतुदेतां	अतुदन्त	अतुदथाः	अतुदेथां	अतुदध्वं	अतुदे	अतुदावहि	अतुदामहि
लिङ्	तुदेत्	तुदेताम्	तुदेयुः	तुदेः	तुदेतम्	तुदेत	तुदेयम्	तुदेव	तुदेम
	तुदेत	तुदेयातां	तुदेरन्	तुदेथाः	तुदेयाथां	तुदेध्वम्	तुदेय	तुदेवहि	तुदेमहि

३९ लङादि चार विभक्तियों मे इष् धातु के स्थान मे इच्छ, प्रच्छ के स्थान मे पृच्छ, मस्ज के स्थान मे मज्ज, भ्रस्ज के स्थान मे भृज्ज, लस्ज के स्थान मे लज्ज

व्यच् के स्थानमे विच, और व्रश्च के स्थानमे वृश्च, विछ् के स्थानमे विच्छाय् और स्तृह् के स्थानमे स्तृह् होता है। यथा; इच्छति, ऋच्छति, मज्जति, भ्रज्जति, लज्जते, विचति, वृश्चति, विच्छायति, स्तृहति इत्यादि।

५० तथा मुच्, सिच्, लिप्, लुप्, कृत्, विद्, खिद्, पिश्, धातुओंके स्थानमे क्रमसे मुञ्च्, सिञ्च्, लिम्प्, लुम्प्, कृन्त्, विन्द्, खिन्द्, पिंश होते हैं। यथा; मुञ्चति इत्यादि।

५१ तथा दृ, धृ, पृ, मृ, धातुओंके ऋ के स्थानमे रिय् होता है। यथा; म्रियते इत्यादि।

५२ तथा कॄ, गॄ, धातुओंके ॠके स्थानमे इर् होता है। यथा; किरति इत्यादि[(१)] (ति) तियति इत्यादि। (धु) धुवति (कु) कुवते (धू) धुवति (ऋच्छ्) ऋच्छति (मिच्छ्) मिच्छति। (ओख) ओखति (लङ्मे) औखत् इत्यादि।

भ्वादिगण

५३ लडादि चार विभक्तियों मे भ्वादि गणीय धातुओंके उत्तर अ होता है (अ अन्त्यवर्णमे मिलजाता है)

	प्र. पुरुष			म. पुरुष			उ. पुरुष		
	ए.	द्वि.	ब.	ए.	द्वि.	ब.	ए.	द्वि.	ब.

वद (पं) बोलना

लट्	वदति	वदतः	वदन्ति	वदसि	वदथः	वदथ	वदामि	वदावः	वदामः
लोट्	वदतु	वदताम्	वदन्तु	वद	वदतम्	वदत	वदानि	वदाव	वदाम
लङ्	अवदत्	अवदताम्	अवदन्	अवदः	अवदतम्	अवदत	अवदम्	अवदाव	अवदाम
लिङ्	वदेत्	वदेताम्	वदेयुः	वदेः	वदेतम्	वदेत	वदेयम्	वदेव	वदेम

सेव (आत्) सेवाकरना

लट्	सेवते	सेवेते	सेवन्ते	सेवसे	सेवेथे	सेवध्वे	सेवे	सेवावहे	सेवामहे
लोट्	सेवताम्	सेवेताम्	सेवन्ताम्	सेवस्व	सेवेथाम्	सेवध्वम्	सेवै	सेवावहै	सेवामहै
लङ्	असेवत	असेवेताम्	असेवन्त	असेवथाः	असेवेथाम्	असेवध्वम्	असेवे	असेवावहि	असेवामहि
लिङ्	सेवेत	सेवेयाताम्	सेवेरन्	सेवेथाः	सेवेयाथाम्	सेवेध्वम्	सेवेय	सेवेवहि	सेवेमहि

(१) गॄ के रकारको लत्वभी होजाता है परन्तु [illegible] अतएव इसके दो दो रूप होते हैं यथा गिरति (वा) गिलति इत्यादि।

त्रै (आत्) पालना

लट् त्रायते त्रायेते त्रायन्ते त्रायसे त्रायेथे त्रायध्वे त्राये त्रायावहे त्रायामहे

	प्रथम पुरुष			मध्यम पुरुष			उत्तम पुरुष	
ए.	द्वि.	ब.	ए.	द्वि.	ब.	ए.	द्वि.	ब.

धाव (उभ) दौड़ना

लट् धावति धावतः धावन्ति धावसि धावथः धावथ धावामि धावावः धावामः

धावते धावेते धावन्ते धावसे धावेथे धावध्वे धावे धावावहे धावामहे

४४ लङादि चार विभक्तियों मे भ्वादि गणीय धातुओं के अन्त्य स्वर और लघु[2] उपधा[3] को गुण हो जाता है॥

जि (पं) जयति जयतः जयन्ति जयसि जयथः जयथ जयामि जयावः जयामः

भू (पं) भवति भवतः भवन्ति भवसि भवथः भवथ भवामि भवावः भवामः

स्मृ (पं) स्मरति स्मरतः स्मरन्ति स्मरसि स्मरथः स्मरथ स्मरामि स्मरावः स्मरामः

दे (आत्) दयते दयेते दयन्ते दयसे दयेथे दयध्वे दये दयावहे दयामहे

सिधु[4] (पं) सेधति सेधतः सेधन्ति सेधसि सेधथः सेधथ सेधामि सेधावः सेधामः

शुच (पं) शोचति शोचतः शोचन्ति शोचसि शोचथः शोचथ शोचामि शोचावः शोचामः

वृत (आत्) वर्तते वर्तेते वर्तन्ते वर्तसे वर्तेथे वर्तध्वे वर्ते वर्तावहे वर्तामहे

४५ लङादि चार विभक्तियों मे रन्ज्, सन्ज्, स्वन्ज्, दन्श् धातुओं के नकार का लोप होजाता है। यथा; रजति, रजते, सजति, स्वजते, दशति, इत्यादि।

४६ तथा निम्नलिखित धातु रूपान्तरापन्न हो जाते हैं। यथा;

धातु	निर्विभक्तिक रूप	सविभक्तिक रूप
दृश्	पश्य	पश्यति
सद्	सीद	सीदति
शद्	शीय	शीयते
ष्ठिवु	ष्ठीव	ष्ठीवति

(१) लोट् के मध्यम पुरुष के एक वचन मे त्रायस्व और त्रायहि दोनो इष्ट होते हैं।

(२) ह्रस्व स्वर को लघु कहते हैं और दीर्घ को गुरु। अनुस्वार, विसर्ग अथवा संयुक्त वर्ण परे होने से ह्रस्वस्वर भी गुरु कहलाता है। (३) शब्द के अन्त्य वर्ण से पूर्व वर्ण को उपधा कहते हैं। (४) धातु पाठ मे इस धातु को षिधु लिखा है, पर सारे धातु जिनके आदि मे षकार णकार है उनके उस ष को स और ण को न होजाता है इसलिये यहां षादि धातु को सादि और णादि को नादि समझा गया है॥

पा	पिब	पिबति
ध्मा	धम	धमति
म्ना	मन	मनति
क्रम् (परस्मै०)	क्राम (वा) क्राम्य	क्रामति, क्राम्यति
गुह्	गूह्	गूहति — ते
गम्	गच्छ	गच्छति
दा	यच्छ	यच्छति
यम	यच्छ	यच्छति
ऋ	ऋच्छ	ऋच्छति, आर्च्छत् (लङ्)
कृप्	कल्प	कल्पते
सञ्ज	सज्ज	सज्जति। ते
स्था	तिष्ठ	तिष्ठति
कित्	चिकित्स	चिकित्सति
गुप् (निन्दायाम्)	जुगुप्स	जुगुप्सते
तिज (सहने)	तितिक्ष	तितिक्षते
बध्	बीभत्स	बीभत्सते
घ्रा	जिघ्र	जिघ्रति
मान्	मीमांस	मीमांसते
कम्	कामय	कामयते
गुप् (रक्षणे)	गोपाय	गोपायति
पण (स्तुतौ)	पणाय	पणायति
पन	पनाय	पनायते
धूप	धूपाय	धूपायति
विच्छ्	विच्छाय	विच्छायति
ऋत्	ऋतीय	ऋतीयते

१७ तथा सृधातुको विकल्पकरके धावभी होताहै। यथा; सरति, धावति

१८ तथा क्रम (आत्) को क्रम्यभी होताहै। यथा; क्रमते, क्रम्यते

४९ तथा आ उपसर्ग के योगमे चम् धातुके स्थानमे चाम् होता है।
यथा, आचामति इत्यादि।

५० जिन धातुओं की उपधामे उर् हो उनकी उ को दीर्घ होता है। यथा
(कुर्द) कूर्दते, इत्यादि।
(मङ्क)[१] मङ्कते, इत्यादि
(लभि) लम्भते, इत्यादि।
(थोर्ऋ) थोरति, इत्यादि।

दिवादिगण

५१ लङादि चार विभक्तियोंमे दिवादि गणीय धातुओंके उत्तर य आगम होता है।

नृत् (प) नाचना

	प्र०			म०			उ०		
लट्	नृत्यति	नृत्यतः	नृत्यन्ति	नृत्यसि	नृत्यथः	नृत्यथ	नृत्यामि	नृत्यावः	नृत्यामः
लोट्	नृत्यतु	नृत्यताम्	नृत्यन्तु	नृत्य	नृत्यतम्	नृत्यत	नृत्यानि	नृत्याव	नृत्याम
लङ्	अनृत्यत्	अनृत्यतां	अनृत्यन्	अनृत्यः	अनृत्यतं	अनृत्यत	अनृत्यम्	अनृत्याव	अनृत्याम
लिङ्	नृत्येत्	नृत्येताम्	नृत्येयुः	नृत्येः	नृत्येतम्	नृत्येत	नृत्येयम्	नृत्येव	नृत्येम

विद् (आत्म) होना, विद्यमानता

लट्	विद्यते	विद्येते	विद्यन्ते	विद्यसे	विद्येथे	विद्यध्वे	विद्ये	विद्यावहे	विद्यामहे
लोट्	विद्यताम्	विद्येताम्	विद्यन्ताम्	विद्यस्व	विद्येथां	विद्यध्वम्	विद्यै	विद्यावहै	विद्यामहै
लङ्	अविद्यत	अविद्येतां	अविद्यन्त	अविद्यथाः	अविद्येथां	अविद्यध्वं	अविद्ये	अविद्यावहि	अविद्यामहि
लिङ्	विद्येत	विद्येयातां	विद्येरन्	विद्येथाः	विद्येयाथां	विद्येध्वम्	विद्येय	विद्येवहि	विद्येमहि

५२ लङादि चार विभक्तियोंमे दिव, सिव, स्रिव, जन, व्यध, मिद, धातुओं के स्थानमे यथाक्रम दीव, सीव, स्रीव, जा, विध, मेद, होते हैं। यथा, दीव्यति, सीव्यति, स्रीव्यति, जायते, विध्यति, मेद्यति इत्यादि।

(१) धातुपाठमे यह धातु "मकि" कहागया है। इ अनुबन्ध वाले सारे धातुओं की उपधामे न् आजाता है; इसलिये यहां भी क के पूर्व न् हुआ और न् का सन्धिके नियमानुसार ङ् होगया; अतएव सिद्ध रूप मङ्क हुआ। इसी प्रकार सब इदित धातुओं मे जानना॥

५३ तथा (दिवादिगणीय) ॠकारान्त धातुओंके ॠके स्थानमे ईर होता है। यथा (जॄ) जीर्य्यति; (दॄ) दीर्य्यति॥

५४ तथा शमादि[1] धातुओंके अकार के स्थान मे आकार होता है। यथा; शाम्यति इत्यादि। भ्रमको विकल्प करके। यथा; भ्राम्यति (वा) भ्रम्यति।

५५ तथा ———————— ओकारान्त धातुओंके ओकारका लोप होता है। यथा; (सो) स्यति, स्यतः, स्यन्ति।

५६ तथा भ्रंश के अनुस्वार का लोप होता है। यथा; भ्रश्यति (रन्ज्) रज्यति[2], रज्यते। (मा) मायते। (अस्) अस्यति, आस्यत (तङ्.) (ई) ईयते, ऐयत (तङ्.) (ऋध्) ऋध्यति, आर्ध्यत (तङ्.)

स्वादिगण

५७ लङादि चार विभक्तियोंमे स्वादि गणीय धातुओंके उनु उ होता है।

५८ ति, सि, मि, तु, आनि, आव, आम, ऐ, आवहै, आमहै, त, :, अम ये विभक्तियें परे होनेसे नु को नो होता है।

सु (उभय) क्लटना

	प्र.			म.			उ.		
लट्	सुनोति	सुनुतः	सुन्वन्ति	सुनोषि	सुनुथः	सुनुथ	सुनोमि	सुनुवः[3]	सुनुमः
	सुनुते	सुन्वाते	सुन्वते	सुनुषे	सुन्वाथे	सुनुध्वे	सुन्वे[2]	सुनुवहे	सुनुमहे
लोट्	सुनोतु	सुनुताम्	सुन्वन्तु	सुनु	सुनुतम्	सुनुत	सुनवानि	सुनवाव	सुनवाम
	सुनुताम्	सुन्वाताम्	सुन्वताम्	सुनुष्व	सुन्वाथाम्	सुनुध्वम्	सुनवै	सुनवावहै	सुनवामहै
लङ्	असुनोत्	असुनुतां	असुन्वन्	असुनोः	असुनुतम्	असुनुत	असुनवम्	असुनुव[3]	असुनुम[3]
	असुनुत	असुन्वातां	असुन्वत	असुनुथाः	असुन्वाथां	असुनुध्वं	असुन्वि	असुनुवहि	असुनुमहि
लिङ्	सुनुयात्	सुनुयातां	सुनुयुः	सुनुयाः	सुनुयातं	सुनुयात	सुनुयाम्	सुनुयाव	सुनुयाम
	सुन्वीत	सुन्वीयातां	सुन्वीरन्	सुन्वीथाः	सुन्वीयाथां	सुन्वीध्वं	सुन्वीय	सुन्वीवहि	सुन्वीमहि

(१) शम्, श्रम्, तम्, त्तम्, दम्, क्लम्, मद्। (२) ४५ वां नियम देखो। (३) नु व्यञ्जन वर्णोमे मिलित न होवे तो उसे उकारका विकल्प करके लोप होता है व् म् परे होनेसे यथा सुन्वः; सुन्मः; सुन्वहे, सुन्महे, असुन्व, असुन्म, असुन्वहि, असुन्महि।

५९ जो उ धातुके अन्यवर्ण के साथ संयुक्त हो तो आनि, आव, आम, ए, आवहै, आमहै, अम्, इनके सिवा विभक्तिका स्वर वर्ण परे होनेसे उ के स्थानमे उव् होता है॥

आप् (ल) व्याप्ति

	प्र.			म.			उ.		
लट्	आप्नोति	आप्नुतः	आप्नुवन्ति	आप्नोषि	आप्नुथः	आप्नुथ	आप्नोमि	आप्नुवः	आप्नुमः
लोट्	आप्नोतु	आप्नुताम्	आप्नुवन्तु	आप्नुहि	आप्नुतम्	आप्नुत	आप्नवानि	आप्नवाव	आप्नवाम
लङ्	आप्नोत्	आप्नुताम्	आप्नुवन्	आप्नोः	आप्नुतम्	आप्नुत	आप्नवम्	आप्नुव	आप्नुम
लिङ्	आप्नुयात्	आप्नुयाताम्	आप्नुयुः	आप्नुयाः	आप्नुयातम्	आप्नुयात	आप्नुयाम्	आप्नुयाव	आप्नुयाम

अश् (आत्म) व्याप्ति

लट्	अश्नुते	अश्नुवाते	अश्नुवते	अश्नुषे	अश्नुवाथे	अश्नुध्वे	अश्नुवे	अश्नुवहे	अश्नुमहे
लोट्	अश्नुताम्	अश्नुवाताम्	अश्नुवताम्	अश्नुष्व	अश्नुवाथाम्	अश्नुध्वम्	अश्नवै	अश्नवावहै	अश्नवामहै
लङ्	आश्नुत	आश्नुवाताम्	आश्नुवत	आश्नुथाः	आश्नुवाथाम्	आश्नुध्वम्	आश्नुवि	आश्नुवहि	आश्नुमहि
लिङ्	अश्नुवीत	अश्नुवीयाताम्	अश्नुवीरन्	अश्नुवीथाः	अश्नुवीयाथाम्	अश्नुवीध्वम्	अश्नुवीय	अश्नुवीवहि	अश्नुवीमहि

६० लङादि चार विभक्तियोंमे श्रु(१) धातुके स्थानमे श्रृ, धिवि(२) के स्थानमे धि, और कृ व के स्थानमे कृ होता है। यथा; शृणोति धिनोति कृणोति।

६१ तथा ——— दम्भ्, स्कम्भ्, स्तम्भ्, स्कुम्भ्, और स्तुम्भ धातुओंके म् का लोप होता है उ परे होनेसे। यथा; दभ्नोति इत्यादि।

तनादि गण

६२ लङादि चार विभक्तियोंमे तनादिगणीय धातुके उत्तर उ होता है, और वह उ अन्त्य वर्णमे मिलजाता है।

६३ ति, सि, मि, तु, आनि, आव, आम, ए, आवहै, आमहै, त्, :, अम्, ये विभक्तियें परे होने से उ के स्थान मे ओ होता है।

(१) पाणिनीय धातुपाठ मे श्रु धातु को भ्वादि गणमे पढ़ा है, पर इसके रूप स्वादि की तरह होनेसे यहां यह स्वादिगणमे नहीं लिखा हुआ है॥

(२) धिव्, कृव धातु धातुपाठमे भ्वादि पठित की गई हैं पर इदित होनेसे भी लङादि चार विभक्तियोंमे इनके व के इत्व न नहि होता॥

तन् (उभ) विस्तारकरना

	प्र.			म.			उ.		
लट्	तनोति	तनुतः	तन्वन्ति	तनोषि	तनुथः	तनुथ	तनोमि	तनुवः[१]	तनुमः
	तनुते	तन्वाते	तन्वते	तनुषे	तन्वाथे	तनुध्वे	तन्वे	तनुवहे	तनुमहे
लोट्	तनोतु	तनुताम्	तन्वन्तु	तनु	तनुतम्	तनुत	तनवानि	तनवाव	तनवाम
	तनुताम्	तन्वाताम्	तन्वताम्	तनुष्व	तन्वाथाम्	तनुध्वम्	तनवै	तनवावहै	तनवामहै
लङ्	अतनोत्	अतनुतां	अतन्वन्	अतनोः	अतनुतं	अतनुत	अतनवम्	अतनुव	अतनुम
	अतनुत	अतन्वातां	अतन्वत	अतनुथाः	अतन्वाथां	अतनुध्वं	अतन्वि	अतनुवहि	अतनुमहि
लिङ्	तनुयात्	तनुयातां	तनुयुः	तनुयाः	तनुयातं	तनुयात	तनुयाम्	तनुयाव	तनुयाम
	तन्वीत	तन्वीयातां	तन्वीरन्	तन्वीथाः	तन्वीयाथां	तन्वीध्वं	तन्वीय	तन्वीवहि	तन्वीमहि

कृ (उभय) करना

६४ ति, सि, मि, तु, आनि, आव, आम, ऐ, आवहै, आमहै, त्, :, अम्, ये विभक्तियें परे होने से कृ धातु के स्थानमें कर् होता है; अन्य विभक्तियें परे होने से कुर् होता है॥

६५ विभक्ति का म् (मि भिन्न) य व् परे होनेसे कृ धातु के परस्थित उकार का लोप होता है॥

लट्	करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति	करोषि	कुरुथः	कुरुथ	करोमि	कुर्वः	कुर्मः
	कुरुते	कुर्वाते	कुर्वते	कुरुषे	कुर्वाथे	कुरुध्वे	कुर्वे	कुर्वहे	कुर्महे
लोट्	करोतु	कुरुताम्	कुर्वन्तु	कुरु	कुरुतम्	कुरुत	करवाणि	करवाव	करवाम
	कुरुताम्	कुर्वाताम्	कुर्वतां	कुरुष्व	कुर्वाथां	कुरुध्वम्	करवै	करवावहै	करवामहै
लङ्	अकरोत्	अकुरुतां	अकुर्वन्	अकरोः	अकुरुतं	अकुरुत	अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म
	अकुरुत	अकुर्वातां	अकुर्वत	अकुरुथाः	अकुर्वाथां	अकुरुध्वं	अकुर्वि	अकुर्वहि	अकुर्महि
लिङ्	कुर्यात्	कुर्यातां	कुर्युः	कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात	कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम
	कुर्वीत	कुर्वीयातां	कुर्वीरन्	कुर्वीथाः	कुर्वीयाथां	कुर्वीध्वं	कुर्वीय	कुर्वीवहि	कुर्वीमहि

६६ लआदि चार विभक्तियों में धातु के उपधा इ, उ, ऋ को विकल्प करके गुण होता है। यथा; (क्षिण) क्षिणोति (वा) क्षेणोति, क्षिणुते (वा) क्षेणुते (ऋण) ऋणोति (वा) अर्णोति॥

(१) जो उ संयुक्त वर्णसे भिन्न [illegible] उसका विकल्प करके लोप होता है। यथा; तन्वः तन्मः इत्यादि।

क्र्यादि गण

६७ लडादि चार विभक्तियोंमे क्र्यादि गणीय धातु के उत्तर ना आगम होताहै।

६८ अम् भिन्न स्वर वर्ण परे होनेसे ना के आकार का लोप होताहै॥

६९ ति, सि, मि, तु, त्, :, भिन्न व्यञ्जन वर्ण परे होनेसे ना के स्थानमे नी होताहै।

क्री (उभय) मोललेना

लट्	क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति	क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ	क्रीणामि	क्रीणीवः	क्रीणीमः
	क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते	क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे	क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे
लोट्	क्रीणातु	क्रीणीताम्	क्रीणन्तु	क्रीणीहि	क्रीणीतम्	क्रीणीत	क्रीणानि	क्रीणाव	क्रीणाम
	क्रीणीताम्	क्रीणाताम्	क्रीणताम्	क्रीणीष्व	क्रीणाथाम्	क्रीणीध्वम्	क्रीणै	क्रीणावहै	क्रीणामहै
लङ्	अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्	अक्रीणाः	अक्रीणीतम्	अक्रीणीत	अक्रीणाम्	अक्रीणीव	अक्रीणीम
	अक्रीणीत	अक्रीणाताम्	अक्रीणत	अक्रीणीथाः	अक्रीणाथाम्	अक्रीणीध्वम्	अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि
लिङ्	क्रीणीयात्	क्रीणीयाताम्	क्रीणीयुः	क्रीणीयाः	क्रीणीयातम्	क्रीणीयात	क्रीणीयाम्	क्रीणीयाव	क्रीणीयाम
	क्रीणीत	क्रीणीयाताम्	क्रीणीरन्	क्रीणीथाः	क्रीणीयाथाम्	क्रीणीध्वम्	क्रीणीय	क्रीणीवहि	क्रीणीमहि

७० हि विभक्तिमे व्यञ्जन वर्णके परस्थित ना के स्थानमे आन होताहै, और हि का लोप होताहै। यथा; अशान, मुषाण, स्तभाण।

७१ लडादि चार विभक्तियोंमे ग्रह धातुके स्थानमे गृह, ज्याके स्थानमे जि ज्ञाके स्थानमे जा, और व्ली के स्थानमे व्लि होताहै। यथा; गृह्णाति, जिनाति, जानाति, व्लिनाति इत्यादि।

७२ तथा (१) प्वादि धातुओंका अन्त्यवर्ण ह्रस्व होताहै। यथा; (पू) पुना-ति (धू) धुनाति इत्यादि।

७३ तथा —— क्र्यादि गणीय धातुओंके उपधा नकार का लोप होताहै। यथा; (बन्ध) बध्नाति, (ग्रन्थ) ग्रथ्नाति, (मन्थ्) मथ्नाति

रुधादि गण

७४ लडादि चार विभक्तियोंमे रुधादि गणीय धातु के अन्त्यस्वरसे परे न आताहै।

(१) प्वादि धातु ये हैं। यथा, पू, लू, स्तृ, कृ, वृ, धू, शॄ, पॄ, वॄ, भॄ, मॄ, दॄ, जॄ, झॄ, धॄ, नॄ, कॄ, ॠ, गॄ, ज्या, री, ली, ब्ली, प्ली, वृ को विकल्प करके ह्रस्व होताहै।

८५ ति, सि, मि, तु, आनि, आव आम, ऐ, आवहै, आमहै, ते, :, अष्, इन विभक्तियोंमे न् से परे णकार होताहै।

रुध् (उभय) रोकना

लट् { रुणद्धि रुन्द्धः रुन्धन्ति रुणत्सि रुन्द्धः रुन्द्ध रुणध्मि रुन्ध्वः रुन्ध्मः
रुन्द्धे रुन्धाते रुन्धते रुन्त्से रुन्धाथे रुन्द्ध्वे रुन्धे रुन्ध्वहे रुन्ध्महे

लोट् { रुणद्धु रुन्द्धाम् रुन्धन्तु रुन्द्धि रुन्द्धम् रुन्द्ध रुणधानि रुणधाव रुणधाम
रुन्द्धाम् रुन्धाताम् रुन्धताम् रुन्त्स्व रुन्धाथाम् रुन्द्ध्वम् रुणधै रुणधावहै रुणधामहै

लङ् { अरुणत्(१)(द्) अरुन्द्धाम् अरुन्धन् अरुणत्(२) अरुन्द्धम् अरुन्द्ध अरुणधम् अरुन्ध्व अरुन्ध्म
अरुन्द्ध अरुन्धाताम् अरुन्धत अरुन्द्धाः अरुन्धाथाम् अरुन्द्ध्वम् अरुन्धि अरुन्ध्वहि अरुन्ध्महि

लिङ् { रुन्ध्यात् रुन्ध्याताम् रुन्ध्युः रुन्ध्याः रुन्ध्यातम् रुन्ध्यात रुन्ध्याम् रुन्ध्याव रुन्ध्याम
रुन्धीत रुन्धीयाताम् रुन्धीरन् रुन्धीथाः रुन्धीयाथाम् रुन्धीध्वम् रुन्धीय रुन्धीवहि रुन्धीमहि

भुज (आत्म) खाना

लट् भुङ्क्ते भुञ्जाते भुञ्जते भुङ्क्षे भुञ्जाथे भुङ्ग्ध्वे भुञ्जे भुञ्ज्वहे भुञ्ज्महे

८६ लङादि चार विभक्तियों मे धातु के उपधा न् का लोप होताहै न का आगम होने से। यथा

हिन्स (पं) हिंसा करना

लट् हिनस्ति हिंस्तः हिंसन्ति हिनस्सि हिंस्थः हिंस्थ हिनस्मि हिंस्वः हिंस्मः

८७ ति, सि, मि, तु, त, :, इन विभक्तियोंमे तृह धातुके न के स्थानमे ने होताहै।।

लट् तृणेढि तृण्ढः तृंहन्ति तृणेक्षि तृण्ढः तृण्ढ तृणेह्मि तृंह्वः तृंह्मः

(उन्द्) उनत्ति, उन्तः, उन्दन्ति, औनत् (भञ्ज) भनक्ति, भुङ्क्ते (रिच्) रिणक्ति, रिङ्क्ते (शिष्) शिनष्टि, अशिनट्

अदादि गण

अद् (पं) खाना

लट् अत्ति अत्तः अदन्ति अत्सि अत्थः अत्थ अद्मि अद्वः अद्मः
लोट् अत्तु अत्ताम् अदन्तु अद्धि अत्तम् अत्त अदानि अदाव अदाम

(१) पदान्त वर्ण यदि वर्ग का प्रथम हो तो विकल्प करके तृतीय भी होताहै।। (२) लङ् के ः विभक्ति मे धातुके अन्त स्थित द स के स्थानमे विकल्प करके र होताहै और र को : होताहै और उससे दोनों सिद्ध होतेहैं। यथा, अरुणः अरुणत्।

७८ अद् धातुके परस्थित लङ्के न् के स्थानमे अन् और : के स्थानमे अः होताहै

लङ्. आदत् आत्ताम् आदन् आदः आत्तम् आत्त आदम् आद्व आद्म

लिङ्. अद्यात् अद्याताम् अद्युः अद्याः अद्यातम् अद्यात अद्याम् अद्याव अद्याम

आस् (आत्) बैठना

लट् आस्ते आसाते आसते आस्से आसाथे आध्वे (वा) आद्ध्वे आसे आस्वहे आस्महे

लोट् आस्ताम् आसाताम् आसताम् आस्स्व आसाथाम् आध्वम् (वा) आद्ध्वम् आसै आसावहै आसामहै

लङ्. आस्त आसाताम् आसत आस्थाः आसाथाम् आध्वम् (वा) आद्ध्वम् आसि आस्वहि आस्महि

लिङ्. आसीत आसीयातां आसीरन् आसीथाः आसीयाथां आसीध्वम् आसीय आसीवहि आसीमहि

७९ आकारान्त धातुसे परस्थित लङ्के अन् के स्थानमे विकल्प करके उः होताहै, और वह उः परे होनेसे आकारका लोप होताहै ॥

या (प) प्राप्तहोना

लट् याति यातः यान्ति यासि याथः याथ यामि यावः यामः

लोट् यातु याताम् यान्तु याहि यातम् यात यानि याव याम

लङ्. अयात् अयाताम् अयुः (अयान्) अयाः अयातम् अयात अयाम् अयाव अयाम

लिङ्. यायात् यायाताम् यायुः यायाः यायातम् यायात यायाम् यायाव यायाम

८० ति, सि, मि, तु, आनि, आव, आम, ऐ, आवहै, आमहै, त, :, अम्, ई विभक्तियोंमे अदादि गणीय धातुओंके अन्त्यस्वर और उपधा लघु स्वरको गुण होताहै।

निन्ज (आत्) शुद्धकरना

लट् निङ्क्ते निञ्जाते, निञ्जते। निङ्क्षे, निञ्जाथे, निङ्ग्ध्वे। निञ्जे निञ्ज्वहे। निञ्ज्महे। लङ्. अनिङ्क्त इत्यादि।

लिङ्. निञ्जीत। लोट् निङ्क्ताम् इत्यादि।

मृज् (प) परिष्कार करना।

८१ मृज्की ऋको वृद्धि होतीहै ति, सि, मि, तु, आनि, आव, आम, ऐ, आवहै, आमहै, त, :, अम् विभक्तियोंमे। एतद्भिन्न स्वरादि विभक्तियोंमे वि-

(७८) धमित्र हलादि विभक्ति परे होनेसे स को विकल्प करके द्वित्व होताहै यथा आस्स्ते इत्यादि॥

विकल्प करके होती है।

लट् मार्ष्टि, मृष्टः, मार्जन्ति, मार्क्षि, मृष्ठः, मृष्ठ। मार्ज्मि, मृज्वः, मृज्मः
(मृजन्ति)

लङ् अमार्ट्, अमृष्टाम् अमृजन् अमार्ट् अमृष्टम् अमृष्ट अमार्जम् अमृज्व अमृज्म
(अमार्ड्, अमार्जन्)

लोट् मृड्ढि

द्विष् (पं) द्वेष करना

लट् द्वेष्टि द्विष्टः द्विषन्ति द्वेक्षि द्विष्ठः द्विष्ठ द्वेक्ष्मि द्विष्वः द्विष्मः

लोट् द्वेष्टु द्विष्टाम् द्विषन्तु द्विड्ढि द्विष्टम् द्विष्ट द्वेषाणि द्वेषाव द्वेषाम

८२ द्विष धातुके लङ् के अन्के स्थानमे विकल्प करके उः होता है॥

लङ् अद्वेट् अद्विष्टाम् अद्विषुः अद्वेट् अद्विष्टम् अद्विष्ट अद्वेषम् अद्विष्व अद्विष्म
((वा) अद्वेड्, अद्विषन्, अद्वेड्)

लिङ् द्विष्यात् द्विष्याताम् द्विष्युः द्विष्याः द्विष्यातम् द्विष्यात द्विष्याम् द्विष्याव द्विष्याम

८३ लट्, लोट्, लङ्, इनके व्यञ्जनादि विभक्ति[1] परे होनेसे रुद्, स्वप्, श्वस्, अन्, जक्ष्, धातुके उत्तर इ होती है॥

रुद (पं) रोना

लट् रोदिति रुदितः रुदन्ति रोदिषि रुदिथः रुदिथ रोदिमि रुदिवः रुदिमः

लोट् रोदितु रुदिताम् रुदन्तु रुदिहि रुदितम् रुदित रोदानि रोदाव रोदाम

८४ रुदादि धातुओंके लङ् के त् के स्थानमे ईत्, अत्, और :, के स्थानमे ईः, और "अः" होता है॥

लङ् अरोदीत् अरुदिताम् अरुदन् अरोदीः अरुदितम् अरुदित अरोदम् अरुदिव अरुदिम
(अरोदत्, अरोदः)

लिङ् रुद्यात् रुद्याताम् रुद्युः रुद्याः रुद्यातम् रुद्यात रुद्याम् रुद्याव रुद्याम

८५ लडादि चार विभक्तियोंमे जक्ष, जागृ, दरिद्रा, चकास, शास, इन पांच धातुओंकी अभ्यस्त संज्ञा होती है।

लट् जक्षिति जक्षितः जक्षति जक्षिषि, जक्षिथः जक्षिथ, जक्षिमि, जक्षिवः, जक्षिमः

लोट् जक्षितु जक्षिताम् जक्षतु जक्षिहि जक्षितम् जक्षित जक्षाणि जक्षाव जक्षाम

लङ् अजक्षीत् अजक्षिताम् अजक्षुः अजक्षीः अजक्षितम् अजक्षित अजक्षम् अजक्षिव अजक्षिम
(अजक्षत्, अजक्षः)

लिङ् जक्ष्यात् जक्ष्याताम् जक्ष्युः जक्ष्याः जक्ष्यातम् जक्ष्यात जक्ष्याम् जक्ष्याव जक्ष्याम

जागृ (पं) जागना

लट् जागर्ति जागृतः जाग्रति जागर्षि जागृथः जागृथ जागर्मि जागृवः जागृमः

(१) लङ् का "त्" "और" "सि" ॥

लोट् जागर्तु जागृताम् जाग्रतु जागृहि जागृतम् जागृत जागराणि जागराव जागराम

लङ् अजागः अजागृताम् अजागरुः अजागः अजागृतम् अजागृत अजागरम् अजागृव अजागृम

लिङ् जागृयात् जागृयाताम् जागृयुः जागृयाः जागृयातम् जागृयात जागृयाम् जागृयाव जागृयाम

दरिद्रा (पं) दरिद्र होना

८६ ति, सि, मि, तु, त, :, भिन्न व्यञ्जनादि विभक्ति परे होनेसे दरिद्रा धातुके आ के स्थानमे इ होताहै।

८७ अन्ति, अन्तु, अन्, विभक्तियोंमे दरिद्रा धातुके आकारका लोप होताहै॥

लट् दरिद्राति दरिद्रितः दरिद्रति दरिद्रासि दरिद्रिथः दरिद्रिथ दरिद्रामि दरिद्रिवः दरिद्रिमः

लोट् दरिद्रातु दरिद्रिताम् दरिद्रतु दरिद्रिहि दरिद्रितम् दरिद्रित दरिद्राणि दरिद्राव दरिद्राम

लङ् अदरिद्रात् अदरिद्रिताम् अदरिद्रुः अदरिद्राः अदरिद्रितम् अदरिद्रित अदरिद्राम् अदरिद्रिव अदरिद्रिम

लिङ् दरिद्रियात् दरिद्रियाताम् दरिद्रियुः दरिद्रियाः दरिद्रियातम् दरिद्रियात दरिद्रियाम् दरिद्रियाव दरिद्रियाम

चकास् (पं) दीप्ति

लट् चकास्ति चकास्तः चकासति चकास्सि चकास्थः चकास्थ चकास्मि चकास्वः चकास्मः

लोट् चकास्तु चकास्ताम् चकासतु चकाद्धि (वा) चकाधि चकास्तम् चकास्त चकासानि चकासाव चकासाम

८८ चकास, शास धातुओंके स का लोप अथवा द होताहै लङ्की त, :, विभक्तिमे

लङ् अचकात् (वा) अचकाद् अचकास्ताम् अचकासुः अचकाः (वा) अचकाद् अचकास्तम् अचकास्त अचकासम् अचकास्व अचकास्म

लिङ् चकास्यात् चकास्याताम् चकास्युः चकास्याः चकास्यातम् चकास्यात चकास्याम् चकास्याव चकास्याम

शास (पं) अनुशासन

८९ ति, सि, मि, तु, त, :, भिन्न व्यञ्जनादि विभक्ति परे होनेसे शास् धातुके स्थानमे शिष् होताहै।

लट् शास्ति शिष्टः शासति शास्सि शिष्ठः शिष्ठ शास्मि शिष्वः शिष्मः

९० हि विभक्तिके सहित शास् धातुके स्थानमे शाधि होताहै॥

लोट् शास्तु शिष्टाम् शासतु शाधि शिष्टम् शिष्ट शासानि शासाव शासाम

लङ् अशात् (अशाद्) अशिष्टाम् अशासुः अशात् (अशाः) अशिष्टम् अशिष्ट अशासम् अशिष्व अशिष्म

लिङ् शिष्यात् शिष्याताम् शिष्युः शिष्याः शिष्यातम् शिष्यात शिष्याम् शिष्याव शिष्याम

(१) आ पूर्वक शास् धातु आत्मने पद होनेसे आशास्ते (वा) आशिष्टे आदि रूप बनेंगे क्योंकि कोइयों के मतमे आत्मने पदमे भी शासको शिष् होताहै

शी (आत्) सोना

९१ लङादि चार विभक्तियों मे शी धातु के स्थान मे शे होता है॥

९२ अन्ते अन्ताम् और अन्त विभक्ति मे शी धातु के स्थान मे शेर् होता है।

लट् शेते शयाते शेरते शेषे शयाथे शेध्वे शये शेवहे शेमहे

लोट् शेताम् शयाताम् शेरताम् शेष्व शयाथाम् शेध्वम् शयै शयावहै शयामहै

लङ् अशेत अशयाताम् अशेरत अशेथाः अशयाथाम् अशेध्वम् अशयि अशेवहि अशेमहि

लिङ् शयीत शयीयाताम् शयीरन् शयीथाः शयीयाथाम् शयीध्वम् शयीय शयीवहि शयीमहि

सू (आत्) प्रसव

लट् सूते सुवाते सुवते सूषे सुवाथे सूध्वे सुवे सूवहे सूमहे

९३ लोट् की ऐ, आवहै, आमहै, विभक्तियों मे सू धातु को गुण नहि होता

लोट् सूताम् सुवाताम् सुवताम् सूष्व सुवाथाम् सूध्वम् सुवै सुवावहै सुवामहै

लङ् असूत असुवाताम् असुवत असूथाः असुवाथाम् असूध्वम् असुवि असूवहि असूमहि

लिङ् सुवीत सुवीयाताम् सुवीरन् सुवीथाः सुवीयाथाम् सुवीध्वम् सुवीय सुवीवहि सुवीमहि

इ (पं) जाना

९४ अन्ति और अन्तु विभक्तियों मे इ धातु के स्थान मे य होता है॥[1]

लट् एति इतः यन्ति[2] एषि इथः इथ एमि इवः इमः

लोट् एतु इताम् यन्तु[2] इहि इतम् इत अयानि अयाव अयाम

लङ् ऐत् ऐताम् आयन् ऐः ऐतम् ऐत आयम् ऐव ऐम

लिङ् इयात् इयाताम् इयुः इयाः इयातम् इयात इयाम् इयाव इयाम

९५ लङादि चार विभक्तियोंमे अस् और हन् धातुओं के रूप कुछ विलक्षण होते हैं। यथा;

---

(१) मा और मास्म शब्द पूर्व के होने से अन् विभक्ति मे य होता है यथा मा यन् मास्मयन्।

(२) स्मरणार्थ इ धातु के रूप भी ऐसेहि होते हैं केवल इतना विशेष है कि अन्ति, अन्तु के पूर्व इ को इय् होता है। यथा इयन्ति, इयन्तु; और यह धातु नित्य अधि उपसर्ग पूर्व कहि होता है. यथा; अध्येति इत्यादि।

अस्[1] (पं) होना

लट्	अस्ति	स्तः	सन्ति	असि	स्थः	स्थ	अस्मि	स्वः	स्मः
लोट्	अस्तु	स्ताम्	सन्तु	एधि	स्तम्	स्त	असानि	असाव	असाम
लङ्	आसीत्	आस्ताम्	आसन्	आसीः	आस्तम्	आस्त	आसम्	आस्व	आस्म
लिङ्	स्यात्	स्याताम्	स्युः	स्याः	स्यातम्	स्यात	स्याम्	स्याव	स्याम

हन् (पं) मारना

लट्	हन्ति	हतः	घ्नन्ति	हंसि	हथः	हथ	हन्मि	हन्वः	हन्मः
लोट्	हन्तु	हताम्	घ्नन्तु	जहि	हतम्	हत	हनानि	हनाव	हनाम
लङ्	अहन्	अहताम्	अघ्नन्	अहन्	अहतम्	अहत	अहनम्	अहन्व	अहन्म
लिङ्	हन्यात्	हन्याताम्	हन्युः	हन्याः	हन्यातम्	हन्यात	हन्याम्	हन्याव	हन्याम

विद् (पं) जानना

लट्	वेत्ति	वित्तः	विदन्ति[2]	वेत्सि	वित्थः	वित्थ	वेद्मि	विद्वः	विद्मः[3]
लोट्	वेत्तु	वित्ताम्	विदन्तु	विद्धि	वित्तम्	वित्त	वेदानि	वेदाव	वेदाम[4]

८६ विद धातु से लङ् के अन् के स्थानमे विकल्प करके उः होताहै

लङ्	अवेत् अवेद्	अवित्ताम्	अविदुः अविदन्	अवेः[5]	अवित्तम्	अवित्त	अवेदम्	अविद्व	अविद्म
लिङ्	विद्यात्	विद्याताम्	विद्युः	विद्याः	विद्यातम्	विद्यात	विद्याम्	विद्याव	विद्याम

(१) अस् धातु केवल लडादि चार विभक्तियोंमे होता है; और विभक्तियोंमे यह भू होजाता है (लिट् मे आयन्त प्रत्ययि धातुके ऊपर भी अस् धातु लगताहै जिसका वर्णन आगे होगा) उपसर्ग विशेषके योगमे अस् धातु आत्मनेपदभी होजाताहै यथा व्यतिस्ते; अतएव आत्मनेपद अस् धातुके रूप नीचे दिखलाए जाते हैं। लट् — स्ते, साते, सते। से, साथे, ध्वे। हे, स्वहे, स्महे॥ लोट् — स्ताम्, साताम्, सताम्। स्व, साथाम्, ध्वम्। असै, असावहै, असामहै॥ लङ् — आस्त, आसाताम्, आसत। आस्थाः, आसाथाम्, आध्वम्। आसि, आस्वहि, आस्महि॥ लिङ् — सीत, सीयाताम्, सीरन्। सीथाः, सीयाथाम्, सीध्वम्। सीय, सीवहि, सीमहि॥

(२) सम् उपसर्गके साथ विद् धातु आत्मनेपद होजाताहै, और अन्ते, अताम्, अत परेहोनेसे विद्को विद्र् भी होजाताहै। यथा, संविदते (वा) संविद्रते इत्यादि॥

(३) लट् मे विद् धातुके और एक प्रकार रूपभी होतेहैं। यथा; वेद, विदतुः, विदुः, वेत्थ, विदथुः, विद, वेद, विद्व, विद्म।

(४) लोट् मे विद् धातुको विकल्पकरके विदाङ्कु होताहै और उसके रूप कृ धातुकी न्याइ होतेहैं। यथा विदाङ्करोतु, विदाङ्कुरुताम्, विदाङ्कुर्वन्तु, विदाङ्कुरु, विदाङ्कुरुतम्, विदाङ्कुरुत, विदाङ्करवाणि, विदाङ्करवाव, विदाङ्करवाम।

(५) लङ् की सि विभक्ति मे धातुके अन्तस्थित द के स्थानमे र भी होताहै तिससे अवेः (वा) अवेत् ये दो पद होतेहैं॥

९० ति, सि, मि, तु, त, :, विभक्तियोंमे धातुके अन्त्य उकारको वृद्धि होती है। यथा; नौति, नुतः, नुवन्ति, नौतु, नुताम्, नुवन्तु, अनौत्, अनुताम्, अनुवन्, नुयात्, इत्यादि॥

९८ तथा ——— स्तु, रु, नु, इन धातुओंके उत्तर विकल्प करके ई होतीहै, और ई परे होनेसे इन विभक्तियोंमे उकारको गुण होताहै।[1] यथा;

(स्तु) स्तवीति (स्तौति) स्तुतः स्तुवन्ति स्तवीषि (स्तौषि) स्तुथः स्तुथ स्तवीमि (स्तौमि) स्तुवः स्तुमः

स्तुते स्तुवाते स्तुवते स्तुषे स्तुवाथे स्तुध्वे स्तुवे स्तुवहे स्तुमहे

९९ तथा ऊर्णु, धातुके अन्त्य उ को विकल्प करके गुण भी होताहै; त, :, विभक्तियोंमे नित्य गुण होताहै

लट्। ऊर्णौति (वा) ऊर्णोति, ऊर्णुतः, ऊर्णुवन्ति इत्यादि।

ऊर्णुते ऊर्णुवाते, ऊर्णुवते इत्यादि।

लङ्। और्णोत्, और्णुताम्, और्णुवन् इत्यादि

और्णुत, और्णुवाताम्, और्णुवत इत्यादि

लोट्। ऊर्णुहि

लिङ्। ऊर्णुयात्

ब्रू (उभ) कहना

१०० ति, सि, सि, तु, त, :, इन विभक्तियोंमे ब्रूधातुके उत्तर ई होतीहै।

लट् ब्रवीति[2] ब्रूतः ब्रुवन्ति ब्रवीषि ब्रूथः ब्रूथ ब्रवीमि ब्रूवः ब्रूमः

ब्रूते ब्रुवाते ब्रुवते ब्रूषे ब्रुवाथे ब्रूध्वे ब्रुवे ब्रूवहे ब्रूमहे

लोट्			लङ्			लिङ्		
ब्रवीतु	ब्रूताम्	ब्रुवन्तु	अब्रवीत्	अब्रूताम्	अब्रुवन्	ब्रूयात्	ब्रूयाताम्	ब्रूयुः

वच् धातु

लट् वक्ति वक्तः ——— वक्षि वक्थः वक्थ। वच्मि, वच्वः वच्मः[3]

(१) पाणिनि के मतमे ईका आगम लट्, लोट्, लङ् की अवशिष्ट हलादि विभक्तियोंमे भी विकल्प करके होताहै (और उको उव होताहै) यथा स्तवीतः, स्तवीते इत्यादि। (२) ब्रूधातुके ति, तः, अन्ति, सि, थः इन पान्च विभक्तियोंके सहित यथाक्रम आह, आहतुः, आहुः, आत्थ, आहथुः ये पान्च रूपभी होतेहैं। यह धातु केवल लङादि चार विभक्तियोंमेहि होताहै। आगे वच् धातु इसका काम देताहै॥ (३) वच् धातुके अन्ति, अन्तु विभक्तिके रूप नहि होते लङादि विभक्तियोंमे यह धातु उभयं पद होताहै॥

दुह् (उभ) दोहना

लट् { दोग्धि दुग्धः दुहन्ति धोक्षि दुग्धः दुग्ध दोह्मि दुह्वः दुह्मः
दुग्धे दुहाते दुहते धुक्षे दुहाथे धुग्ध्वे दुहे दुह्वहे दुह्महे

लोट् { दोग्धु दुग्धाम् दुहन्तु दुग्धि दुग्धम् दुग्ध दोहानि दोहाव दोहाम
दुग्धाम् दुहाताम् दुहताम् धुक्ष्व दुहाथाम् धुग्ध्वम् दोहै दोहावहै दोहामहै

लङ् { अधोक् अदुग्धाम् अदुहन् अधोक् अदुग्धम् अदुग्ध अदोहम् अदुह्व अदुह्म
(वा) अधोग्
अदुग्ध अदुहाताम् अदुहत अदुग्धाः अदुहाथाम् अधुग्ध्वम् अदुहि अदुह्वहि अदुह्महि

लिङ् { दुह्यात् दुह्याताम् दुह्युः दुह्याः दुह्यातम् दुह्यात दुह्याम् दुह्याव दुह्याम
दुहीत दुहीयाताम् दुहीरन् दुहीथाः दुहीयाथाम् दुहीध्वम् दुहीय दुहीवहि दुहीमहि

लिह् (उभ) चाटना

लट् { लेढि लीढः लिहन्ति लेक्षि लीढः लीढ लेह्मि लिह्वः लिह्मः
लीढे लिहाते लिहते लिक्षे लिहाथे लीढ्वे लिहे लिह्वहे लिह्महे

इ (आत्म) पढ़ना

लट् (१)अधीते अधीयाते अधीयते अधीषे अधीयाथे अधीध्वे अधीये अधीवहे अधीमहे

लोट् अधीताम् अधीयाताम् अधीयताम् अधीष्व अधीयाथाम् अधीध्वम् अध्ययै अध्ययावहै अध्ययामहै

१०१ लङ् विभक्तिमे ऐकारसे परे य होताहै विभक्तिका स्वर परे होनेसे।

लङ् अध्यैत अध्यैयाताम् अध्यैयत अध्यैथाः अध्यैयाथाम् अध्यैध्वम् अध्यैयि अध्यैवहि अध्यैमहि

लिङ् अधीयीत अधीयीयाताम् अधीयीरन् अधीयीथाः अधीयीयाथाम् अधीयीध्वम् अधीयीय अधीयीवहि अधीयीमहि

ईड् (आत्म) स्तुति करना

१०२ लट्, लोट्, और लङ् को स् और ध् परे होनेसे ईड् और ईश धातुके उत्तर ई होतीहै।

१०३ ड् से परे विभक्तिके त् को ट् और थ् को ठ् होताहै और ट् ठ् के पूर्व ड् को ट् होताहै।

(१) इ धातुका प्रयोग अधि उपसर्ग पूर्व करके होताहै॥

लट्	ईट्टे	ईडाते	ईडते	ईडिषे	ईडाथे	ईडिध्वे	ईडे	ईड्वहे	ईड्महे
लोट्	ईट्टाम्	ईडाताम्	ईडताम्	ईडिष्व	ईडाथाम्	ईडिध्वम्	ईडै	ईडावहै	ईडामहै
लङ्	ऐट्ट	ऐडाताम्	ऐडत	ऐट्ठाः	ऐडाथाम्	ऐडिध्वम्	ऐडि	ऐड्वहि	ऐड्महि
लिङ्	ईडीत	ईडीयाताम्	ईडीरन्	ईडीथाः	ईडीयाथाम्	ईडीध्वम्	ईडीय	ईडीवहि	ईडीमहि

ईश (आत) ऐश्वर्य करना

लट्	ईष्टे	ईशाते	ईशते	ईशिषे	ईशाथे	ईशिध्वे	ईशे	ईश्वहे	ईश्महे
लोट्	ईष्टाम्	ईशाताम्	ईशताम्	ईशिष्व	ईशाथाम्	ईशिध्वम्	ईशै	ईशावहै	ईशामहै
लङ्	ऐष्ट	ऐशाताम्	ऐशत	ऐष्ठाः	ऐशाथाम्	ऐशिध्वम्	ऐशि	ऐश्वहि	ऐश्महि
लिङ्	ईशीत	ईशीयाताम्	ईशीरन्	ईशीथाः	ईशीयाथाम्	ईशीध्वम्	ईशीय	ईशीवहि	ईशीमहि

वश (पं) इच्छा करना और वशमे करना

१०४ ति, सि, मि, त, आनि, आव, आम, ऐ, आवहै, आमहै, त्, ; अम् एतद्भिन्न विभक्तियोंमे वश् धातुके स्थानमे उश् होताहै॥

लट्	वष्टि	उष्टः	उशन्ति	वक्षि	उष्ठः	उष्ठ	वश्मि	उश्वः	उश्मः
लोट्	वष्टु	उष्टाम्	उशन्तु	उड्ढि	उष्टम्	उष्ट	वशानि	वशाव	वशाम
लङ्	अवट्	औष्टाम्	औशन्	अवट्	औष्टम्	औष्ट	अवशम्	औश्व	औश्म
लिङ्	उश्यात्	उश्याताम्	उश्युः	उश्याः	उश्यातम्	उश्यात	उश्याम्	उश्याव	उश्याम

चक्ष[१] (आत्) कहना

१०५ त, थ, ध, स, परे होनेसे चक्ष् धातुके स्थानमे चष् होताहै।

लट्	चष्टे	चक्षाते	चक्षते	चक्षे	चक्षाथे	चड्ढ्वे	चक्षे	चक्ष्वहे	चक्ष्महे
लोट्	चष्टाम्	चक्षाताम्	चक्षताम्	चक्ष्व	चक्षाथाम्	चड्ढ्वम्	चक्षै	चक्षावहै	चक्षामहै
लङ्	अचष्ट	अचक्षाताम्	अचक्षत	अचष्ठाः	अचक्षाथाम्	अचड्ढ्वम्	अचक्षि	अचक्ष्वहि	अचक्ष्महि
लिङ्	चक्षीत	चक्षीयाताम्	चक्षीरन्	चक्षीथाः	चक्षीयाथाम्	चक्षीध्वम्	चक्षीय	चक्षीवहि	चक्षीमहि

---

(१) चक्ष धातु के रूप लजादि चार विभक्तियोंमे होतेहैं। लिट् मे चक्ष् भी होताहै और विकल्प करके ख्या (या) क्शा भी होतेहैं। और सब विभक्तियोंमे चक्ष्के स्थानमे ख्या वा क्शा ही होतेहैं। और ख्या क्शाके रूप उभय पदहैं। (२) पाणिनी व्याकरणमे इसका नाम ईड है

इ[1] विधान

१०६ लुट्, लृट्, लृङ्, विभक्तियोंमे धातुके उत्तर इ आताहै।

१०७ आशीर्लिङ् के आत्मने पदमे ——— तथा ———

१०८ लिट्की थ, व, म, से, ध्वे, वहे, महे, विभक्तियोंमे तथा ———

१०९ लुङ् विभक्तिमे विहित स प्रत्यय परे होनेसे ——— तथा ———

विकल्प

११० रध प्रभृति[2] धातुओंको विकल्प करके इ होताहै[3]

१११ इष, रिष, रुष, लुभ, सह; धातुके उत्तर लुट् विभक्तिमे तथा ———

११२ कृत्, चृत्, छृद्, तृद्, नृत्, धातुके उत्तर लृट् और लृङ् विभक्तिमे और आशीर्लिङ् के आत्मने पदमे ——— तथा ———

११३ वृ धातु और ऋकारान्त धातुके उत्तर लुङ्के और आशीर्लिङ् के आत्मने पदमे ——— तथा ———

निषेध

११४ कई एक धातुओंके उत्तर इ नहि होता, ऐसे धातुओंको अनिट् धातु कहतेहैं। ये आकारादि क्रमसे नीचे लिखे जातेहैं।

दरिद्रा भिन्न सारे आकारान्त[4] धातु अनिट्हैं।

श्रि, श्वि, भिन्न सारे इकारान्त ——— तथा ———

डी, शी, ह्री, धी, वेवी, भिन्न सारे ईकारान्त ——— तथा ———

यु, रु, नु, स्नु (आत्म), क्षु, क्ष्णु, ऊर्णु, भिन्न सारे उकारान्त धातु अनिट् हैं

---

(१) पाणिनीय व्याकरणमे इसका नाम इट् है। (२) रध्, नश्, तृप् (दिवादि) दृप् (दिवादि) द्रुह्, मुह्, स्नुह्, स्निह्, स्यति, स्नाति, स्नायति, ध्वन्, कृप् पर परस्मै पद होनेसे उसके उत्तर इ नहि होता और निर् पूर्वक कुष् धातु और (धातुपाठमे) ऊदित सब धातु। यथा तञ्चु (वा) तञ्च् (रुधादि), व्रश्चू, अञ्जू (रुधादि), मृज्, स्यन्द्, क्लिद्, सिधु (भ्वादि), त्रप्, गुप् (भ्वादि पाठमे), क्षम्, अशू (स्वादि), क्लिश् (क्र्यादि), अक्षू, तक्षू, त्वक्षू, ग्लहू, गाहू, गाहू, गुहू, तृहू (तुदादि और रुधादि) (वा) तृहू (तुदादि), वृहू (वा) वृहू, स्तृहू, स्तृहू। — गुहके उ को ऊ होताहै इ आनेसे। (३) भू धातु के लङ्की परस्मै पदीमे पाणिनीय मतानुसार नित्य इ होताहै, पर बोपदेवके मतमे विकल्प करके।

(४) प, पे, ओकारान्त धातु लुङादि विभक्तियोंमे आकारान्त होजाते हैं, इस लिये वे भी अनिट् हैं।

हे, जागृ, भिन्न सारे ऋकारान्त धातु — तथा

कान्तमे — केवल शक् (स्वादिगणीय) धातु — तथा

चान्तमे — पच् मुच्, रिच् (रुधादि), वच्, विच् (रुधादि, जुहोत्यादि), सिच् — तथा

छान्तमे — प्रच्छ् — तथा

जान्तमे — त्यज्, निज्, भज्, भञ्ज्, भुज् (तुदादि, रुधादि), भ्रस्ज्, (तुदादि) मस्ज्, यज्, युज्, रञ्ज्, रुज्, विज्, (जुहोत्यादि), सञ्ज्, सृज्, स्वञ्ज्, — तथा

दान्तमे — अद्, क्षुद्, खिद्, छिद्, तुद्, नुद्, पद्, भिद्, विद् (दिवादि, तुदादि, और रुधादि), शद्, सद्, स्कन्द्, (भ्वादि, पं), स्विद् (दिवादि), ह्द्, — तथा

धान्तमे — क्रुध्, क्षुध्, बन्ध्, बुध् (दिवादि, आत्म), युध्, राध्, रुध्, व्यध्, शुध (दिवादि), साध (स्वादि), सिध (दिवादि), — तथा

नान्तमे — मन् (दिवादि, आत्म), हन् — तथा

पान्तमे — आप्, क्षिप्, छुप्, तप् (भ्वादि, दिवादि, चुरादि) तिप्, लिप्, लुप् (तुदादि), वप्, शप्, सृप्, स्वप्, — तथा

भान्तमे — यभ्, रभ्, लभ्, — तथा

मान्तमे — गम्, नम्, यम्, रम्, क्रम् (आत्म) — तथा

शान्तमे — क्रुश्, दंश्, दिश् (तुदादि) रुश्, (तुदादि) स्पृश् (तुदादि) दृश् (भ्वादि) मृश्, रिश्, लिश्, विश्, — तथा

षान्तमे — कृष् (भ्वादि, तुदादि), श्लिष्, तुष्, दुष्, पुष्, शुष् (दिवादि) त्विष्, द्विष्, पिष् शिष् (रुधादि), विष्, (भ्वादि, जुहोत्यादि और क्र्यादि), — तथा

सान्तमे — घस्, वस् (भ्वादि) — तथा

हान्तमे — दह्, दिह्, नह्, मिह्, रुह्, वह्, दुह्, लिह्, (अदादि) तथा

प्राप्ति प्रसव

११५ लिट् विभक्तिमे अनिट् धातुके उत्तर इ होताहै[2]

(१) ह्धातु के उत्तर य भिन्न लिट् विभक्तिमे इ नहि होता, य विभक्तिमे भी वरणार्थ ह्धातु को इ होताहै। (२) पर ऊ, श्रु, स्तु, द्रु, स्रु, भृ, सृ, धातुओंसे इ नहि होता।

११६ लिट् की "थ" विभक्तिमे दृश्, सृज्, स्वरान्त[1] और अकारयुक्त[2] धातु के उत्तर विकल्प करके इ होताहै।

११७ ऋ, स्वृ, स्तृ धातुओं को लुट् विभक्ति मे विकल्प करके इ होताहै।

११८ लृट्, लृङ्, लुङ् के परस्मैपदमे हन्, वृध्, शृध् के उत्तर इ नहि होता; लुङ् विभक्तिमे पत् के उत्तर इ नहि होता।

११९ लुङ् के परस्मै पद्मे, विहित स परे होने से स्तु और स्नु धातुके उत्तर इ होताहै।

१२० लुङ् के और आशीर्लिङ् के आत्मने पदमे संयोगादि ऋकारान्त धातु के उत्तर विकल्प करके इ होताहै।

१२१ लृट् और लृङ् के परस्मै पदमें गम् धातुके उत्तर इ होताहै। और स्यन्द के उत्तर नहि होता।

१२२ लृट् और लृङ् विभक्तिमे हन् धातु और ऋकारान्त धातुके उत्तर इ होताहै।

लुट्, लृट्, लृङ्,

१२३ लुट्, लृट्, और लृङ् विभक्तियों मे धातुके अन्त्य स्वर और उपधा लघु स्वर को गुण होताहै[3]

भू (पं) होना

लुट्	भविता	भवितारौ	भवितारः	भवितासि	भवितास्थः	भवितास्थ	भवितास्मि	भवितास्वः	भवितास्मः
लृट्	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः
लृङ्	अभविष्यत्	अभविष्यताम्	अभविष्यन्	अभविष्यः	अभविष्यतम्	अभविष्यत	अभविष्यम्	अभविष्याव	अभविष्याम

(१) ऋ और जागृ धातुके उत्तर इ नित्य होताहै; इसके सिवा ऋकारान्त धातुके उत्तर इ नहिं होता, पर संस्कृ और स्तृ से उत्तर इ विकल्प करके होताहै, व्ये के उत्तर इ नित्य होताहै।

(२) अद् और घस धातु के उत्तर नित्य इ होताहै।

(३) परन्तु कु (वा) कू, गु (वा) गू, धु (वा) धू, नु (वा) नू, धृ, कुच्, गुज्, कुट्, चुट्, छुट् (वा) कुट्, लुट्, त्रुट्, पुट्, मुट् (वा) मुड् (वा) तुड्, स्फुट्, लुठ्, कुड्, कुड् (वा) कुड्, खुड्, चुड्, क्षुड्, घुड्, पुड्, बुड्, भुड्, खुड्, स्थुड्, स्फुड्, गुड्, बुड्, जुड्, तुड्, पुड्, लुड्, कुड्, डिप्, गुर्, छुर्, स्फुर् (वा) स्फुल्, ध्रुव्, कुड्, और विज् धातुओंके स्वर को गुण नहि होता। यथा (कु) कुता (कू) कुविता (कुट्) कुटिता॥ ऊर्णु शब्दके अन्त्य उको विकल्प करके गुण होताहै; यथा ऊर्णविता (वा) ऊर्णुविता॥ मृज् की ऋको वृद्धि होतीहै; यथा मार्जिता (वा) मार्ष्टा।

	लुट्			लृट्			लृङ्		
चल	चलिता	चलितारौ	चलितारः	चलिष्यति	चलिष्यतः	चलिष्यन्ति	अचलिष्यत्	अचलिष्यताम्	अचलिष्यन्
शी	शयिता	शयितारौ	शयितारः	शयिष्यते	शयिष्येते	शयिष्यन्ते	अशयिष्यत	अशयिष्येताम्	अशयिष्यन्त

१२७ लुट्, लृट्, और लृङ् विभक्तियोंमें ग्रह धातुके उत्तर विहित इ दीर्घ होता है।

ग्रह	ग्रहीता	ग्रहीतारौ	ग्रहीतारः	ग्रहीष्यति	ग्रहीष्यतः	ग्रहीष्यन्ति	अग्रहीष्यत्	अग्रहीष्यताम्	अग्रहीष्यन्

१२५ लुट्, लृट्, और लृङ् विभक्तियोंमें वृ और ऋकारान्त धातुके उत्तर विहित इ विकल्प करके दीर्घ होता है।

तॄ	तरीता	तरीतारौ	तरीतारः	तरीष्यति	तरीष्यतः	तरीष्यन्ति	अतरीष्यत्	अतरीष्यताम्	अतरीष्यन्
(वा)	तरिता	तरितारौ	तरितारः	तरिष्यति	तरिष्यतः	तरिष्यन्ति	अतरिष्यत्	अतरिष्यताम्	अतरिष्यन्

१२६ दीधी, वेवी और दरिद्रा धातुके अन्त्य स्वरको लोप होता है विहित इ परे होनेसे। यथा, दीधिता दरिद्रिता, दरिद्रिष्यति, अदरिद्रिष्यत्।

१२८ लुडादि विभक्तियोंमें कम्, गुप्, धूप्, विछ्, पण्, पन्, ऋत् धातुओंके कामय प्रभृति आदेश भी (४८ वां नियम देखो) विकल्प करके हो जाते हैं; यथा, कमिता (वा) कामयिता गोप्ता, (वा) गोपिता, (वा) गोपायिता इत्यादि।

अनिट् धातु

	(या)	(जि)	(श्रु)	(ह्वे)	(वच्)	(प्रच्छ्)	(मन्)	(लभ्)
लुट्	याता	जेता	श्रोता	ह्वाता	वक्ता	प्रष्टा	मन्ता	लब्धा
लृट्	यास्यति	जेष्यति	श्रोष्यति	ह्वास्यति	वक्ष्यति	प्रक्ष्यति	मंस्यते	लप्स्यते
लृङ्	अयास्यत्	अजेष्यत्	अश्रोष्यत्	अह्वास्यत्	अवक्ष्यत्	अप्रक्ष्यत्	अमंस्यत्	अलप्स्यत्

	(वस्)	(वह्)	(दह्)	(गम्)	(हन्)	(कृ)
लुट्	वस्ता	वोढा	दग्धा	गन्ता	हन्ता	कर्त्ता
लृट्	वत्स्यति	वक्ष्यति	धक्ष्यति	गमिष्यति	हनिष्यति	करिष्यति
लृङ्	अवत्स्यत्	अवक्ष्यत्	अधक्ष्यत्	अगमिष्यत्	अहनिष्यत्	अकरिष्यत्

१२८ मि, मी, दी, की इ ई को आ होता है, और ली की ई को विकल्प करके आ होता है। यथा, माता, मास्यति, दाता, लाता (वा) लेता।

१२९ लुट् लृट् और लृङ् विभक्तिमे दृश् और सृज् धातुके ऋके स्थानमे र् होताहै[1] यथा द्रष्टा, द्रक्ष्यति, स्रष्टा, अस्रक्ष्यत्, इत्यादि।

१३० अस के स्थानमे भू, ब्रू के स्थानमे वच् और चक्ष के स्थानमे ख्या होता है; और अद्, अज को विकल्प करके घस, वी, होताहै।

१३१ लृङ् विभक्तिमे अधि पूर्व्वक इ धातुके स्थानमे विकल्प करके गी होताहै गीके ईकार का गुण नहिं होता। यथा; अध्यगीष्यत (वा) अध्यैष्यत।

१३२ मस्ज् और अनिट् नश् धातु के स्वरसे परे न् आताहै; यथा मंक्ता, नंष्टा (नश् सेट् होनेसे तो नशिता होताहै।

विकल्पितेट् धातु

धातु	लुट्	लृट्	धातु	लुट्	लृट्
(रध)	रधिता, रद्धा	रधिष्यति, रत्स्यति	(सू)	सविता सोता	सविष्यते सोष्यते

आशीर्लिङ्

परस्मैपद

भू भूयात् भूयास्ताम् भूयासुः भूयाः भूयास्तम् भूयास्त भूयासम् भूयास्व भूयास्म

भिद् भिद्यात् भिद्यास्ताम् भिद्यासुः भिद्याः भिद्यास्तम् भिद्यास्त भिद्यासम् भिद्यास्व भिद्यास्म

१३३ आशीर्लिङ् के परस्मैपदमे दा,[2] धा, पा,[2] मा, गा, स्था, हा, से आकारके स्थानमे एकार होताहै[3] यथा; देयात्, देयास्ताम् इत्यादि।

१३४ तथा ———— धातुके अन्तस्थित इ, उ, दीर्घ होतेहैं[4] यथा (जि) जीयात् (श्रु) श्रूयात् इत्यादि।

१३५ तथा ······ ———धातुके अन्तस्थित ऋ के स्थानमे रि[5] होताहै। यथा; (कृ) क्रियात् (भृ) भ्रियात् इत्यादि।

(१) कृष, तृप, दृप, मृश्, स्पृश्, सृप्, धातुओंकी ऋके स्थानमे विकल्पकरके र होताहै। यथा, कृष्‌—क्रष्टा, कर्ष्टा; क्रक्ष्यति कर्क्ष्यति इत्यादि। इ परे होनेसे ऋ को र नहि होता। यथा; तर्पिता, दर्पिता॥ भ्रस्ज् धातु के र् को विकल्पकरके ऋ और गुण भी होताहै; यथा भ्रष्टा (वा) भर्ष्टा।
(२) दा (छेदन) पा (पालन) दै (शोधन)के आ को ए नहि होता। (३) जिस धातुकी आदिमे संयुक्त वर्ण हो उसके आकारके स्थानमे विकल्पकरके एकार होताहै। यथा (ग्ला) ग्लेयात् (वा) ग्लायात् (ध्या) ध्येयात् (वा) ध्यायात्। स्था धातुको नित्य; स्थेयात्। ज्याको जी होताहै। यथा जीयात्। दरिद्राका आकार लुप्त होताहै; यथा दरिद्र्यात्। (४) उपसर्ग पूर्व्वक इ धातुको दीर्घ नहि होता। धातुके उपधास्थित इ उ को भी दीर्घ होताहै व् र् परे होनेसे। यथा; (कुर्) कूर्य्यात्, (दिव्) दीव्यात्। (५) वृ की ऋ को रि (वा) ऊर् होताहै। यथा, व्रियात् (वा) वूर्यात्।

१३६ तथा — संयोगादि ऋकारान्त धातुके और ऋ, जागृ धातुओंके ऋकारके स्थानमे अर् होताहै। यथा; (स्मृ) स्मर्यात् (ऋ) अर्यात्, (जागृ) जागर्यात्।

१३७ तथा — धातुके अन्तस्थित ॠ के स्थानमे ईर् होताहै, और ॠकार पवर्गसे परे होनेसे, ऊर् होताहै। यथा; (तॄ) तीर्यात् (पॄ) पूर्यात्।

१३८ तथा — ग्रह्, प्रच्छ्, व्यध्, भ्रस्ज्, व्रश्च्, व्यच्, और यज् धातुओंके स्थानमे गृह्, पृच्छ्, विध्, भृज्, वृश्च्, विच्, और इज् यथा क्रम होताहै। यथा, गृह्यात्, विध्यात् इत्यादि।[1]

१३९ तथा — वच्, वद्, वप्, वश्, वस्, वह्, स्वप्, धातुओंके अकार सहित व के स्थानमे उ होताहै। यथा; उच्यात्, उप्यात् इत्यादि।

१४० तथा — ह्वे को हू, व्ये को वी, और वे को ऊ होताहै। यथा हूयात्, वीयात्, ऊयात् इत्यादि।

१४१ तथा — शास् धातु के स्थानमे शिष् और अज के स्थानमे वी होताहै। यथा; शिष्यात्, वीयात्

१४२ तथा — धातुके उपधा नकारका लोप होताहै।[2] यथा; (मन्थ) मथ्यात्

१४३ तथा — जन्, खन्, सन् को विकल्प करके जा, खा, सा, होताहै। यथा; जन्यात् (वा) जायात् इत्यादि।

आत्मने पद

धातु	प्र॰			म॰			उ॰		
सेव्	सेविषीष्ट	सेविषीयास्ताम्	सेविषीरन्	सेविषीष्ठाः	सेविषीयास्थाम्	सेविषीध्वम्[3]	सेविषीय	सेविषीवहि	सेविषीमहि

१४४ आशीर्लिङ् के आत्मने पदमे धातुके अन्त्यस्वर[4] और उपधा लघु स्वर को गुण होताहै। यथा; (शी) शायिषीष्ट (द्युत्) द्योतिषीष्ट

(१) आशीर्लिङ्मे गुप् प्रभृति को आय प्रभृति भी होतेहैं (१२० वां नियम को देखो) यथा; गुप्यात् (वा) गोपाय्यात्
(२) इदित धातुके नकारका लोप नहि होता।
(३) अ आ भिन्न स्वरसे परे षीध्वम् को षीढ्वम् होताहै, और ह् य् व् र् ल् से परे सेट् षीध्वम् को विकल्प करके षीढ्वम् होताहै।
(४) दीधी, वेवी के अन्त्य स्वरका लोप होताहै। यथा; दीधिषीष्ट। अन्त्य ॠ को ईर् होताहै जो इट् परे न हो। यथा; तीर्षीष्ट

१४५ तथा — ग्रह् धातु के उत्तर विहित इ दीर्घ होताहै। यथा, ग्रहीषीष्ट (क्रम) क्रमिषीष्ट (वा) क्रामयिषीष्ट (२० पृ० प० देखो)

अनिट् धातु

(दा) दासीष्ट (त्रै) त्रासीष्ट (वह्) वक्षीष्ट

१४६ आशीर्लिङ् के आत्मने पदमे अनिट् धातु के अन्तस्थित ऋकार को गुण[2] नहि होना। यथा; (कृ) कृषीष्ट (मृ) मृषीष्ट

१४७ आशीर्लिङ् के आत्मने पदमे अनिट् धातु के उपधा लघु[3] स्वर को गुण नहि होना। यथा; (भुज) भुक्षीष्ट

विकल्पितेट् धातु

(सू) सविषीष्ट, सोषीष्ट (वृ) वरिषीष्ट, वृषीष्ट[4] इत्यादि

लिट्

१४८ लिट् विभक्ति मे धातु अभ्यस्त होताहै। (अर्थात् धातु को द्वित्व होताहै) यथा दद धातु का दद दद

१४९ अभ्यस्त करने से पूर्वभाग के आदि स्वर से परे जो उसका अंश हो, वह लोप हो जाताहै। यथा; द दद

१५० परस्मैपद के प्रथम और उत्तम, पुरुष के एक वचन मे धातु के उपधा लघुस्वर को गुण[5] होताहै।

१५१ तथा — धातु[6] के उपधा अकार और अन्त्य स्वर को वृद्धि होती है।

१५२ परस्मैपद के मध्यम पुरुष के एक वचन मे अन्त्यस्वर और उपधा लघुस्वर[7] को गुण[5] होताहै।

धातु	प्र.			म.			उ.		
दद (आ)	ददते	ददाते	ददिरे	ददिषे	ददाथे	ददिध्वे[8]	ददे	ददिवहे	ददिमहे

(१) तॄ धातु का इ विकल्पकरके दीर्घ होताहै। यथा; तरिषीष्ट (वा) तरीषीष्ट।

(२) ऋ प्रभृति को भी गुण नहि होना (२८ पृ० २५ देखो)

(३) भञ्ज के ञ को विकल्प करके अ और गुण होताहै (२८ पृ० १४ देखो) यथा; भञ्जीष्ट (वा) भर्जीष्ट।

(४) वृषीष्ट प्रभृति भी होती हैं।

(५) गुह् के उ को ऊ होताहै। यथा; जुगूह, जुगूहिथ, इत्यादि।

(६) कोइयों के मत मे उत्तम पुरुष के एकवचन मे विकल्पकरके गुण वृद्धि होती है। यथा जुनाव (वा) जुनव, पपाच (वा) पपच

(७) परः ऋच् से लेकर विज धातु पर्यन्त (२८ पृ० २ प० देखो) को गुण नहि होना

(८) हलन्त धातु के इट् से परे ध्वे को विकल्पकरके ढ्वे भी होताहै। यथा ददिढ्वे, पेचिढ्वे इत्यादि। और इन आनेसे उकारान्त ऋकारान्त धातुसे परे ध्वे को ढ्वे होताहै।

१५३ अभ्यस्त धातुके पूर्वभागका दीर्घस्वर ह्रस्व होताहै

गौ(अ०)प्राप्तिः तूं(पं) स्तुतिः सेवृ

जिगाय जिग्यतुः जिग्युः तुताव तुष्टुवतुः तुष्टुवुः सिषेवे सिषेवाते सिषेविरे

जिग्ये जिग्याते जिग्यिरे (१ भा० २१ पृ० ३ पं०)

विद् (पं) जानना

विवेद विविदतुः विविदुः विवेदिथ विविदथुः विविद विवेद विविदिव विविदिम

इषु(पं) इच्छाकरना

इयेष ईषतुः ईषुः इयेषिथ ईषथुः ईष इयेष ईषिव ईषिम

इ (पं) जानना

इयाय ईयतुः ईयुः इययिथ ईयथुः ईय इयाय इययिव इययिम
इयेथ

शश (पं) हिंसाकरना

शशाश शशशतुः शशाशुः शशशिथ शशशथुः शशश शशाश शशशिव शशशिम

१५४ अभ्यस्त धातुके पूर्वभागमे वर्गका द्वितीय वर्ण होनेसे प्रथमवर्ण होताहै, और चतुर्थ वर्ण होनेसे तृतीय वर्ण होताहै। यथा, (छिद्) चिच्छेद, चिच्छिदतुः, (भिद्) बिभेद बिभिदतुः इत्यादि

१५५ तथा ———— कख् के स्थानमे च, और ग, घ, के स्थानमे ज् होताहै। यथा (क्री) चिक्राय, चिक्रयिथ (वा) चिक्रेथ, (खद्) चखाद् चखदतुः (गद्) जगाद, जगदतुः (हस्) जहास इत्यादि

१५६ तथा ———— ऋ ॠ ऌ होनेसे उसके स्थानमे अ होताहै यथा (नृत्) ननर्त, ननृततुः (सृ) ससार, सस्रतुः; (कृप्) चक्लृपे इत्यादि

१५७ तथा ———— ह होनेसे उसके स्थानमे ज होताहै। यथा; (हस्) जहास, जहसतुः जहसुः इत्यादि।

१५८ तथा ———— संयुक्तवर्ण होनेसे तिसके अन्यव्यञ्जन वर्णका लोप होताहै। यथा; (श्रि) शिश्राय, शिश्रयिथ; (स्नु) सुस्राव; (क्षिप) चिक्षेप इत्यादि।

१५९ तथा ———— स्क, स्त, स्थ, [2] स्न, स्प, स्फ, होनेसे आदिवर्ण

(१) एये का ह्रस्व इ, और ओ औ का ह्रस्व उ होताहै। (२) छिव् (वा) छीव् धातुके पूर्वभागमे त (वा) ट होताहै। यथा; तिष्ठेव (वा) टिष्ठेव, तिष्ठीव (वा) टिष्ठीव

का लोप होताहै। यथा; (स्वल्) चस्वाल,(श्चुत) चुश्चोत (स्त्) त
ष्ठाव,(स्फुर्) पुस्फोर।

१९० आकारान्त धातुसे परे लिट् परस्मैपदके, प्रथम और उत्तम पुरुषके एकवचन के स्थानमे औ होताहै।

१९१ लिट् विभक्तिमे आकारान्त धातुके आकारका लोप होताहै, परन्तु थ विभक्ति मे "इ" न होनेसे लोप नहिं होता

या (पं) जाना

प्र.			म.			उ.		
ययौ	ययतुः	ययुः	ययिथ / याथ	ययथुः	यय	ययौ	ययिव	ययिम

स्था (पं) रहना

तस्थौ	तस्थतुः	तस्थुः	तस्थिथ / तस्थाथ	तस्थथुः	तस्थ	तस्थौ	तस्थिव	तस्थिम

१९२ लिट् विभक्ति परे होनेसे भू धातुको द्वित्व होकर बभूव् होताहै।

बभूव	बभूवतुः	बभूवुः	बभूवेथ	बभूवथुः	बभूव	बभूव	बभूविव	बभूविम

१९३ परस्मैपदके प्रथम और उत्तम पुरुषके एकवचन भिन्न लिट् विभक्ति मे ऋकारान्त[1] धातुके ऋके स्थानमे अर् होताहै।

(कृ)	चकार	चकारतुः	चकरुः	चकरिथ	चकरथुः	चकर	चकार	चकरिव	चकरिम

१९४ तथा ———— संयोगादि ऋकारान्त धातु के ऋके स्थानमे अर् होताहै

धातु	प्र.			म.			उ.		
(स्मृ)	सस्मार	सस्मरतुः	सस्मरुः	सस्मरिथ / सस्मर्थ	सस्मरथुः	सस्मर	सस्मार	सस्मरिव	सस्मरिम

१९५ परस्मैपदके एकवचन भिन्न लिट् विभक्तिमे धातुके उपधान[2] कार का विकल्प करके लोप होताहै। यथा,

दन्श धातु — ददंश ददंशतुः ददंशुः / ददशतुः ददशुः

सन्ज् धातु — ससञ्ज ससञ्जतुः ससञ्जुः / ससजतुः ससजुः

सन्ज् धातु — ससञ्जे / ससजे

(१) पृ,शृ,दृ,को विकल्प करके अर् नहि भी होता। यथा;पपरिव (वा) पप्रिव इत्यादि।

(२) इदित धातुके न को लोप नहि होता।

१६६ अश[1] धातु, ऋकारादि[2] धातु, और अकारादि संयोगान्त धातुके पूर्वभाग के स्थानमे आन् होताहै।

अश् धातु			ऋत्			अर्च		
आनशे	आनशाते	आनशिरे	आनर्त	आनृततुः	आनृतुः	आनर्च	आनर्चतुः	आनर्चुः

१६७ लिट् विभक्तिमे द्युत् और व्यथ् धातुओंके पूर्वभागके स्थानमे यथाक्रम दि और वि होताहै। यथा; दिद्युते, दिद्युताते। विव्यथे इत्यादि।

१६८ तथा व्यध् को विध् और व्यच् को विच् होताहै, परन्तु परस्मैपदके एकवचनमे परभाग व्यध्, व्यच् हि रहताहै। यथा; विव्याध विविधतुः, विव्याच, विविचतुः, इत्यादि।

१६९ तथा ——————— अध्ययनार्थ इ धातुके स्थानमे गा होताहै। यथा अधिजगे, अधिजगाते, अधिजगिरे।

१७० जिन धातुओंकी आदि और अन्तमे असंयुक्त व्यञ्जन वर्ण हों और मध्यमे अकार हो, लिट्[3] विभक्तिमे उन धातुओं[4]के पूर्व भागका लोप होताहै, और पर भागके अकारके स्थानमे एकार होताहै; परन्तु परस्मैपदके प्रथम और उत्तम पुरुष के, एक वचनमे नहिं होता।

धातु	प्र॰			म॰			उ॰		
चल	चचाल	चेलतुः	चेलुः	चेलिथ	चेलथुः	चेल	चचाल	चेलिव	चेलिम

१७१ लिट् विभक्तिमे अभ्यस्त त्रृ को तेर, फल्को फेल, भज्को भेज, त्रप्को त्रेप, और (हिंसार्थ) रध् को रेध् होताहै; और जृ को जेर, फण को फेण, स्वन् को स्वेन्, भ्रम् को भ्रेम, वम् को वेम्, स्यम् को स्येम्, त्रस् को त्रेस्, ग्रन्थ् को ग्रेथ्, श्रन्थ् को श्रेथ्, दम्भ् को देभ्, राज को रेज, भ्राज् को भ्रेज्, भ्राश को भ्रेश, भ्लाश को भ्लेश, और (कोइयोंके मतमे) स्यन् को स्येन्, स्यम् को स्येम् विकल्पकरके होताहै; परन्तु प्रथम और उत्तम पुरुष, के एक वचनमे नहिं होता। यथा, ततार, तेरतुः, तेरिथ; जजार, जजरतुः (वा) जेरतुः, जजरिथ (वा) जेरिथ इत्यादि।

(१) स्वादिगणीय। क्योंकि क्र्यादि गणीय अश धातु का रूप तो "आश" होताहै। (२) ऋ धातुके रूप तो पूर्व नियमानुसार हि होंगे। यथा आर, आरतुः, आरुः, आरिथ, आरिव, इत्यादि ऋच्छ धातुकी ऋको गुण होताहै। यथा; आनर्च्छ, आनर्च्छतुः इत्यादि। (३) थ विभक्तिमे धातुके उत्तर इ रूप विना नहिं होता। (४) शस्, दद, वकारादि, और जिन धातुओंके पूर्व भाग का रूपान्तर होताहै तद्भिन्न।

९२ लिट् विभक्तिमे गम्, खन्, जन्, घस, और हन् धातुओंके परभागके अकारका लोप होजाताहै। परन्तु परस्मै पदके एकवचनमे नहिं होता।

धातु	प्र.			म.			उ.		
गम	जगाम	जग्मतुः	जग्मुः	जगमिथ (जगन्थ)	जग्मथुः	जग्म	जगाम	जग्मिव	जग्मिम
खन्	चखान	चख्नतुः	चख्नुः	चखनिथ (चखन्थ)	चख्नथुः	चख्न	चखान	चख्निव	चख्निम
जन्	जज्ञे	जज्ञाते	जज्ञिरे	जज्ञिषे	जज्ञाथे	जज्ञिध्वे	जज्ञे	जज्ञिवहे	जज्ञिमहे
घस (१)	जघास	जक्षतुः	जक्षुः	जघसिथ	जक्षथुः	जक्ष	जघास	जक्षिव	जक्षिम

९३ लिट् विभक्तिमे हन् धातुके परभागके ह के स्थानमे घ होजाताहै।

हन् जघान् जघ्नतुः जघ्नुः जघन्थ (वा) जघनिथ जघ्नथुः जघ्न जघान जघ्निव जघ्निम

९४ लिट् विभक्तिमे दे और जि धातुके परभागके स्थान मे गि, दी के पर भागके स्थानमे दीय् और दि धातु के पर भागके स्थान मे चि और चि धातुके पर भागके स्थान मे विकल्प करके कि होताहै। यथा; दिग्ये, जिगाय, दिदीये, जिग्याय, चिकाय (वा) चिचाय चिच्यिव (वा) चिक्यिव जिग्यतुः इत्यादि।

९५ लिट्काय्यपरे होनेसे दृश और सृज (२) धातुके परभाग के ऋ के स्थान मे र् होताहै; परन्तु द् होनेसे नहिं होता।

(दृश) ददर्श ददृशतुः ददृशुः ददर्शिथ (दद्रष्ठ) ददृशथुः ददृश ददर्श ददृशिव ददृशिम

(सृज) ससर्ज ससृजतुः ससृजुः ससर्जिथ (सस्रष्ठ) ससृजथुः ससृज ससर्ज ससृजिव ससृजिम

९६ तथा इ न आनेसे मस्ज् और नश् धातुओंके स्वरके पीछे न आताहै। यथा ममंक्थ, ननंष्ठ

९७ लिट् मे अज् धातुके स्थानमे वी होजाताहै; पर थ्, व्, म विभक्ति परे होनेसे विकल्प करके; यथा विवाय, विव्यतुः, विवयिथ, विवेथ (वा) आजिथ, विव्यिव, आजिव।

९८ लिट्मे मृज् धातु को वृद्धि होतीहै परस्मैके एकवचनमे; अन्य विभक्तियोंमे विकल्प करके। यथा ममार्ज, ममार्जतुः (वा) ममृजतुः ममार्जिथ, ममार्ष्ठ (कोइयोंके मतमे ममष्ठ भी होताहै।

(१) लिट् मे अद् धातुके स्थानमे विकल्प करके घस होजाताहै; यथा, जघास (वा) आद जक्षे (वा) आदे।

(२) कृष, तृप्, दृप, स्पृश, सृप, मृश, धातुओंके ऋके स्थानमे विकल्प करके र् होताहै। यथा; (कृष) चकृष्ठ, चकर्ष्ठ, (स्पृश) ममष्ठ, ममर्ष्ठ इत्यादि।

१७९ लिट्मे —— ग्रह धातुके स्थानमे गृह होता है; परन्तु परस्मैपदके एकवचनमे नहिं होता(१)। यथा; जग्राह, जगृहतुः, जग्रहिथ, इत्यादि।

१८० तथा —— ह्वे धातुके स्थानमे हू, और श्वि के स्थानमे विकल्प करके शू होता है। यथा; जुहाव, जुहुवतुः, शिश्वाय (वा) शुशाव, शिश्वेथ (वा) शिश्वयिथ (वा) शुशोथ (वा) शुशविथ

१८१ तथा —— वच्, वद्, वप्, वश्, वस्, वह्, और स्वप्, धातुओंके पूर्वभागके व् और श्र के स्थानमे उ होता है, और परस्मैपदके एकवचन भिन्न विभक्तियोंमे परभागके व् और श्र के स्थानमे भी उ होता है। यथा; (वच्) उवाच, ऊचतुः, ऊचुः; (वस्) उवास, ऊषतुः (१ भा. २५ पृ.) (स्वप्) सुष्वाप, सुषुपतुः।

१८२ तथा —— यज् धातुके पूर्वभागके स्थानमे इ होता है; और परस्मैपदके एकवचन भिन्न विभक्तियोंमे परभागके य और श्र के स्थानमे भी इ होता है। यथा; इयाज ईजतुः ईजुः इत्यादि।

१८३ तथा —— ज्याधातुके पूर्वभागको जि होता है। यथा; जिज्यौ, जिज्याथ (वा) जिज्यिथ, जिज्यिव इत्यादि। ज्योधातु (आत्) जिज्ये इत्यादि।

१८४ लिट् के एकवचनमे, मि, मी धातुओंके आकारान्तकी न्याई रूप होते हैं; और ली के विकल्प करके। यथा; ममौ, ममाथ (वा) ममिथ, ममिव, ललौ (वा) लिलाय, ललाथ (वा) ललिथ (वा) लिलेथ (वा) लिलयिथ, लिल्यिव।

१८५ तथा —— परस्मैपदमे व्ये के एकारको आ नहिं होता। यथा; विव्याय, विव्ययिथ, विव्यतुः, विव्ये।

१८६ तथा, —— तथा, वे को द्वित्व होकर उवय् भी होता है; और परस्मै. के एकवचन भिन्न विभक्तियोंमे ऊय्, (वा) ऊव् भी होते हैं। यथा; ववौ (वा) उवाय, ववतुः (वा) ऊयतुः (वा) ऊवतुः; वविथ (वा) ववाथ (वा) उवयिथ, वविव (वा) ऊयिव (वा) ऊविव,

(१) कोइयोंके मतमे प्रछ् को भी इछ होता है। यथा पप्रच्छतुः। भ्रस्ज् को लट् आदि विभक्तियोंमे विकल्प करके भर्ज् भी होता है। यथा; बभ्रज्ज (वा) बभर्ज्ज।

(आत्मने) ववे (वा) ऊवे (वा) ऊये, इत्यादि।

१८७ लिट्‌मे प्याय् का द्वित्व रूप पिप्य होताहै। यथा; पिप्ये, पिप्यिषे, इत्यादि।

१८८ तथा गृ के र् को ल् भी होताहै। यथा; जगार (वा) जगाल, इत्यादि।

१८९ तथा रध् और जभ् धातुओंके अ से परे न् आताहै स्वर परे होने से; पर इ परे होनेसे रध् मे न् विकल्प करके होताहै। यथा; ररन्ध, ररन्धतुः, ररन्धिथ (वा) ररद्ध, ररन्धिव (वा) रेध्व; जजम्भ,

१९० तथा अय्, दय्, आस्, धातुके उत्तर आम् होताहै।

१९१ आम् के उत्तर भू, कृ, अस्, इन तीन धातुओंका प्रयोग होकर लिट् का कार्य्य होताहै।[1] यथा; (अय्) अयाम्बभूव, अयाञ्चक्रे, अयामास, (दय) दयाम्बभूव, दयाञ्चक्रे, दयामास, (आस्) आसाम्बभूव, आसाञ्चक्रे, आसामास आसामासतुः; इत्यादि।

१९२ जिन धातुओंके आदिमे अ, आ, भिन्न (९ पृ. २ प.) गुरु स्वर हो,[2] लिट् विभक्तिमे उनके उत्तर भी आम् होकर भू कृ अस् का प्रयोग होताहै। यथा; ईह्, ईहाम्बभूव, ईहाम्बभूवतुः, इन्द्, इन्दाञ्चकार, इन्दाञ्चक्रतुः इत्यादि।

१९३ लिट् विभक्तिमे हु, भी, ह्री, भृ, धातुओंके उत्तर विकल्प करके आम् और भू प्रभृति का प्रयोग होताहै; और आम् परे होनेसे इन धातुओं को गुण और अभ्यास होताहै। यथा; जुहवाम्बभूव, जुहवाञ्चकार जुहवामास, जुहाव।

१९४ तथा जागृ, दरिद्रा, काश्,[3] कास्, उष, विद्[4] धातुओंके उत्तर विकल्प करके आम् और भू प्रभृति का प्रयोग होताहै।

(१) कर्तृवाच्यमे आमके उत्तर प्रयुज्यमान भू और अस् धातु परस्मैपदि रहतेहैं; कृधातु परस्मै पद धातुमे परस्मैपद आत्मने पद धातुमे आत्मनेपद, और उभय पदमे उभय पद होताहै।
(२) ऋच्छ और ऊर्णु, धातु भिन्न क्योंकि इनके रूप आनर्च्छ ऊर्णुनाव, ऊर्णुनविथ (वा) ऊर्णुनुविथ ऊर्णुनु वे प्रभृति होतेहैं। (३) भ्वादि गणीय। (४) कम् (आत्) गुप, धूप, विच्छ्, पण्, पन्, और ऋत् (आत्) धातुओंके आदिष्ट रूप (४८ नियम) सेभी आम और भू प्रभृतिका प्रयोग विकल्पकरके होताहै। यथा, चकमे (वा) कामयाञ्चक्रे, जुगोप (वा) गोपायाञ्चकार, दुधूप (वा) धूपायाञ्चकार, विविच्छ (वा) विच्छायाञ्चकार, पेणे (वा) पणायाञ्चकार, पेने (वा) पनायाञ्चकार, आनर्त (वा) ऋतीयाञ्चक्रे।

१९५ आम् परे होनेसे धातुके अन्त्य और उपधालघु स्वर को गुण होताहै, पर विद का नहि

१९६ प्रथम और उत्तम पुरुषके एक वचन भिन्न लिट् विभक्तिमे जागृ धातुके ऋके स्थान मे अर् होताहै

जागृ (के) जागना

			[1]
जागराम्बभूव	जागराञ्चकार	जागरामास	जजागार
जागराम्बभूवतुः	जागराञ्चक्रतुः	जागरामासतुः	जजागरतुः
जागराम्बभूवुः	जागराञ्चक्रुः	जागरामासुः	जजागरुः

लुङ्

सेट् धातु

१९७ लुङ् विभक्तिमे (सेट्) धातु के उत्तर स् होताहै।

१९८ त्, :, इन दोनो विभक्तियों मे सकारसे परे ई होती है।

१९९ इ और ई इन दोनोंके मध्यवर्त्ती सकार को लोप होता है।

२०० सकारसे परे अन् के स्थानमे उः होताहै

धातु	प्र॰			म॰			उत्तम पुरुष		
क्रम्	अक्रमीत्,	अक्रमिष्टाम्,	अक्रमिषुः	अक्रमीः	अक्रमिष्टम्	अक्रमिष्ट	अक्रमिषं	अक्रमिष्व	अक्रमिष्म

२०१ सपरे होनेसे परस्मैपदमे, धातुका उपधा अकार विकल्प करके दीर्घ होता है[2] यथा (गद) अगादीत्, अगदीत्, अगादिष्टाम् अगदिष्टाम् ॥

२०२ तथा, रन्त, लन्त, वद्, व्रज् धातुओंका अकार नित्य दीर्घ होताहै। यथा; अचारीत्, अचालीत् अवादीत्, इत्यादि।

२०३ तथा — धातुके अन्तस्थित स्वरको वृद्धि होतीहै। यथा; (स्नु) अस्नावीत् अस्नाविष्टाम्, (तॄ) अतारीत्, अतारिषुः इत्यादि

२०४ लुङ् के परस्मैपदमे धातुके उपधालघु स्वरको गुण होताहै[4] [5] यथा

रुद	अरोदीत्	अरोदिष्टाम्	अरोदिषुः	अरोदीः	अरोदिष्टम्	अरोदिष्ट	अरोदिषम्	अरोदिष्व	अरोदिष्म

२०५ लुङ् के आत्मने पदमे धातुके अन्त्यस्वर और उपधा लघुस्वर को गुण होताहै[6] है।

(१) इसके प्रथम अ का लोप भी होजाताहै यथा जागार् जागरतुः इत्यादि ॥ (२) मान्त यान्त ह्रान्त क्षण, श्वस, वध और एकारान्त अर्थात् कख, कग, रग, लग, सग, स्थग, ह्रग, ह्लग, कट, चस, क्नथ, मथ, चन्, चद, हस भिन्न। (३) ऊर्णु की वृद्धि नहि होती। यथा अऊर्णवीत्। ऊर्णु, को विकल्प करके गुण वृद्धि होती है यथा और्णवीत्, और्णुवीत् दीधी, वेवी के अन्त्यस्वरका लोप होता है इ परे होनेसे यथा अदीधिष्ट दरिद्रा के आ का विकल्प करके लोपहोता है यथा; अदरिद्रीत् (वा) अदरिद्रासीत् श्वि और जागृको गुण होताहै वृद्धि नहि होती। यथा; अश्वयीत्, अजागरीत्।(४) कुचादिको गुण नहि होता (१९३ प॰ देखो)। (५) मृज् धातुको वृद्धि होती है यथा अमार्जीत्, अमार्जिष्टाम् इत्यादि (अनिट पक्षमे अमार्क्षीत् और कोईयोंके मतमे अमार्क्षीत् भी होती)। (६) कुचादिको गुण नहि होता (१९० २०२ प॰ देखो)

आर्णवीत

(शी) अशयिष्ट अशयिषाताम् अशयिषत अशयिष्ठाः अशयिषाथाम् अशयिढ्वम्[1] अशयिषि अशयिष्वहि अशयिष्महि)

(द्युत्) अद्योतिष्ट अद्योतिषाताम् अद्योतिषत अद्योतिष्ठाः अद्योतिषाथाम् अद्योतिढ्वम् अद्योतिषि अद्योतिष्वहि अद्योतिष्महि)

२०६ लुङ् के परस्मै पदमे भू धातुके उत्तरस्थ प्रत्ययान्त कार्य्य नहिं होते केवल अन् के स्थानमे वन् और अम् के स्थानमे वम् होता है

(भू.) अभूत् अभूताम् अभूवन् अभूः अभूतम् अभूत अभूवम् अभूव अभूम

२०७ तनादि गणीय धातुओंके न ण को आत्मने पद के मध्यम पु० और अन्य पुरुष मे विकल्प करके लोप होता है, और लोप पक्षमे स का भी लोप होता है। यथा; अतनिष्ट (वा) अतत अतनिष्ठाः (वा) अतथाः। न के लोप होने से सन् धातु के अकारको विकल्प करके दीर्घ होता है। यथा असात (वा) असनिष्ट, असाथाः (वा) असनिष्ठाः। आत्मने पद वृ धातु और ॠकारान्त धातुओं से उत्तर इ को विकल्प करके दीर्घ होता है। यथा; अवरिष्ट, अवरीष्ट, अस्तरिष्ट, अस्तरीष्ट। ग्रह के इ को दीर्घ होता है, यथा; अग्रहीत, अग्रहीष्टाम्। गुह के उ को ऊ होता है। यथा; अगूहीत् अगूहिष्टाम्।

अनिट् धातु

२०८ सपरे होनेसे, परस्मै पदमे अनिट् धातुके अन्त्य[1] और उपधा लघु स्वर को वृद्धि होती है।

२०९ तथा, आत्मने पदमे धातुके अन्तस्थित ऋ[2] और उपधा लघु स्वर को गुण नहिं होता।

२१० त, थ[3] ध, परे होने से वर्ग के प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, वर्ण, श, ष, स् और ह्रस्व स्वर से परे स् को लोप होता है॥

धातु	प्र.	म.	उ.
(कृ)	अकार्षीत् अकार्ष्टाम् अकार्षुः	अकार्षीः अकार्ष्टम् अकार्ष्ट	अकार्षम् अकार्ष्व अकार्ष्म
	अकृत अकृषाताम् अकृषत	अकृथाः अकृषाथाम् अकृढ्वम्	अकृषि अकृष्वहि अकृष्महि
(शप्)	अशाप्सीत् अशाप्ताम् अशाप्सुः	अशाप्सीः अशाप्तम् अशाप्त	अशाप्सम् अशाप्स्व अशाप्स्म
	अशप्त अशप्साताम् अशप्सत	अशप्थाः अशप्साथाम् अशब्ध्वम्	अशप्सि अशप्स्वहि अशप्स्महि

(१) अ आ भिन्न स्वर से परे ध्वम् को ढ्वं होजाता है; पर ह य् व् र् ल से परे सेट् ध्वम् को विकल्प करके ढ्वम् होता है। (२) लुङ् मे मि, मी, दी धातु आकारान्त होजाते हैं और ली विकल्प करके। गृ धातु को वृद्धि नहिं होती और धु को विकल्प करके (३) लुङ् के आत्मने पदमे ऋ, ॠ, की ऋ, ॠ को ईर् और प, व, की ऋ, ॠ को ऊर् होता है अनिट् स परे होनेसे। यथा; अस्तीर्ष्ट इत्यादि; अवूर्ष्ट इत्यादि कु धातुको भी गुण नहिं होता। यथा; अकुष्ट (४) स् को त् होता है ध् परे होनेसे। यथा; (तस्) अतत्ध्वम्।

दंश् अदाङ्क्षीत् अदांष्टां अदाङ्क्षुः अदांक्षीः अदांष्टं अदांष्ट अदाङ्क्षं अदाङ्क्ष्व अदांक्ष्म

वह् अवाक्षीत् अवोढां अवाक्षुः अवाक्षीः अवोढम् अवोढ अवाक्षम् अवाक्ष्व अवाक्ष्म

अवोढ अवक्षाताम् अवक्षत अवोढाः अवक्षाथाम् अवोढ्वं अवक्षि अवक्ष्वहि अवक्ष्महि

नह् अनात्सीत् अनाद्धाम् अनात्सुः अनात्सीः अनाद्धम् अनाद्ध अनात्सम् अनात्स्व अनात्स्म

वस् अवात्सीत् अवात्ताम् अवात्सुः अवात्सीः अवात्तम् अवात्त अवात्सम् अवात्स्व अवात्स्म

२११ परस्मै पदमे नम्, यम्, रम्, और आकारान्त धातुको तः भिन्न विभक्तिमे सबसे पहिले स् और इ होता है। यथा; अनंसीत्, अनंसिष्टाम्, अज्ञासीत्, अज्ञासिषुः।

२१२ लुङ् के परस्मै पदमे दा, धा, स्था, के उत्तर स्को लोप होता है, और आत्मने पदमे आकारके स्थानमे इकार होता है।

(दा) अदात्, अदाताम्, अदुः[1] अदाः अदातम् अदात् अदाम् अदाव अदाम

अदित अदिषाताम् अदिषत अदिथाः अदिषाथाम् अदिढ्वम् अदिषि अदिष्वहि अदिष्महि

२१३ लुङ् विभक्तिमे इ धातुके स्थानमे गा होता है। अदिढ्वम्

२१४ परस्मै पदमे इ स्थानीय गा और पा धातुके स्को लोप होता है। यथा; अगात् अगाताम् अगुः अपात् अपाताम् अपुः इत्यादि

२१५ घ्रा, धे, छो, शो, सो, धातुओंका परस्मै पदमे, विकल्प करके, स् लोप होता है; सलोप होनेसे इनके दा धातुके न्याइ रूप होतेहैं, और न होनेसे ज्ञा धातुके तुल्य होतेहैं। यथा; अघ्रासीत् अघ्रासिष्टाम् अघ्रासिषुः; अघ्रात, अघ्राताम्, अघ्रुः।

२१६ लुङ् विभक्तिमे अध्ययनार्थ इ धातुके स्थानमे विकल्पकरके गी होताहै, और गी के ईकारको गुण नहिं होता। यथा, अध्यगीष्ट, अध्यगीषाताम्, अध्यगीषत; अध्यैष्ट, अध्यैषाताम्, अध्यैषत

२१७ लुङ् विभक्तिमे अजधातुके स्थानमे विकल्पकरके वी होती है। यथा, अवैषीत् (वा) आजीत्

(आशीर्लिङ् और) लुङ् विभक्तिमे हन् धातुको वध् होता है। यथा; अवधीत्, अवधिष्टाम्।

२१८ अनिट् मस्ज धातुके सकारसे परे न आगमहै (१३२ देखो)। अमाङ्क्षीत्।

२१९ भ्रस्ज धातुके र को विकल्प करके ऋ होता है। यथा; अभ्राक्षीत् (वा) अभार्क्षीत्, अभ्रष्ट (वा) अभर्ष्ट।

---

[1] स्का लोप होने से भी आकारान्त धातुके परे अन् को उस् होता है।

२२० लुङ् विभक्तिमे पुषादि[1] और ऌदित[2] धातुओं के उत्तर अ होता है[3]

धातुः	प्र॰	म॰	उ॰
(पुष)	अपुषत् अपुषताम् अपुषन्	अपुषः अपुषतम् अपुषत	अपुषम् अपुषाव अपुषाम
(गम)[4]	अगमत् अगमताम् अगमन्	अगमः अगमतम् अगमत	अगमम् अगमाव अगमाम

२२१ लुङ् विभक्तिमे वच् धातुके स्थान मे वोच्, पत् के स्थानमे पप्त और अस् के स्थान मे आस्थ और शास् (उं) के स्थानमे शिष् होता है।

वच्	पत्	अस्
अवोचत् अवोचताम् अवोचन्	अपप्तत् अपप्तताम् अपप्तन्	आस्थत् आस्थताम् आस्थन्

२२२ लुङ् विभक्तिमे नश् धातुके स्थानमे विकल्प करके नेश् होता है।
यथा; अनेशत् अनेशताम् अनेशन् अनशत् अनशताम् अनशन्

२२३ तथा द्रु, श्रि, स्रु, धेट् कम् धातु अभ्यस्त होते हैं और सारे अभ्यस्त कार्य्य उनमे होते हैं।

द्रु	श्रि	स्रु
अदुद्रुवत् अदुद्रुवताम् अदुद्रुवन्	अशिश्रियत् अशिश्रियताम् अशिश्रियन्	असुस्रुवत् असुस्रुवताम् असुस्रुवन्

२२४ लुङ् विभक्तिमे भिदादि[5] प्रभृति[6] धातुओंके उत्तर विकल्पकरके अ होता है

भिद्	रुध्
अभिदत् अभिदताम् अभिदन्	अरुधत् अरुधताम् अरुधन्
अभैत्सीत् अभैत्ताम् अभैत्सुः	अरौत्सीत् अरौद्धाम् अरौत्सुः

२२५ तथा द्युतादि[7] धातु से भी विकल्प करके अ और परस्मैपद होते हैं और दूसरे पक्षमे आत्मनेपद। यथा अद्युतत् (वा) अद्योतिष्ट

(१) पुषादि धातु ये हैं। असु, उच्, ऋध्, कुप्, क्रुस, क्रुश, क्रुध्, क्लिद्, क्लिद, क्षुध्, क्षुभ्, गृध, गृध्, जस, डिप्, तम्, तृप्, नस, तुभ्, तुष, तृप्, तृष्, दस, दुष्, द्रुह्, पुष्, भ्रंश, भ्रश, मस, मुस, मुह्, यस, युप, रध्, रुप्, रुष्, लुभ, लुट, वस, विस, बुस, शुध्, शुष्, श्लिष्, सिध्, स्निह्, स्विद्, हृष्,

(२) ऌ, ञि न् धातुओंमे इत् गयाहै वे येहैं आप्, गम, घस, पिष्, मुच्, लृप्; विद्, विष्, शक्, शद्, शिष्, सद्, सृप्। लुङ् मे अद् धातुके स्थानमे घस् धातु होता है।

(३) आत्मनेपदमे लिप्, सिच्, ह्वे, धातुओंके उत्तर विकल्प करके होताहै। (४) सम् पूर्वक गम् धातु आत्मनेपद होताहै। और तब इसके म का विकल्पकरके लोप होताहै लुङ् (और आशीर्लिङ्) मे यथा; समगंस्त (वा) समगत (५) भिदादि धातु सब इरित हैं यथा: उहृ, तृद्, तुष्, तुत (वा) च्युत, छृद, छिद्, क्षुद्, तुद, तृद्, दृश, उरु, निज्, विच्, विज, वृह्, बुध्, युज, भिद्, युज, रिच्, रुध्, शुच्, श्युत, स्कन्द, स्फुट। (६) मृश, स्पृश, कृष,

(७) द्युतादि धातु येहैं यथा क्लृप, क्षुभ, शुठ्, नभ, द्युत, ध्वंस, भ्रंस, भिद, रुच्, रुट, लट, लुठ, वृत, वृध, शुभ, श्वप्, श्वित, श्विह, स्यन्द, स्रंभ, स्रंस।

२२६ अपरे होनेसे ऋ ॠ और ऌ ॡ को गुण होताहै। यथा; असरत्, आरत्, अजरत् इत्यादि

२२७ अपरे होनेसे दृश् धातुके स्थानमे दर्श होताहै; अभिन्न पक्षमे द्राघ होताहै। यथा; अदर्शत्, अदर्शताम्, अदर्शन्, अद्राक्षीत्, अद्राष्टाम्, अद्राक्षुः

२२८ ख्यादि धातुओं के अन्त्य स्वरका लोप होताहै। यथा; अख्यत्, अस्थत् अह्वत् इत्यादि

२२९ अ होनेसे धातुके उपधा न् का लोप होताहै। यथा; अस्रभत्, अस्यदत्, अस्कदत्, अभ्रशत्

२३० लुङ् विभक्तिमे दिशादि[(१)] धातुके उत्तर स होताहै; परन्तु सनिमित्तक गुण और इ प्रभृति कार्य्य नहि होते। यथा; दिश्, अदिक्षत् अदिक्षताम् अदिक्षन् (एवं) अद्विक्षत् अधुक्षत् इत्यादि[(१)]

२३१ लिह्, दिह्, गुह्, दुह् धातुओंसे परे विकल्प करके अका लोप होताहै त, थाः, वहि, ध्वम् विभक्तियोंमे यथा। अलीढ, अलीढ़ा, अलिह्वहि, अलीढ्वम्।

२३२ जन्, बुध, पद्, पूर्, और दीप् धातुसे लुङ् के आत्मने पदके "त" के स्थानमे विकल्प करके इ होताहै; और वह इ परे होनेसे बुधके स्थानमे बोध होताहै। यथा; अजनि, अजनिष्ट; अबोधि, अबुद्ध, अपादि, अपूरि, अपूरिष्ट; अदीपि, अदीपिष्ट।

ह्वादिगण

२३३ लङादि चार विभक्तियोंमे ह्वादिगणीय धातु अभ्यस्त होतेहैं; और लिट् प्रकरणमे अभ्यस्त धातुके पूर्व्वभागके जो २ कार्य्य निर्दिष्ट हुएहैं, वे सब यहांभी होतेहैं।

२३४ ति, सि, मि, तु, आनि, आव, आम, ऐ, आवहै आमहै, त, :, इनविभक्तियोंमे ह्वादिगणीय धातुके अन्त्यस्वर और उपधा लघुस्वरको गुण होताहै।

हु (पं) हवनकरना

२३५ हुधातुके उकारके स्थानमें व् होताहै, अन्ति अन्तु विभक्ति परे होनेसे। और उकारका विकल्प करके लोप भी होजाताहै वः, मः, विभक्ति परे होनेसे।

(१) जिन अनिट् धातुओंकी उपधामे इ उ ऋ है और अन्त्यमे श, ष, स, ह वे दिशादि हैं।

प्र॰ म॰ उ॰

लट् जुहोति जुहुतः जुह्वति जुहोषि जुहुथः जुहुथ जुहोमि जुहुवः जुहुमः
२३९ हु धातु के लोट् के हि के स्थान मे धि होता है। जुह्वः जुह्मः
लोट् जुहोतु जुहुताम् जुह्वतु जुहुधि जुहुतम् जुहुत जुहवानि जुहवाव जुहवाम
लङ् अजुहोत् अजुहुताम् अजुहवुः अजुहोः अजुहुतम् अजुहुत अजुहवम् अजुहुव अजुहुम
लिङ् जुहुयात् जुहुयाताम् जुहुयुः जुहुयाः जुहुयातम् जुहुयात जुहुयाम् जुहुयाव जुहुयाम

ह्री (पं) लज्जा करना

लट् जिह्रेति जिह्रीतः जिह्रियति जिह्रेषि जिह्रीथः जिह्रीथ जिह्रेमि जिह्रीवः जिह्रीमः

भी (पं) डरना

लट् बिभेति बिभीतः[1] बिभ्यति बिभेषि बिभीथः बिभीथ बिभेमि बिभीवः बिभीमः
२३७ अभ्यस्त भृ धातु के पूर्व भृ के स्थान मे बि होता है।
(भृ) बिभर्ति बिभृतः बिभ्रति बिभर्षि बिभृथः बिभृथ बिभर्मि बिभृवः बिभृमः
२३८ ति, सि, मि, तु, तः, :, भिन्न विभक्ति परे होने से दा और धा धातु के आकार को लोप होता है।
(दा) ददाति दत्तः ददति ददासि दत्थः दत्थ ददामि दद्वः दद्मः
दत्ते ददाते ददते दत्से ददाथे दद्ध्वे ददे दद्वहे दद्महे
२३९ पर भाग का आकार लोप होने से और त, थ, स, ध्व परे होने से धा धातु के पूर्व भाग के ध के स्थान मे द नहि होता; परन्तु त, थ, स, परे होने से पर भाग के ध् के स्थान मे त् होता है।
(धा) दधाति धत्तः दधति दधासि धत्थः धत्थ दधामि दध्वः दध्मः
धत्ते दधाते दधते धत्से दधाथे धद्ध्वे दधे दध्वहे दध्महे
२४० लोट् की हि विभक्ति मे अभ्यस्त दा धातु के स्थान मे दे और धा के स्थान मे धे होता है। यथा देहि, धेहि

हा (पं) छोड़ना

२४१ अगुण स्वर वर्ण वा यादादि परे होने से हा धातु के आकार का लोप होता है।
२४२ अगुण व्यञ्जन वर्ण परे होने से हा धातु के आकार के स्थान मे इ और

(१) अगुण व्यञ्जन वर्ण परे होने से भी धातु का ईकार विकल्प करके ह्रस्व होता है। बिभितः, बिभीतः बिभिमः बिभीमः इत्यादि।

ई होते हैं।

लट् जहाति जहितः जहति जहासि जहिथः जहिथ जहामि जहिवः जहिमः
जहीतः जहीथः जहीथ जहीवः जहीमः

लोट् जहातु जहिताम् जहतु जहिहि[1] जहितम् जहित जहानि जहाव, जहाम
जहीताम् जहीहि जहीतम् जहीत

लिङ् जह्यात् जह्याताम् जह्युः जह्याः जह्यातं जह्यात जह्याम् जह्याव जह्याम

हा (आत्) जाना, मा (आत्) मापना

२४३ हा और मा धातु के पूर्व भाग के आकार के स्थान मे इकार होता है।
२४४ अगुण स्वर वर्ण परे होने से उत्तर भाग का आकार लोप होता है।
२४५ अगुण व्यञ्जन वर्ण परे होने से उत्तर भाग के आकार के स्थान मे ई होती है।

लट् जिहीते जिहाते जिहते जिहीषे जिहाथे जिहीध्वे जिहे जिहीवहे जिहीमहे

२४६ ऋ धातु के पूर्व भाग के स्थान मे इय होता है। यथा, (लट्) इयर्त्ति, इयृत, इयृति (लङ्) ऐयः, ऐयृताम्, ऐयरुः

२४७ लङादि चार विभक्तियों मे निज्, विज्, विष, धातु के पूर्व भाग के इ के स्थान मे ए होता है। यथा,

लट् नेनेक्ति नेनिक्तः नेनिजति नेनेति नेनिक्थः नेनिक्थ नेनेज्मि नेनिज्वः नेनिज्मः

२४८ आनि, आव, आम, ऐ, आवहै, आमहै, अम्, इन विभक्तियों मे निज्, विज्, विष, धातु के पर भाग को गुण नहिं होता। यथा, नेनिजानि नेनिजाव, नेनिजाम, नेनिजै, नेनिजावहै, नेनिजामहै, अनेनिजम्॥

२४९ जन धातु का अकार दीर्घ होता है और न का लोप होता है नै[2] य दि परे होने से और विकल्प करके य परे होने से। और अगुण स्वर परे होने से परभाग के अ का लोप होता है। यथा (लट्) जजन्ति, जजातः, जज्ञति (लङ्) अजजन्, अजजाताम्, अजज्ञुः।

२५० भस् धातु के परभाग का अकार लुप्त होता है अगुण स्वर परे होने से। यथा; बभस्ति, बभस्तः बप्सति।

(१) इसका तीसरा पद जहादि भी होता है। (२) न मे नि का ग्रहण नहिं।

णिजन्त प्रकरण

२५१ प्रेरणा अर्थमे धातुके उत्तर णिच् होता है। णिच्का इ मात्र रहता है। णिजन्तधातु उभय पद होते हैं।

२५२ णिच् होनेसे धातु के अन्त्यस्वर और उपधा अकार की वृद्धि होती है। यथा; श्रु + इ = श्रावि, स्रु + इ = स्रावि, कृ + इ = कारि, हृ + इ = हारि, चल + इ = चालि, दह + इ = दाहि, पच + इ = पाचि, वद + इ = वादि, इत्यादि।

२५३ णिच् होनेसे धातु के उपधा लघुस्वर को गुण(१) होता है। यथा; लिप + इ = लेपि, सिच् + इ = सेचि, मुच + इ = मोचि, दृश + इ = दर्शि, इत्यादि।

२५४ जिन धातुओं के उत्तर णिच् होता है वे णिजन्त धातु कहलाते हैं। यथा; श्रु धातुके उत्तर णिच् होनेसे श्रावि होता है, यह श्रावि शब्द एक स्वतन्त्र धातु गिना जाता है, और सारे धातु कार्य्य को प्राप्त होता है।

२५५ लङादि चार विभक्तियों मे णिजन्त धातु भ्वादिगणीय धातुओं के तुल्य होते हैं।

श्रावि धातु

लट् श्रावयति, श्रावयतः, श्रावयन्ति श्रावयसि श्रावयथः श्रावयथ श्रावयामि श्रावयावः श्रावयामः

लोट् श्रावयतु श्रावयताम् श्रावयन्तु श्रावय श्रावयतम् श्रावयत श्रावयाणि श्रावयाव श्रावयाम

(१) परन्तु ह्री, री, ब्ली, ऋ धातुओं को गुण होता है और उनके उत्तर प आता है। यथा ह्रेपयति, रेपयति, ब्लेपयति, अर्पयति। भी धातुके स्थानमे भीष् और (स्मि) धातु के स्थानमे स्माप होता है, और आत्मनेपद होता है, जो कर्त्ता अन्य निरपेक्ष होकर भय अथवा विस्मय देवे। यथा सर्प्पः शिशुं भीषयते (यहां सर्प्प अन्य की अपेक्षा न करके आप भय देता है) कुरुषः सर्प्पेण शिशुं भाययति (यहां कर्त्ता को अन्य की अपेक्षा है) (पक्षे) भापयते। स्मापयते, स्माययति।
दीधी, वेवी, और दरिद्रा के अन्त्यस्वर का लोप होता है। यथा दीधयति, वेवयति, दरिद्रयति। दृ, स्मृ, जागृ, नृ, स्तृ, और (भय अर्थमे) दृ को गुण होता है। यथा; दरयति, स्मरयति, जागरयति, नरयति, दरयति इत्यादि। दॄ (विदारणे) का तो "दारयति" होता है। गॄ के दो रूप होंगे यथा गारयति, गालयति। (२) मृज् को वृद्धि होती है। यथा; मार्जति

लङ्	अश्रावयत्	अश्रावयताम्	अश्रावयन्	अश्रावयः	अश्रावयतम्	अश्रावयत	अश्रावयम्	अश्रावयाव	अश्रावयाम
लिङ्	श्रावयेत्	श्रावयेताम्	श्रावयेयुः	श्रावयेः	श्रावयेतम्	श्रावयेत	श्रावयेयम्	श्रावयेव	श्रावयेम

२५६ णिच् प्रत्यय होनेसे अमन्त[1] और घटादि धातुके अन्त्य स्वर और उपधा अकार को वृद्धि नहि होती[2]। यथा;

अमन्त

गम्	दम्	रम्	शम्
गमयति	दमयति	रमयति	शमयति

घटादि

घट्	व्यथ्	जन्	ज्वर्	त्वर
घटयति	व्यथयति	जनयति	ज्वरयति	त्वरयति

२५७ तथा आकारान्त[3] धातुके उत्तर प होता है। यथा; (स्था) स्थापयति, इत्यादि।

२५८ तथा धातु के अन्त्य ए, ऐ, ओ, को आ होकर उसके उत्तर भी प[4] होता है यथा (दे)।(दो) दापयति (गै) गापयति।

---

(१) नमप्रभृति को विकल्प करके वृद्धि होती है। कोइयों को नित्यवृद्धि होती है यथा (कम) कामयति

(२) ज्वलप्रभृति को विकल्प करके वृद्धि होती है। यथा; ज्वलयति (वा) ज्वाल...ति।

(३) वा (अदादि) धातु के उत्तर ज भी होता है। यथा वाजयति। पा धातु के उत्तर, पानार्थ मे य, और रक्षार्थ मे ल होता है। यथा (पानार्थ) पाययति (रक्षार्थ) पालयति।

(४) किसी २ धातु के उत्तर य भी होता है। यथा; (ह्वे) ह्वाययति, (वे) वाययति, (व्ये) व्याययति, (शो) शाययति, (छो) छाययति, (सो) साययति। ज्ञा, स्ना, श्रा (वा) श्रै और ग्लै धातु के आकार को विकल्प करके ह्रस्व भी होता है। यथा ज्ञापयति (वा) ज्ञपयति इत्यादि। स्ना और ग्लै के पूर्व यदि उपसर्ग हो तो उनके आ को अ नहि होता यथा परिग्लापयति। ज्ञै के आ को नित्य ह्रस्व होता है यथा ज्ञपयति।
कई एक इवर्णान्त धातु के अन्त्य इ ई को आ होकर उनके आगे प होता है। यथा (जि) जापयति (मि) (मी) मापयति, (क्री) क्रापयति, (अधि + इ) अध्यापयति। चि के चार रूप होते हैं। यथा चापयति, चपयति, चाययति, चययति इत्यादि। ली के भी चार रूप होते हैं, यथा लापयति, . लाययति, लालयति, लीनयति। भी के दो रूप; यथा, भीषयति, भाययति धू के दो रूप; यथा, धूनयति, धावयति।

२५९ कुछ धातुओंके रूप विलक्षण होतेहैं। यथा; (रुह्) रोहयति (वा) रोपयति, (क्नूय् वा क्नू) क्नोपयति (दुष्) दूषयति[1] (हन्) घातयति, (शद्) शातयति, (स्फुर्) स्फारयति, वा, स्फोरयति (स्फाय्) स्फावयति, (स्माय्) स्मापयति, (मृज्) मार्जयति, (गुह्) गूहयति, (सिध्) साधयति, (यज्ञादिकर्मके अर्थमे) सेधयति, (ह्वे) ह्वाययति, (रञ्ज) (मृगया अर्थमे) रजयति (मृगान् बाधः), (अन्यत्र) रञ्जयति (मृगान् तृणदानेन[2])। (रध्) रन्धयति, (जभ्) जम्भयति, (रभ्) रम्भयति (लभ्) लम्भयति। (इ) गमयति[3]।

गुप्, विच्छ्, धूप्, पण्, पन्, ऋत् धातुओंके दो दो रूप होंगे। यथा गोपयति (वा) गोपाययति इत्यादि।

कॄत के रूप कीर्तयति इत्यादि होंगे।

लुट्, लृट्, लृङ्,

लुट्	आवयिता[4]	आवयितारौ	आवयितारः	आवयितासि	आवयितास्थः	आवयितास्थ	आवयितास्मि	आवयितास्वः	आवयितास्मः
लृट्	आवयिष्यति	आवयिष्यतः	आवयिष्यन्ति	आवयिष्यसि	आवयिष्यथः	आवयिष्यथ	आवयिष्यामि	आवयिष्यावः	आवयिष्यामः
लृङ्	अआवयिष्यत्	अआवयिष्यताम्	अआवयिष्यन्	अआवयिष्यः	अआवयिष्यतम्	अआवयिष्यत	अआवयिष्यम्	अआवयिष्याव	अआवयिष्याम

आशीर्लिङ्

परस्मैपद

२६० आशीर्लिङ् के परस्मैपदमे णिजन्त धातुकी इका लोप होताहै।

आव्यात् आव्यास्ताम् आव्यासुः आव्याः आव्यास्तम् आव्यास्त आव्यासम् आव्यास्व आव्यास्म

आत्मनेपद

आवयिषीष्ट आवयिषीयास्ताम् आवयिषीरन् आवयिषीष्ठाः आवयिषीयास्थाम् आवयिषीध्वम् आवयिषीय आवयिषीवहि आवयिषीमहि

लिट्

२६१ लिट् विभक्तिमे णिजन्त धातुके ऊपर आम् होताहै; और आम् के अन्तमे भू, कृ, अस्, इन तीन धातुओंका प्रयोग होताहै। यथा; आवयाम्बभूव, आवयाञ्चकार, आवयामास, इत्यादि।

(१) चित्तकी अप्रसन्नताके अर्थमे विकल्पकरके। यथा क्रोधः चित्तं दूषयति, दोषयति वा
(२) मृगया शब्दका अर्थ पशुवध है, इसीलिये पशुभिन्न अन्यजन्तुके वधमे न लोप नहि होता। यथा, रञ्जयति पक्षिणोबाधः
(३) प्रत्यानअर्थमे इको गमनहि होता। यथा; प्रति + इ = प्रत्याययति। (४) अनिट् धातु णिजन्त होनेसे उनके ऊपर इ लगताहै।

लुङ्

२६२ लुङ् विभक्तिमे णीजन्त धातुके उत्तर अ होता है।

२६३ "अ" होनेसे णीजन्त धातु अभ्यस्त होते हैं, और लिट् प्रकरणके सारे अभ्यस्त कार्य्य को प्राप्त होते हैं।

२६४ अ परे होनेसे णीजन्त धातुके पर भागका, अन्तस्थित इकार लोप होता है। (पर निमित्तक कार्य्य, अर्थात् य प्रभृति बने रहते हैं)

२६५ तथा ———— उपधा गुरु स्वर लघु होता है।(१)

२६६ लुङ् विभक्तिमे णीजन्त धातुके पूर्व्वभागका लघुस्वर गुरु होता है।

सिच् + इ = सेचि ———— मुच् + इ = मोचि

असीषिचत् असीषिचताम् असीषिचत् | अमूमुचत् अमूमुचताम् अमूमुचन्

२६७ परवर्ण गुरु स्वर युक्त होनेसे पूर्व्वभागका लघु स्वर गुरु नहिं होता।

(निन्द + इ = निन्दि) ———— शिल्त + इ = शिल्ति)

अनिनिन्दत् अनिनिन्दताम् अनिनिन्दन् | अशिशिलत् अशिशिल्तताम् अशिशिल्तन्

(चिन्त + इ = चिन्ति) अचिचिन्तत,

२६८ लुङ् विभक्तिमे णीजन्त धातुके पूर्व्वभागके अकारके स्थानमे ई होती है।(२) यथा;

चल + इ = चालि	पत् + इ = पाति	भज + इ = भाजि	हस + इ = हासि
अचीचलत्	अपीपतत्	अबीभजत्	अजीहसत्

२६९ परवर्त्ती गुरुस्वर युक्त होनेसे ई नहिं होती, यथा

(शास + इ = शासि) अशशासत्, (भल + इ = भलि) अबभलत्, (लङ्घ + इ = लङ्घि) अललङ्घत्। (भ्राज + इ = भ्राजि) अबभ्राजत् (लल + इ = ललि) अललतत्, (याच् + इ = याचि) अययाचत्

२७० संयुक्त वर्ण परे होनेसे ह्रस्व इ होती है। यथा;

(व्यथ + इ = व्यथि) अविव्यथत् (ज्ञप + इ = ज्ञपि) अजिज्ञपत्

(१) ढौकि प्रासि प्रभृति कई एक णीजन्त धातुके उपधा गुरुस्वर लघु नहिं होते। यथा; अडुढौकत्

(२) दृ धातुका नहिं होता। यथा; अददरत्। अनेकस्वर विशिष्ट धातुका विकल्प करके होता है; यथा (चकासि) अचीचकासत् अचचकासत्॥

२५१ णिजन्त भ्राज, दीप, प्रभृति धातुओंके परभागका उपधागुरु स्वर विकल्पकरके लघु होता है। यथा; (भ्राजि) अबिभ्रजत् अबिभ्राजत् (दीपि) अदीदिपत्, अदिदीपत्, अजीजिवत्, अजिजीवत्।

२५२ जिन धातुओंकी उपधामे ऋ, ॠ, वा ऌ हो, णिजन्त लुङ् विभक्ति मे, उनके परभाग मे विकल्प करके ऋ, ऌ, स्थिर रहती है। यथा; (वृत + इ = वर्त्ति), अवीवृतत्, अववर्त्तत्। (कृत[1] + इ = कीर्त्ति) अचीकृतत्, अचिकीर्त्तत्, (कॢप् + इ = कल्पि) अचीकॢपत्, अचकल्पत् अचिकल्पत्।

२५३ णिजन्त लुङ् विभक्तिमे कुछ धातुओंके रूप विलक्षण होते हैं। यथा (पा + इ = पायि) अपीप्यत्, (स्था + इ = स्थापि) अतिष्ठिपत्, (घ्रा + इ = घ्रापि) अजिघ्रिपत् (वा) अजिघ्रपत्, (अधि + इ + इ = अध्यापि) अध्यजीगपत् (चेष्ट + इ) अचचेष्टत् (वा) अचिचेष्टत्, (ह्वे + इ = ह्वायि) अजुहावत् (वा) अजूहवत् (त्वर + इ = त्वरि) अतत्वरत् (स्तॄ + इ = स्तारि, स्तृ + इ = स्तारि) अतस्तरत् अतिस्तरत् (दॄ + इ = दारि) अददरत्, (द्युत + इ = द्योति) अदिद्युतत्, (श्वि + इ = श्वायि) अशूशवत् (वा) अशिश्वयत्, (स्मृ + इ = स्मारि) असस्मरत्, (स्वप् + इ = स्वापि) असूषुपत्, (कथ + इ = कथि) अचकथत् (वा) अचीकथत्, (गण + इ = गणि) अजगणत् (वा) अजीगणत्, (प्रथ + इ = प्रथि) अपप्रथत्।

२५४ णिजन्त लुङ् विभक्तिमे, स्वरादि धातुके पर व्यञ्जन वर्णको द्वित्व होकर पहिले व्यञ्जनके आगे इ लगती है। यथा (ऊह् = अ + ऊजिह् + अ + त) औजिहत्, (आप्) आपिपत्, (ईड्) ऐडिडत्

२५५ तथा स्वरादि धातुका पर वर्ण यदि र् वा न् युक्त हो तो उस वर्णका द्वित्व होनेसे पहिलेके साथ र् वा न् रहता है, दूसरे के साथ नहि। यथा, (अर्ह्) आर्जिहत्, (ऋधू + इ = अर्धि) आर्दिधत्, (उन्द्) औन्दिदत्, (ऋ + इ = अर्पि) आर्पिपत्।

---

(१) कृत की ऋ को ईर् होता है इ परे होनेसे।

२७६ णिजन्तलुङ्मे स्वरादिधातुका परवर्ण यदि र् न् भिन्न वर्ण से युक्त हो तो प्रथम अज्झन का द्वित्व होता है। यथा (ईक्ष) ऐचिक्षत्, (अम्भ) आबिभत्

२७७ तथा स्वरादिधातुका परवर्ण यदि सस्वर हो तो सस्वर कोहि द्वित्व होता है। यथा। (ऊर्णु) और्णुनवत्, (अवधीर्) आववधीरत्, (अन्ध) आन्दधत्, (ऊन) औननत्

२७८ तथा श्रु, स्रु, द्रु, प्रु, प्लु, और च्यु, धातुके पूर्व्व भाग के अकार के स्थान मे इ और उ होता है। यथा, अशिश्रवत्, असुस्रवत्; अदिद्रवत्, अदुद्रवत्, इत्यादि।

चुरादिगण

२७९ चुरादिगणीय धातुओंके उत्तर स्वार्थमे णिच् होता है; और णिजन्त धातुके कार्य्य होते है[१]

(चुर + इ = चोरि)

लट्	लोट्	लङ्	लिङ्	लुट्	लृट्	लृङ्	लिङ्	लिट्
चोरयति	चोरयतु	अचोरयत्	चोरयेत्	चोरयिता	चोरयिष्यति	अचोरयिष्यत्	चोर्य्यात्	चोरयामास

लुङ् अचूचुरत्

अकारान्त धातु[२]

२८० णिच् होनेसे धातुके अन्तस्थित अकारको लोप होता है; और फेर गुण वृद्धि नहिं होती। यथा, (रच) रचयति रचयतु रचयामास[३]

(१) कोईयोंके मतमे मृष् धातुको गुण नहि होता यथा मृषयति।

(२) यथा। अङ्क, अङ्ग, अंच, अर्थ, अन्ध, अवधीर, अंश, अस, आन्दोल, हिन्दोल, ऊन, कर्ण, कथ, केल, केत, काल, कुण, गुण, ग्राम, कुमार (वा) कुमाल, कुट्ट, कुट, कुण, कृप, केत, तप, लोट (वा) खोट (वा) खोड़, खच, खेट (वा) खेड़, (वा) खोट, गण, गवेष, गर्व्व, गद्द, गढ़, गोम, चह, चित्र, छिद्र, कर्ण, छद, छेद, तीर, त्रप, दुःख, दण्ड, चेक, ध्वन, निवास, पट, वट, पर्ण, पत, पद, पल्पुल, वल्पुल, पंष, पश, पुट, पार, तीर, प्रेङ्खोल, भाज, भाम, मह, मिश्र, मूत्र, मृग, चर, रव, रस, रह, रूप, रूक्ष, लज, लज्ज, लड, लाड, लाभ, वट, वण्ट, वर्ण, वर वत्सल, वस, वष्क, विष्क, वात, वास, वीज, वेल, काल, वेत, (श्वेत), व्यय, (वित्त), व्रण, शठ, श्वठ, प्रीत, शूर, वीर, श्रथ, श्लथ, सभाज, संग्राम, साङ्केत, सत्र, साम, सार, कृप, सुख, सूच, सूत्र, स्तन, गद, स्तेन, स्तोम, स्थूल, स्पृह, स्फुट, स्वर, हिन्दोल, इत्यादि।

(शाकटायनके मतमे इन धातुओंके पीछे अप लगता है-यथा कथापयति।(पद, गृह, मृग, कुह, शूर, वीर, स्थूल, अर्थ, सत्र, गर्व्व धातु आत्मनेपद हैं।) (३) गृह धातु की मकको ग भी होता है यथा गाहयति।

२८१ लुङ् विभक्तिमे अकारान्त धातुके पूर्व्वभागका लघुस्वर गुरु नहिं होता, और अकार के स्थानमे इ अथवा ई नहिं होती। यथा; अररचत्

२८२ तथा कथ और गण धातुके पूर्व्वभागके अकारके स्थानमे विकल्पकरके ई होती है। यथा; अचीकथत् (वा) अचकथत्; अजीगणत् (वा) अजगणत्

सनन्त प्रकरण

२८३ इच्छा अर्थमे धातुके उत्तर सन् प्रत्यय होता है; सन् का स मात्र रहता है।

२८४ सन् प्रत्यय परे होनेसे धातुके उत्तर इ होती है; परन्तु अनिट् धातुके उत्तर नहिं होती[1]

२८५ सन् प्रत्ययान्त धातु अभ्यस्त होते हैं, और सारे अभ्यस्तकार्यो को प्राप्त होते हैं।

२८६ सन् प्रत्ययान्त धातुके पूर्व्वभागके अकारके स्थानमे इकार होता है।[2]

लट्

पठ	वद	जीव
पिपठिषति	विवदिषति	जिजीविषति

२८७ स्वरादि धातुमे इ युक्त परवर्णको द्वित्व होता है। यथा; (अट) अटिटिषति, (अश) अशिशिषति (ऋ) अरिरिषति, पर ऋधु और पत धातुके अभ्यस्त रूप विकल्प करके ईर्त्स और पित्स भी होते हैं। यथा (ऋधु) अर्दिधिषति (वा) ईर्त्सति; इ, उ, धातुके रूप ईषिषति ऊषिषति प्रभृति होते हैं (ऊर्णुके) ऊर्णुनुषति ऊर्णुनविषति

(१) परन्तु स्मि, प्रच्छ, गम् मन्जु, अश (स्वादि) धातुओंके उत्तर इ होती है। ग्रह, वृत (परस्मै), स्यन्द (परस्मै), और ऊकारान्त धातुओंके उत्तर इ नहि होती।
स्तृ, स्तृ, दरिद्रा, श्रि, यु, भृ, वृ, भ्रस्ज, पत, कृत, चृत, नृत, ऋधु, तर, सन्, दम्भ, सृ, और इव जिन धातुओंके अन्तमे हो यथा दिव्, षिव्, सिव् और ऋकारान्तधातुओंके उत्तर विकल्प करके इ आती है।

(२) धातु जिस पदका हो सन् प्रत्यय होने से भी उसी पदका रहता है; णीजन्तके न्याई सनन्तभी स्वतन्त्र धातुगिने जाते हैं, और सारे धातुकार्य्यको प्राप्त होते हैं, और लङादि चार विभक्तियोंमे भ्वादिगणीय धातुके न्याई होते हैं।

ऊर्णुनुविषति (ये तीन प्रकार रूप होते हैं)

अनिट् धातु

नम	दह	पा	स्था	भिद	बुध
निनंसति	दिधक्षति	पिपासति	तिष्ठासति	बिभित्सति	बुभुत्सति

२८८ सन् प्रत्यय परक इ होनेसे धातुके उपधा लघु स्वरको गुण[1] होताहै। यथा; (लिख्) लिलेखिषति, (शुभ) शुशोभिषते, (नृत्) निनर्तिषति, (वृत्) विवर्तिषते। (उख) ओचिखिषति, (इषु) एषिषिषति, (अनिटि) (बुध्) बुबुत्सते।

२८९ रुद्, विद्, और मुष् धातुके उपधा लघु स्वरको गुण नहिं होता। यथा; रुरुदिषति, विविदिषति, मुमुषिषति। मुद, क्लिद् को विकल्पकरके। यथा मुमुदिषति, मुमोदिषति

२९० सन् प्रत्यय परे होनेसे ग्रह धातुके स्थानमे गृह, स्वप्के स्थानमे सुप् और प्रच्छके स्थानमे पृच्छ होताहै। यथा; जिघृक्षति, सुषुप्सति;

२९१ तथा धातुका अन्त्यस्वर दीर्घ होताहै। यथा; (श्रि) शिश्रीषति[2], (द्रु) दुद्रूषति, (ह्रु) जुहूषति। पू, पे, औका आ होताहै। यथा (गै) जिगासति

२९२ तथा धातुके अन्तस्थित ऋ ॠके स्थानमे ईर्[3] होताहै। यथा (कृ) चिकीर्षति, (धृ) दिधीर्षति (तॄ) जिहीर्षति (तॄ) तितीर्षति[4]। ऋकार पवर्गके परे होनेसे उसे ऊर् होताहै। यथा (मृ) मुमूर्षति।

---

(१) इट् को विकल्पकरके ऊ भी होताहै। यथा (सिव) सुस्यूषति (वा) सिसेविषति। दुद्यूषति, दिदेविषति; क्रुवादिकों गुण नहिं होता (१७१·२ प· देखो) लुङादिप्रकरणोक्त अन्यान्य विशेषकार्य्यभी होतेहैं। यथा (भ्रस्ज्) बिभ्रक्षति, वा बिभर्क्षति, बिभ्रज्जिषति, बिभर्जिषति। (मस्ज्) मिमङ्क्षति, (नश्) निनङ्क्षति (नह्) निनत्सति (दरिद्रा) दिदरिद्रिषति, (वा) दिदरिद्रासति। (कम्) चिकमिषते (वा) चिकामयिषते (गुप्) जुगोपिषति, जुगोपायिषति। (२) शिश्रयिषतिभी होताहै
(३) धातुकी उपधा र ऋको भी ईर् होताहै। यथा (कृत्) चिकीर्तयिषति (४) इट् विकल्प करके होताहै। यथा, तितरिषति वा तितरीषति

२९३ सन्प्रत्ययान्त अभ्यस्त दा, धा, आप्, मा, लभ, रभ, धातुओंके स्थानमे यथा क्रम, दित्स, धित्स, ईप्स, मित्स, लिप्स, रिप्स, होताहै। यथा; दित्सति, धित्सति ईप्सति, मित्सति, लिप्सते, रिप्सते[1]।

२९४ लिट् विभक्तिमे सनन्त धातुके उत्तर आम्, और भू, अस्, कृ, होते हैं। यथा; चिकीर्षाम्बभूव, चिकीर्षाञ्चकार, चिकीर्षामास।

लुट्, लृट्, लृङ्, लुङ्, और आशीर्लिङ् के आत्मनेपदमे, सन् प्रत्ययके उत्तर इ लगती है।

लुट्	लृट्	लृङ्	लुङ्	आशीर्लिङ्
चिकीर्षिता	चिकीर्षिष्यति	अचिकीर्षिष्यत्	अचिकीर्षीत्	चिकीर्ष्यात्

२९५ कित्, तिज्, गुप्, बध, और मान, धातुओंके उत्तर स्वार्थमे सन् होताहै और बध और मान धातुके पूर्वभागके अकार और आकारके स्थानमे ईकार होताहै। यथा, चिकित्सति, तितिक्षते, जुगुप्सते, बीभत्सते, मीमांसते।

यङन्त प्रकरण

२९६ एकस्वर युक्त और आदिमे व्यञ्जन वर्णविशिष्ट धातुके उत्तर पौनःपुन्य और अतिशय अर्थमे यङ् होताहै। यङ् का य मात्र रहता है। यङन्त धातु आत्मनेपद होते हैं[2]

(१) (चि) चिकीषति, चिचीषति। (गम्) जिगांसति, जिगमिषति। (गॄ) जिगलिषति, जिगरिषति (जि) जिगीषति। (अद) जिघत्सति। (हन) जिघांसति। (हि) जिघीषति (ह्वे) जुहूषति। (तन्) तितांसति, तितनिषति। (तृह) तितृक्षति। (दृ आदरे) दिदरिषते। (दृ विदारणे) दिदरिषति दिदरीषति दिदीर्षति (द्युत) दिद्युतिषते, दिद्योतिषते। (धृ) दिधरिषति। (दम्भ) धिप्सति धीप्सति, दिदम्भिषति। (पद, पत्) पित्सति (वा) पिपतिषति। (पू) पिपविषति, पुपूषति (भृ) बिभरिषति बुभूर्षति (मि, मी, मे) मित्सति (मस्ज) मिमङ्क्षति मिमार्जिषति (यु) यियविषति, युयूषति। (राध्) रित्सति (रभ्) रिप्सते (लभ्) लिप्सते (वृ) विवरिषति, विवरीषति, वुवूर्षति। (व्रश्च) विव्रक्षति (शक्) शिक्षति (सन्) सिषासति सिसनिषति (स्मि) सिस्मयिषति (स्वृ) सिस्वरिषति सुस्वूर्षति। ये सब विशेषरूप होते हैं।

(२) णिजन्त और सनन्तकी न्याई यङन्त भी सनन्त धातु गिने जाते हैं और लङादि चार विभक्तियोंमे भ्वादिगणीय धातुके तुल्य होते हैं।

२९७ यङ् होनेसे धातु अभ्यस्त होतेहैं; और सारे अभ्यस्तकार्य्य को प्राप्त होतेहैं।

२९८ यङ्‌प्रत्ययान्त धातु के पूर्व्वभाग का अकार दीर्घ होता है। यथा, (लप्) लालप्यते (नप्) नानप्यते (लष) लालष्यते।

२९९ यङ्‌प्रत्ययान्तधातुके पूर्व्वभाग को गुण होता है। यथा; (शुच्) शोशुच्यते (दीप्) देदीप्यते (लुप्) लोलुप्यते (सिच्) सेसिच्यते (रुद्) रोरुद्यते।

३०० यङ् होनेसे नान्त, मान्त, और लान्त धातुके पूर्व्वभाग के स्वरवर्ण से परे अनुस्वार, अथवा पर सवर्णी सानुनासिक वर्ण होताहै[१]; यथा (जन्) जञ्जन्यते[२] (मन्) मम्मन्यते (गम्) जङ्गम्यते (क्रम्) चङ्क्रम्यते (चल्)[४] चञ्चल्यते (गल्) जंगल्यते (फल) पंफल्यते इत्यादि

३०१ ऋकारोपध धातुके पूर्व्वभागसे परे री होतीहै। यथा (नृत) नरीनृत्यते, (सृप्) सरीसृप्यते, (कृष) चरीकृष्यते।

३०२ ऋकारान्त धातुके ऋके स्थानमे री होती है। यथा, (कृ) चेक्रीयते, (सृ) सेस्रीयते।

३०३ लुङादि अय विभक्तियोंसे व्यञ्जन वर्णसे परे यङ्‌का लोप होता है। यथा (लुट्) शोशुचिता (लृट्) शोशुचिष्यते (लृङ्) अशोशुचिष्यत (लिट्) शोशुचामास, शोशुचाम्बभूव, शोशुचाञ्चक्रे (लुङ्) अशोशुचिषत (आशीर्लिङ्) शोशुचिषीष्ट।

---

(१) परन्तु स्वरादिधातु को सम्पूर्ण द्वित होता है, और शेष भाग का हल स्वर दीर्घ होता है। यथा; (अट्) अटाट्यते। ऋका रूप इस प्रकार होताहै। यथा, अरार्य्यते इत्यादि। कइ एक धातुओं के पूर्व्वभाग से परे नी आती है। यथा; (पद्) पनीपद्यते (पत्) पनीपत्यते (कस्) चनीकस्यते (कष्) चनीकष्यते (भ्रंश) बनीभ्रश्यते (यङ् मे धातुके उपधा नूका लोप होजाता है) (स्रंस) सनीस्रस्यते (ध्वंस) दनीध्वस्यते (स्कन्द) चनीस्कद्यते। ध्माके देध्मीयते घ्राके जोघ्रीयते और गृके जेगिल्यते इत्यादि रूप होतेहैं। (दा) देदीयते (गै) जेगीयते (वे) वेवीयते (स्वप्) सोषुप्यते (स्यम्) सेसिम्यते प्रभृति भी रूप होतेहैं।

(२) जप्, जभ्, दह्, दंश्, भंज् प्रभृतिके पूर्व्वभागके अके दीर्घ होनेके स्थानमे अनुस्वार भी आजाताहै। यथा, जञ्जप्यते, दन्दशयते बम्भज्यते इत्यादि। चर् के चञ्चूर्य्यते इत्यादि रूप होते हैं। हन् के, जेघ्नीयते जंहन्यते, और जङ्घन्यते ये तीन प्रकारके रूप होते हैं।

(३) इसके विकल्प करके जाजायते प्रभृति रूप भी होते हैं।

(४) चाचल्यते प्रभृति भी

यङ्लुगन्त

३०४ यङ्प्रत्ययका विकल्पकरके लोप भी होजाता है।

३०५ यङ् के लुक् होनेसे भी धातु अभ्यस्त होते हैं, और अदादिगणके परस्मैपदकी न्याईं उन्के रूप होते हैं। यथा; (दा) दादाति

३०६ तथा ——— पूर्व्वभागको गुण होता है, और ऋको अ। यथा (विद्) वेवेत्ति (पच्) पापक्ति

३०७ तथा ——— पूर्व्व भागके अ के पीछे इ ई भी विकल्पकरके लगते हैं। यथा (कृ) चरीकर्त्ति, चरिकर्त्ति, चर्कर्त्ति

३०८ तथा ——— ऋको द्वित्व होकर अर्र्र (वा) अरिर् होता है। यथा अरर्त्ति, अरियर्त्ति

३०९ तथा ——— गृ, तृ के पूर्व्वभागमें आ होता है। यथा जागर्त्ति, तातर्त्ति

३१० तथा ——— अनुस्वारागम प्रभृति कार्य्य पूर्व्ववत् होते हैं। यथा जङ्घन्ति

३११ तथा ——— ति, सि, मि, त, न, :, विभक्तियों के पूर्व्वविकल्पकरके ई लगती है। यथा (भू) बोभवीति, (वा) बोभोति बोभूतः, बोभुवति

३१२ तथा ——— आकारान्त धातुके शेष आको ई होता है ति, सि, मि, त, न, :, भिन्न अन्तन विभक्ति परे होनेसे। यथा (हा) जाहीवः, जाहीमः। पर दा धाके शेष आका लोप होता है। यथा, दाद्वः, दाध्मः

३१३ तथा ——— तथा ——— ई विकल्प करके होता है ति, सि, मि, त, न, :, विभक्ति परे होनेसे; और उस ई को गुण भी होता है। यथा; जाहाति (वा) जाहेति

३१४ तथा ——— तथा ——— आका लोप होता है सरादि विभक्ति परे होनेसे। यथा; (हा + अन्ति=) जाहति, दादति

२१५ यङ्के लङ् होनेसे आकारान्तधातुके आको विकल्पकरके ए होताहै यादि विभक्ति परे होनेसे। यथा जाहायात् (वा) जाहेयात्

२१६ तथा ——— धा और धाके आको ई होजाताहै। यथा दाधेति

२१७ लिट्मे (बुध) बोबुधामास, (भू) बोभवामास (यहां ऊको गुण होगया) (वृत्) वावर्त्तामास

२१८ आशीर्लिङ् को छोड़कर अवशिष्ट चार लकारोंमे सब धातुओं मे इका आगम होताहै; पर इआनेसे भी कई धातुओंके शेष भागके उपधा स्वरको गुण नहि होता। यथा; (बुध) बोबुधिता (भी) बेभियता, बोबुधिष्यति, परन्तु (भू) बोभविता।

कर्म्मवाच्य और भाव वाच्य प्रकरण

२१९ कर्म्मवाच्य और भाववाच्य होनेसे धातु आत्मनेपद होते हैं

२२० कर्म्मवाच्य होनेसे कर्म्मपदमे जो पुरुष और जो वचन होताहै, क्रियापदमे भी वहि पुरुष और वहि वचन होता है।

२२१ भाव वाच्य क्रियामे केवल प्रथम पुरुषका एक वचन होताहै।

२२२ कर्म्मवाच्य और भाववाच्य होनसे लड़ादि चार विभक्तियों मे सब गणके धातुओंके उत्तर य होताहै। यथा (गम) गम्यते (पठ) पठ्यते (त्यज) त्यज्यते (भुज) भुज्यते (भिद्) भिद्यते (छिद्) छिद्यते (मुच्) मुच्यते (स्पृश) स्पृश्यते (लभ) लभ्यते (नी) नीयते (हन्) हन्यते (ज्ञा) ज्ञायते (सृज्) सृज्यते (ध्मा) ध्मायते (सेव) सेव्यते (तुष) तुष्यते; इत्यादि।

३२३ य परे होनेसे दा, धा, मा, गा, हा, पा[1], सा, स्था, धातुओंके आकारको ई होती है। यथा (दा) दीयते, एवं धीयते, मीयते, गीयते, हीयते, पीयते, सीयते, स्थीयते[2]।

३२४ १३४ से लेकर १० नियमोंमें आशीर्लिङ्के परस्मैपद में जिसधातुका जो कार्य्य होताहै य प्रत्यय परे होनेसे भी उस धातुको वहि कार्य्य होताहै[3]। यथा,

१३४ नियमानुयायी उदाहरण (जि) जीयते (श्वि) शीयते (स्तु) स्तूयते (लि) लीयते इत्यादि[4]।

१३५ तथा (कृ) क्रियते (मृ) म्रियते (हृ) ह्रियते (धृ) ध्रियते इत्यादि।

१३६ तथा (स्मृ) स्मर्य्यते (स्तृ) स्तर्य्यते (ऋ) अर्य्यते (जागृ) जागर्य्यते,

१३७ तथा (तॄ) तीर्य्यते (कॄ) कीर्य्यते (पॄ) पूर्य्यते

१३८ तथा (ग्रह) गृह्यते (प्रच्छ) पृच्छ्यते (व्यधु) विध्यते (यज) इज्यते

१३९ तथा (वच्) उच्यते (वद्) उद्यते (वप्) उप्यते (वस्) उष्यते (वह्) उह्यते (स्वप्) सुप्यते इत्यादि।

१४० तथा (ह्वे) हूयते (व्ये) वीयते (वे) ऊयते

१४१ तथा (शास्) शिष्यते।

१४२ तथा (दंश) दश्यते, (मन्थ) मथ्यते, (भ्रन्श) भ्रश्यते, (भञ्ज) भज्यते, (शन्स) शस्यते, (बन्ध) बध्यते, (लम्ब) लम्ब्यते, (सञ्ज) सज्यते।

१४३ तथा जायते, जन्यते, खायते, खन्यते, सायते, सन्यते[5]

३२५ य परे होनेसे णिजन्त धातुके अन्तस्थित इकारको लोप होता है[6]। यथा (कारि) कार्य्यते, (स्थापि) स्थाप्यते, (इषि) इष्यते, (दर्शि) दर्श्यते।

३२६ सन् प्रत्ययके अकारका लोप होताहै य परे होनेसे। यथा (उध) उ बोधिष्यते।

(१) पानार्थक पा धातु। (२) आकारान्त अन्य धातु वैसेहि रहतेहैं। यथा, ख्यायते, ज्ञायते। दरिद्रा, दीधी, वेवीके अन्य स्वरका लोप होताहै। यथा, दरिद्र्यते। ज्याको जी होताहै, जीयते। (३) ४६ वें नियमोक्त आदेशकी न्याइ (कम्) कम्यते (वा) काम्यते, गुप्ये (वा) गोपाय्ये, विच्छ्य, विच्छाय्ये ऋत्ये, ऋतीय्ये इत्यादिरूप भी होतेहैं। ऊह्को उह् होताहै उपसर्ग पूर्व्व होने से। अज को वी, चक्ष् को ख्या, अस् को भू, ब्रू को वच्, चक्षको ख्या आदेश भी होतेहैं। (४) श्विको शू और शी को शय् होताहै। यथा, शूयते, शय्यते। (५) तायते, तन्यतेभी (६) पर इके ह्रस्वादिका रहतेहैं)

(सेव् धातु)

लिट्	लुट्	लृट्	लृङ्	आशीर्लिङ्
सिषेवे	सेविता	सेविष्यते	असेविष्यत	सेविषीष्ट
सिषेवाते	सेवितारौ	सेविष्येते	असेविष्येताम्	सेविषीयास्ताम्
सिषेविरे	सेवितारः	सेविष्यन्ते	असेविष्यन्त	सेविषीरन्

(भुज् धातु)

बुभुजे	भोक्ता	भोक्ष्यते	अभोक्ष्यत	भुक्षीष्ट
बुभुजाते	भोक्तारौ	भोक्ष्येते	अभोक्ष्येताम्	भुक्षीयास्ताम्
बुभुजिरे	भोक्तारः	भोक्ष्यन्ते	अभोक्ष्यन्त	भुक्षीरन्

(पच) पेचे इत्यादि

१२७ लुट्, लृट्, लृङ्, और आशीर्लिङ् विभक्तियोंमें स्वरान्त धातु और ग्रह्, दृश, और हन् धातुओंके उत्तर विकल्प करके इ होती है।

१२८ यदि इ परे होनेसे धातुके अन्त्य स्वर और उपधा अकारको वृद्धि होती है।

(स्वरान्त स्रु धातु)

सुस्रुवे	स्रोता	स्रोष्यते	अस्रोष्यत	स्रोषीष्ट
	स्राविता	स्राविष्यते	अस्राविष्यत	स्राविषीष्ट

(ग्रह् धातु)

जगृहे	ग्रहीता	ग्रहीष्यते	अग्रहीष्यत	ग्रहीषीष्ट
	ग्राहिता	ग्राहिष्यते	अग्राहिष्यत	ग्राहिषीष्ट

१२९ यदि इ परे होनेसे उपधा लघुस्वरको गुण होता है

(दृश् धातु)

ददृशे द्रष्टा द्रक्ष्यते अद्रक्ष्यत द्रक्षीष्ट
दर्शिता दर्शिष्यते अदर्शिष्यत दर्शिषीष्ट

२३० यह इ परे होनेसे हन् धातुके ह् के स्थानमे घ होता है

लिट्	लुट्	लृट्	लृङ्	आशीर्लिङ्
जघ्ने	हन्ता	हनिष्यते	अहनिष्यत	वधिषीष्ट
	घानिता	घानिष्यते	अघानिष्यत	घानिषीष्ट

२३१ यह इ परे होनेसे आकारान्त धातुके उत्तर य भी होता है

(दा धातु)

ददे दाता दास्यते अदास्यत दासीष्ट
दायिता दायिष्यते अदायिष्यत दायिषीष्ट

लुङ्

२३२ कर्म वाच्य और भाव वाच्यमे लुङ् के त विभक्तिके स्थानमे इ होती है, यह इ परे होनेसे अन्त्य स्वर और उपधा अकार की वृद्धि होती है,[१] और उपधा लघुस्वर को गुण होता है।[२]

(वद् धातु)	सिव्	भज	मन
अवादि	असेवि	अभाजि	अमानि
अवादिषाताम्	असेविषाताम्	अभक्षाताम्	अमंसाताम्
अवादिषत	असेविषत	अभक्षत	अमंसत

२३३ स्वरान्त धातु, और ग्रह, दृश, हन् धातुओंको लुङ् की त भिन्न विभक्तियोंमे लुङादि की न्याई कार्य्य होते हैं

(१) अमन्त प्राय सारे धातुओंके अ की वृद्धि नहि होती। यथा, अक्रमि, अलमि, अशमि (शान्त्यर्थमे, अन्यत्र अशामि) और जन् का दीर्घ नहि होता, अजनि।

(२) मृज् के अमार्जि और गुह् के अगूहि प्रभृति रूप होते हैं। (३) ४६ वें नियमानुयायी अकामि वा अकामि, अगोपि वा अगोपायि; अविच्छि अविच्छायि। रध्, जभ्, रभ्, मे न् आता है। यथा अरन्धि। लभ को विकल्प करके अलम्भि (वा) अलाभि; परउपसर्ग पूर्व्वक लभ् को नित्य। प्रालम्भि। भञ्ज् के न् का विकल्प करके लोप होता है अभाजि, अभञ्जि। हेड् के अहेडि, अहिडि, वा अहीडि ये तीन रूप होते हैं। इ को गा; अगायि। अधि पूर्व्वक इ को विकल्प करके गा। यथा, अध्यगायि अध्यायि। ऋत को आर्तीयि वा आर्ति।

	(दा)	(श्रु)	(ग्रह)	(द्दश)
प्र[1]·	अदायि	अश्रावि	अग्राहि	अदर्शि
द्वि·	अदिषातान्	अश्रोषातान्	अग्रहीषातान्	अदृक्षातान्
	अदायिषातान्	अश्राविषातान्	अग्राहिषातान्	अदर्शिषातान्
ब·	अदिषत	अश्रोषत	अग्रहीषत	अदृक्षत
	अदायिषत	अश्राविषत	अग्राहिषत	अदर्शिषत

(हन्)

प्र·	द्वि·	ब·
अवधि	अवधिषातान्	अवधिषत
अघानि	अहसातान्	अहसत
	अघानिषातान्	अघानिषत

नाम धातु

३३४ नामसे परे कई एक प्रत्यय होते हैं और वे प्रत्यय होने से शब्दको धातुत्व होता है, और वह नाम धातु कहलाता है॥

३३५ सारे नाम धातुओंके भ्वादिगणीय धातुओं की न्याईं रूप होते हैं।

काम्य प्रत्यय अपनी इच्छा अर्थमे (आत्मनः पुत्रमिच्छति) पुत्रकाम्यति, पुत्रकाम्येत्, पुत्रकाम्यतु, अपुत्रकाम्यत्, पुत्रकाम्यामास पुत्रकाम्यिष्यति, अपुत्रकाम्यिष्यत् पुत्रकाम्यात् अपुत्रकाम्यीत् (पुत्रस्य पुत्रमिच्छति इत्यादिस्थलेन)

क्यच ——— तथा ——— परस्मैपद होता है (क्यच् काय रहता है क्यच् होनेसे शब्दका अन्त अकार

(१) प्रथम पुरुषके एकवचनमें विकल्प नहीं होते

ई होजाताहै और ह्रस्व स्वर दीर्घ होता है। यथा, पुत्रीयति

बुभुक्षा अर्थमेभी — अशन शब्दसे। अशन शब्दका अन्त्य अकार दीर्घ होजाताहै। यथा; अशनायति

पिपासा अर्थमेभी — उदक शब्दसे उदको उदन होजाताहै। यथा; उदन्यति

करण अर्थमेभी — नमस् तपस् और वरिवस् शब्दसे। यथा, नमस्यति, तपस्यति, वरिवस्यति।

आचारअर्थमेभी — कर्मवाचक उपमानके उत्तर। यथा (शिष्यं पुत्रमिव) (आचरति) पुत्रीयति शिष्यम्।

अन्त्यस्थित ऋके स्थानमे री होताहै। यथा; उपाध्यायं पितरमिव आचरति। पित्रीयति उपाध्यायम्

क्यङ् — तथा — कर्तृवाचक उपमानके उत्तर और आत्मनेपद होताहै शब्दका अन्तस्थित ह्रस्व स्वर दीर्घ होताहै और न,स लोप होताहै। यथा पुत्रायते, शिष्यायते, हंसायते सखीयते

अन्तस्थित ऋके स्थानमे री पित्रीयते।

करणअर्थमेभी — शब्द वैर कलह शब्दसे। यथा शब्दायते, वैरायते, कलहायते

अनुभवअर्थमेभी — सुख दुःख कष्ट शब्दसे। सुखायते, दुःखायते, कष्टायते

काङ्. प्रकाश होताहै उद्वमन अर्थमे — वाष्प उष्मन् फेन धूम शब्दसे। यथा वाष्पायते, उष्मायते, फेनायते, धूमायते

उकार पूर्वक चर्वन अर्थमे रोमन्थ शब्दसे। यथा; रोमन्थायते

अभूततद्भाव अर्थमे	यथा (अभृशो भृशोभवति) भृशायते, (एवं) शीघ्रायते, चपलायते, मन्दायते पण्डितायते, उत्सुकायते, सुमनायते दुर्मनायते, उन्मनायते
क्विप् आचरण अर्थमे	कर्त्तृवाचक उपमानके उत्तर (क्विप् का कुछ नहिं रहता है) परस्मैपद होता है। यथा; (पुत्र इव आचरति) पुत्रति (एवं) शिष्यति, सखयति, बराबति पितरति मातरति
णिच् करण अर्थमे	णिजन्त प्रकरणमे जोसब विधान हुआहै, यहां भी यथा सम्भव वह सब होताहै। यथा; (अश्रं करोति) अश्रयति, शब्दयति, पृथु मृदु दृढ के ऋको र। यथा; प्रथयति, म्रदयति, द्रढयति।
	स्थूलको स्थव दूरको दव, अन्तिकको नेद, बहुलको बंह होताहै। यथा; स्थवयति। दवयति, नेदयति बंहयति।
स्य (वा) अस्य कामना अर्थमे	परस्मै पदमे - यथा (मधु) मधुस्यति (वा) मध्वस्यति (अश्व) अश्वस्यति

पदव्यवस्था

२३५ कइएक आत्मने पद और उभय पद धातु उपसर्ग विशेषके योगमे और अवस्था विशेषमे परस्मै पद होजाते हैं। यथा रमति, आरमति, परिरमति, उपरमति (वा) उपरमते अनुकरोति पराकरोति, अभिक्षिपति प्रतिक्षिपति, अतिक्षिपति, प्रवह-

ति, (लिट्, लुट्, लृट्, लृङ् मे रूप) ममार मर्त्ता मरिष्यति अमरिष्यत् (णिजन्त) बोधयति, योधयति, नाशयति जनयति, अध्यापयति, (णिजन्त भोजनार्थ और चलनार्थ) भोजयति, आशयति, चलयति, कम्पयति, (णिजन्त) प्रावयति, द्रावयति, स्रावयति, अणिजन्तकालमे अकर्मकधातु प्राणीकर्त्ता होनेसे णिजन्त अवस्थामे यं और सकर्मक होताहै; पुत्रः शेते, माता पुत्रं शाययति इत्यादि ॥

२२(१) कई एक परस्मैपदी और उभय पदी धातु उपसर्ग विशेष के योगमे और अवस्था विशेषमे आत्मने पद होजाते हैं यथा निविशते विक्रीणीते परिक्रीणीते अवक्रीणीते विजयते पराजयते। आदत्ते (न विस्तारे अर्थे) मुखं आददाति सिंहः; आ - अनु - परिक्रीडते, संक्रीडते (न कूजनार्थे) संक्रीडति चक्रं (हर्षे प्रकाश आहारान्वेषण वास ग्रहनेका अर्थे अप - कृ धातु) अपस्किरते वृषभः अपस्किरते कुक्कुटः, अपस्किरते सारमेयः आपृच्छते, प्र - वि - अव - संतिष्ठते उत्तिष्ठते (न उत्थानार्थे) आसना उत्तिष्ठति (देवपूजा मिलन मैत्रीकरण अर्थे) विष्णुमुपतिष्ठते वैष्णवः यमुनामुपतिष्ठते गङ्गा, साधुमुपतिष्ठते साधुः (लाभेच्छायां) (वा) धनिनमुपतिष्ठति उपतिष्ठतेवाभिक्षुः (उपपूर्व्वक अकर्म्मकस्याधातु) भोजनकाल उपतिष्ठते (आपूर्व्वक अकर्म्मक हन्, यम्) आहते, आयच्छते (आत्म अवयव कर्म्म होनेसे) आयच्छते पाणिमात्मीयम्; आहते स्वीयं शिरः (सम् पूर्व्वक अकर्म्मक गमच्छ) सङ्गच्छते, संशृणुते; (स्पर्द्धा अर्थे) मल्लमाह्वयते मल्लः; (वृद्धि उत्साह अप्रतिबन्ध अर्थे) सतांश्रीः क्रमते, अध्ययनाय क्रमते शिष्यः शास्त्रेषु क्रमते बुद्धिः; (ग्रह नक्षत्रादि ज्योति पदार्थोंके ऊर्द्ध गमन अर्थमे) आक्रमते सूर्य्यः; (पदविक्षेप अर्थे) साधु वि-

(१) परा और उप भिन्न अन्य उपसर्गकेयोगमे नहि होता।

क्रमते बाज़ी; (आरम्भ अर्थे) प्रक्रमते भोक्तुम्, उपक्रमते भो-
क्तुम्; (उपसर्ग हीन क्रमको (वा) क्रमते (वा) क्रामति; (अपह्नु-
वार्थे) शतमपजानीते अपलपतीत्यर्थः संजानीते प्रतिजा-
नीते (नमस्कारार्थे) उपसंजानाति (उपसर्ग हीन ज्ञा धातुको वा) जा-
नीते (वा) जानाति; (प्रतिज्ञा अर्थे) सङ्गिरते, उच्चरते गुरु-
वचनं (न अकर्म्मके) उच्चरति धूमः; (तृतीयान्त पदयोगे)
अश्वेन सञ्चरते (विवाह अर्थे) कन्यामुपयच्छते;[1] (उपस-
र्गपूर्वक भुज) अभुङ्क्ते निभुङ्क्ते इत्यादि; भुङ्क्ते (न
रक्षार्थे) महीं भुनक्ति राजा (जो कर्त्ता स्वप्रयोजनके देशमे
क्रियाका अनुष्ठान करे तो उभय पद धातुके उत्तर केवल
आत्मने पद होता है) यजते विप्रः, यजति याजकः (सन्नन्त
जिज्ञासते, शुश्रूषते, सुस्मूर्षते, दिदृक्षते, (अनुपूर्वक
ज्ञाको न) अनुजिज्ञासति (प्रति आ पूर्वक श्रु को न) प्र-
तिशुश्रूषति, आशुश्रूषति

लकारार्थ
निर्णय

२३८ वर्त्तमान कालमे धातुके उत्तर लट् विभक्ति होती है। यथा भवति (होता है, होती है) गच्छति (जाता है) पश्यति (देखता है)

२३९ अतीत कालमे धातुके उत्तर लिट्, लङ्, और लुङ् होता है। यथा; जगाम, अगच्छत्, अगमत् (गया था, गया है, गया)

२४० भविष्यत्कालमे धातुके उत्तर लुट् और लृट् होता है। यथा; गन्ता, गमिष्यति (जानेवाला है, जायगा)

२४१ स्म शब्दके योगमे अतीतकालमे लट् होता है। यथा; रामस्तु मम गृहमागच्छति स्म (वह मेरे घरमे आया था) स व्याकरणमधीते स्म (जिसने व्याकरण पढ़ा है)

(१) निर्, उप, सम्, पूर्वक यम को नहि होता

३४२ माशब्दके योगमे सबकालोंमे लुङ् होताहै यथा माभू-
त् दुःखम्, माभूत्शोकः

३४३ मास्मशब्दके योगमे सबकालोंमे लङ् और लुङ् होताहै।
यथा; मास्म भवद्दुःखम्, मास्मभूत् शोकः

३४४ यावत् और पुराशब्दके योगमे भविष्यत्कालमे लट् हो
ताहै। यथा; सयावत् आगच्छति तावत् अहं गमिष्यामि
(वह जब तक आवेगा मै तबतक जाऊंगा)

३४५ कदा और कर्हि शब्दोंके योगमे भविष्यत्कालमे विकल्पक
रके लट् होताहै। यथा; कदा ददामि न जाने; कदा दास्या;
मि नजाने

३४६ कथं शब्दके योगमे सर्व्वकालमे विकल्पकरके लट् और
विधिलिङ् होताहै। यथा; कथं गच्छसि कथंगच्छेः

३४७ यत्र और यदिशब्दके योगमे भविष्यत्कालमे विधि लिङ्
होताहै। यथा, वस्त्राणि यदास आगच्छेत्; दास्यामि यदि
स आगच्छेत्

३४८ आशीर्व्वाद अर्थमे धातुके उत्तर आशीर्लिङ् और लोट्
होताहै। यथा; तव स्वस्ति भूयात्, तव स्वस्ति भवतु

३४९ आशीर्व्वाद अर्थमे लोट्के तु और हिके स्थानमे विकल्प
करके तात् होताहै। यथा; तव कुशलं भवतात्, भवतु (वा)
ईश्वर त्वमां पातात् पाहि (वा)

३५० विधि अर्थमे धातुके उत्तर विधिलिङ् होताहै; विधि दोप्रकार
कीहै, प्रवर्त्तना और निवर्त्तना, सत्कर्म्ममे प्रवृत्ति दानकरने
का नाम प्रवर्त्तनाहै, असत् कर्म्मसे निवर्त्तकराने का नाम
निवर्त्तनाहै। यथा, (प्रवर्त्तना) सत्यंवदेत्, प्रियं ब्रूयात् (गुरून्
भजेयत् (निवर्त्तना) नानृतं वदेत्, क्रोधं यत्नेन वर्ज्जयेत्

३५१ अनुज्ञा, नियोग, निमन्त्रण, अनुरोध, प्रार्थना, जिज्ञासा, इन
अर्थोंमे विधिलिङ् और लोट् होताहै। यथा; (अनुज्ञा) गच्छ

तुभवान्, (नियोग) करोतु भवान्, (निमन्त्रण) इह भुञ्जीत भवान्, (अनुरोध) इह शयीत भवान्, (प्रार्थना) मन्तुत्रमध्यापयेद्भवान्, (जिज्ञासा) किं भो व्याकरणमधीयीय उत् साहित्यम्?

१५२ दो क्रियाओंमे कार्य्यकारणभावका बोध होनेसे दोनो क्रियाओंसे भविष्यत्कालमे विधि लिङ् होताहै। यथा; यदि बाल्ये अधीयीत, यावज्जीवं सुखं लभेत; यदि प्रियं वदेत्, सर्वस्य प्रियोभवेत्

१५३ शक्यार्थमे धातुके उत्तर लोट् होताहै। यथा; सिन्धुमपि शोषयानि (समुद्रकोभी सुखा सक्ताहूं)

१५४ इच्छार्थ धातुके योगमे विधि लिङ् और लोट् होताहै। यथा इच्छामि भवान् भुञ्जीत् भुङ्क्ताम् वा, इच्छामि स आगच्छेत् आगच्छतु वा

१५५ क्रियाकी अनिष्पत्ति प्रतीत होनेसे अतीतकालमे धातुके उत्तर ऌङ् होताहै। यथा; सचेत् आगमिष्यत् तदाहमगमिष्यम् (जो वह आता तोमैजाता) (अर्थात् वह आयानहि इसलिये मै गयानहिं)

१५६ पौनःपुन्य और अतिशय अर्थमे सब धातुओंके उत्तर सर्व्वकालमे सब पुरुष और सब विभक्तिओंमे लोट् की हित स्व ध्वम् ये विभक्तियें होतीहैं। यथा; पुनः पुनः अतिशयेन वा हरति जहार हरिष्यति इन अर्थोंमे हर हरत हरस्व हरध्वम्।

इति आख्यात प्रक्रिया॥

इति द्वितीयभागः ॥ ✢ ॥

सरलव्याकरण

संस्कृतका

हिन्दीभाषामे

श्रीनवीनचन्द्रराय कर्तृक प्रणीत

तृतीयभाग

मित्रविलासयन्त्र लाहौर में

पण्डित श्रीमुकुन्दरामयन्त्राध्यक्ष ने छापा

सम्वत् १९२९ विक्रम   सन १८७२ ईस्वी

द्वितीयसंस्करण   मूल्य ।।)   १५०० वार

कृतप्रकरण

साधारणनियम

१ धातु के उत्तर तव्य निष्ठा प्रभृति कई एक प्रत्यय होतेहैं, उन्हे कृत् प्रत्यय कहते हैं।

२ कृत् प्रत्यय होनेसे धातु के अन्त्यस्वर और उपधा लघु स्वर को गुण होता है; परन्तु क अथवा ङ्[१] इत् होनेसे नहिं होता।

३ कृत प्रत्यय का ण अथवा ञ् इत् होने से धातु के अन्त्यस्वर और उपधा अकार की वृद्धि होती है। और आकारान्त धातु के उत्तर य होता है।

४ कृत् प्रत्यय[२] परे होने से णिच् का लोप होता है।

५ कृत् प्रत्यय का घ इत् होनेसे धातु के अन्तस्थित च् के स्थान मे क् और ज के स्थान मे ग् होता है।

६ कृत् प्रत्यय का ख् इत् होनेसे पूर्व पद द्वितीया का एकवचनान्त होता है।

७ तथा —— प इत् होने से ह्रस्व स्वरान्त धातुके उत्तर त् होताहै।

८ तथा —— य परे होनेसे धातु के अन्तस्थित ओके स्थान मे अव और औ के स्थान मे आव होता है।

(१) किसी कार्य्य के निमित्त जो अधिक वर्ण लगाया जाता है उसे इत् कहते हैं, कार्य्यान्त मे उसका लोप होता है। यथा; ण्यत् प्रत्यय मे ण इत् है।

(२) आलु, इत्नु प्रभृति प्रत्यय परे होने से और इट् के व्यवधान मे णिच् का लोप नहिं होता।

कृत्यप्रत्यय[1]

१ **तव्य** कर्म्मवाच्य और भाव वाच्यमे धातु के उत्तर होता है। लुट् विभक्तिमे इट् प्रभृति जो सब कार्य्य होते हैं इसे भी वे सब होते हैं। यथा; (दा) दातव्य (शी) शयितव्य (कृ) कर्त्तव्य (वच्) वक्तव्य (याच्) याचितव्य इत्यादि।

२ **अनीय** कर्म्मवाच्य और भाव वाच्यमे। यथा; (पा) पानीय (विद्) वेदनीय।

३ **ण्यत्** तथा ——— ऋकारान्त और व्यञ्जन वर्णान्त धातु के उत्तर होता है। यथा; (कृ) कार्य्यम् (वच्) वाच्यम् (सिच्) सेच्यम् (पच्) पाक्यं (रुज्) रोग्यम्।

४ **यत्** तथा ——— स्वरान्त धातु के उत्तर होता है। यथा; (चि) चेयम् (भृ) भव्यम् (नी) नेयम् (दा) देयम्[2]।

तथा ——— शक्, सह्, और पवर्गान्त धातु के उत्तर भी। यथा; शक्यम्, सह्यम्, शप्यम्, गम्यम्, लभ्यम्।

तथा ——— उपसर्ग हीन गद्, मद्, यम्, चर्, धातुओं के उत्तर भी। यथा; गद्यम्, मद्यम्, यम्यम्, चर्य्यम्।

५ **क्यप्** तथा ——— इ, स्तु, भृ, हृ, जुष्, शास्, स्तु, प्रभृति धातुओं के उत्तर। यथा; इत्य, स्तुत्य, भृत्य, हृत्य, जुष्य, स्तुत्य, शिष्य[3], कृत्य, (पक्षे ण्यत्) कार्य्य। ब्रह्मवद्य (पक्षे) ब्रह्मोद्य[4], मृषोद्य[5],

---

(१) कृत्य प्रत्यय साधित शब्द क्रियाकी न्याइ व्यवहृत होनेसे भाव वाच्यमे क्लीव लिङ्ग की प्रथमा के एक वचनान्त होते हैं; और कर्म्मवाच्यमे कर्म्मके विशेषण होते हैं, इसीलिये कर्म्मका जो लिङ्ग जो विभक्ति जो वचन हो वहि लिङ्ग विभक्ति वचन उनके भी होते हैं। यथा; (भाववाच्ये) मया स्थातव्यम् (कर्म्मवाच्ये) त्वया वृक्षः सेचनीयः, वृक्षौ सेचनीयौ, मया नदी द्रष्टव्या, तेन पुष्पं चेयम्, पुष्पानि चेयानि, इत्यादि। कृत्य प्रत्यय साधित शब्द जब विशेषण होते हैं तब विशेष्यके लिङ्ग विभक्ति वचन को प्राप्त होते हैं। यथा; गन्तव्यो ग्रामः, गन्तव्यम् ग्रामम्, दृश्या नदी, इत्यादि कृत्य प्रत्यय भविष्यत् काल औचित्य और अनुज्ञा अर्थमे होते हैं। यथा; (भविष्यत्काले) मया गन्तव्यं (मैं जाऊंगा) (औचित्ये) असत्सङ्गः परिहर्त्तव्यः (असत्सङ्ग परित्याग करना उचित है) (अनुज्ञायाम्) त्वया अध्ययनीयम् (तुम अध्यायन करना) इत्यादि।

(२) यत् परे होनेसे धातु के अन्त्य आ को ए होता है। (३) शास् के आ को इ होता है।

(४) स्ववन्त पदके परवर्त्ती वद धातुके उत्तर क्यप् और यत् होते हैं और क्यप् पक्षमे व के स्थान उ होता है। (५) मृषा शब्दसे केवल क्यप् होता है।

उदेरूमय, सीद्दन्या।

६ केलिम कर्म्मकर्त्त वाच्यमे। यथा; (भिद्) भिदेलिम, (पच्) पचेलिम, (छिद्) छिदेलिम।

७ शतृ[1] कर्त्तृवाच्यमे परस्मैपद[2] धातुके उत्तर वर्त्तमान कालमे होताहै। लट् प्रभृति चार विभक्तियोंमे जिस धातुको जो कार्य्य होतेहैं शतृ होनेसे भी तिसधातुको वेही कार्य्य होंगे। यथा, (भ्वादिगणीय) धावत्, भवत्, जयत्, कर्षत्, तिष्ठत्, (दिवादिगणीय) दीव्यत् (क्र्यादि) अश्नत् (णिजन्त) कारयत् (सनन्त) चिकीर्षत् इत्यादि[3]

८ शानच् कर्त्तृवाच्यमे आत्मनेपद धातुके उत्तर वर्त्तमान कालमे होताहै। शानच् प्रत्ययान्तको लट्के आते विभक्तिके सारे कार्य्य होतेहैं। भ्वादि, दिवादि, और तुदादि गणीय धातुसे शानच्के स्थानमे मान होताहै। यथा, (भ्वादि) सेवमान, वर्त्तमान (दिवादि) जायमान (तुदादि) म्रियमाण (अदादि) शयान (तनादि) मन्वान (ह्वादि) मिमान।

कर्म्मवाच्य धातुके उत्तर भी वर्त्तमान कालमे होताहै। (शानच् को कर्म्मवाच्यमे मान होजाताहै) यथा क्रियमाण, दीयमान इत्यादि[4]।

९ क्वसु अतीत काल और परस्मैपदमे धातुके उत्तर होताहै। (लिट्के उत्तमपुरुषके द्विवचनमे जो जो कार्य्य होतेहैं क्वसु होनेसे भी धातुको इट् भिन्न सारे कार्य्य होतेहैं) यथा; (श्रु) शुश्रुवस्, बभूवस् (क्वसु होनेसे घस् इन् और आकारान्त धातुके उत्तर इट् होताहै) यथा; जक्षिवस्,

(१) शतृ, शानच्, क्वसु, कानच्, स्यतृ, स्यमान, प्रत्ययान्त शब्द विशेषण होतेहैं इसीलिये विशेष्यके लिङ्ग विभक्ति और वचन को प्राप्त होतेहैं। यथा; पश्यन् पुरुषः, पश्यन्तं पुरुषम्, गच्छन्ती स्त्री, शुश्रुवांसं पुरुषं, विविद्वषी कन्या, पेतुषा पत्रेण, गमिष्यन् पुरुषः इत्यादि।

(२) कर्त्तृवाच्यमे उभयपद धातुके उत्तर शतृ और शानच् दोनो होतेहैं। (३) अदादि गणीय विद् धातुसे शतृके स्थानमे विकल्प करके वसु होताहै। यथा विद्वस्, विदत्। (४) अदादिगणीय आस धातुसे शानच्के स्थानमे ईन होताहै। यथा, (आस) आसीन

ईयिवस्, नयिवस्,॥ (अभ्यस्तकार्य्यसे पर जो सब धातु एक स्वर विशिष्ट रहजातेहैं क्वसु प्रत्यय परे होनेसे तिन धातुओं के उत्तर इट् होताहै) यथा; पेचिवस्, आदिवस्, ऊचिवस्, क्वसु परे होनेसे गम, हन्, विश, दृश, और विन्द धातुओंके उत्तर विकल्प करके इट् होताहै। यथा; (गम्) जग्मिवस्, जगन्वस्, (हन्) जघ्निवस्, जघन्वस्, इत्यादि।

१० कानच् अतीत काल और आत्मने पदमे धातुके उत्तर होता है (लिट् के आत्ने विभक्तिमे जो २ कार्य्य होतेहैं कानच् होनेसे भी वेहि कार्य्य होतेहैं) यथा रुरुचान ववृधान ऊचान।

११ स्यतृ कर्तृवाच्यमे परस्मैपद धातुके उत्तर भविष्यत्कालमे होताहै (लृट् विभक्तिमे गुण इट् प्रभृति जो जो कार्य्य होतेहैं स्यतृ स्यमान परे होनेसे भी वेहि होतेहैं) यथा भविष्यत्, जेष्यत्, कारयिष्यत्।

१२ स्यमान तथा आत्मने पद धातु के उत्तर तथा यथा सेविष्यमाण, वर्जिष्यमाण, पक्ष्यमान इत्यादि

तथा —— कर्म्मवाच्यमे भी धातुके उत्तर भविष्यत्कालमे होताहै। यथा; ज्ञायिष्यमाण, ज्ञास्यमान कारिष्यमाण, करिष्यमाण, वक्ष्यमाण।

१३ तुमुन् दो क्रियाका एक कर्त्ता होनेसे दोनोके बीच निमित्त अर्थ बोधक धातुके उत्तर होताहै (तुमुन् परे होनेसे लुट के सारे कार्य्य होतेहैं) यथा द्रष्टुंयाति, अध्येतुमिच्छति, कारयितुम्, इत्यादि।

तथा —— समर्थार्थक और कालवाचक शब्दोंके योगमे भी धातुके उत्तर होताहै। यथा; वोढुं समर्थः; भोक्तुं पटुः नर्तितुं निपुणः; कारयितुं कुशलः; योजयितुं प्रवीणः

न्तं समयोऽयम्, अर्थान्ते कालोऽयम्।

२४ णमुल् पौनःपुन्य अर्थमें पूर्वकालिक क्रियावाचक धातु के उत्तर होताहै। यथा; (स्मृ) स्मारम्, ध्मावम्, नामम्, भोजम्, मर्शम्, हासम् (प्रयोगकालमें णमुल् प्रत्ययान्त शब्द को द्वित्व होताहै) यथा; स्मारं स्मारम्, घातं घातम्।

तथा लोप परधातुओंके उत्तर भी होताहै विविध अर्थों में। यथा, अन्यथा कारम्, एवङ्कारम्, कथङ्कारम्, इत्थङ्कारम्। दरिद्रदर्शं ददाति (सर्वान् दरिद्रान् दृष्ट्वा ददातीत्यर्थः) यावज्जीवमधीते। उदरपूरं[1] भुङ्क्ते (उदरं पूरयित्वा भुङ्क्ते इत्यर्थः)। समूलकाषं कषति समूलघातं हन्ति। जीवग्राहं गृह्णाति, हस्तग्राहं गृह्णाति। स्वपोषं[3] पुष्णाति, धनपोषम् पुष्णाति (तेन पुष्णाति धनेन पुष्णातीत्यर्थः)। ऊर्ध्वशोषं शुष्यति तरुः (तरुरूर्ध्व एव तिष्ठन् शुष्यतीत्यर्थः)। विद्युत् प्रणाशं प्रनष्टः (विद्युदिव क्षणेनैव विनष्ट इत्यर्थः)। इत्यादि।

२५ ल्यप्[5] नञ् भिन्न अव्ययके साथ समास होनेसे पूर्वकालिक क्रियावाचक धातुके उत्तर होताहै। यथा, आ+घ्रा=आघ्राय नि+शम=निशम्य।

(ल्यप् होनेसे धातुके अन्त्यस्वर और उपधा लघुस्वरको गुण नहिं होता) यथा वि+जि=विजित्य, द्विधा+कृ=द्विधाकृत्य, वि+शिष=विशिष्य, आ+हन्[6]=आहत्य, सम्+यम=संयम्य (वा) संयत्य, आ+सञ्ज=आसज्य, आ+शङ्क[8]=आशङ्क्य, सम्+ग्रह=संगृह्य, आ+ह्वा=आहूय[9]।

(१) कर्मवाचक। (२) क्रियाविशेषणवाचक। (३) ऐसे प्रयोगोंमे जो धातु णमुलान्त हैं उन्हीका आगे भी प्रयोग होताहै। (४) कारण बोधक। (५) तुमुन् णमुल और ल्यप् प्रत्यय निष्पन्नशब्द अव्यय होतेहैं इसीलिये इनके उत्तर विभक्ति नहिं होती, ये असमापिका क्रिया होतीहैं। (६) हनादि धातुके न को त होताहै ल्यप् होनेसे और यमादिके म को विकल्प करके त होताहै। (७) सञ्ज प्रभृतिके न को लोप होताहै। (८) प्रच्छ और ग्रहके र को ऋ होतीहै ल्यप् परे होनेसे। (९) ह्वा को हू और लि को ली होतीहै।

प्र + ली = प्रलीय, सम् + स्वप् = संसुप्य, प्र + वच् = प्रोच्य, सम् + वप् = समुप्य, अधि + वस = अध्युष्य, प्र + वह = प्रोह्य, अनु + वद् = अनूद्य, वि + कॄ[2] = विकीर्य्य, नि + मीलि[3] = निमील्य, वि + रचि[4] = विरचय्य, प्र + आपि = प्राप्य (वा) प्रापय्य

१६ क्त
१७ क्तवत् } धातुके उत्तर अतीत कालमे होते हैं, इनको निष्ठा कहते हैं।

(तिङन्त प्रकरण के साधारण नियमोंसे जो सब कार्य्य होते हैं निष्ठा[5] प्रत्यय परे होनेसे भी यथा सम्भव वे सब कार्य्य होते हैं) यथा (शक्) शक्तः शक्तवान् (शिष्) शिष्टः शिष्टवान्

(तिङन्त प्रकरणमे जो सब धातु सेट् या अनिट् कहे गये हैं निष्ठामे भी वैसेहि होते हैं) यथा (ख्या) ख्यातः ख्यातवान् (लिख) लिखितः लिखितवान् (णीच् का लोप होता है निष्ठाके सहित इट् परे होनेसे) यथा (कारि) कारितः कारितवान् (प्री) प्रापितः[6] प्रापितवान् (श्रि) श्रितः श्रितवान् (हृ) हृतः हृतवान् (यु) युतः[7] युतवान्, (धु) धुतः धुतवान्, (दीप) दीप्तः[8] दीप्तवान्, त्रस्तः त्रस्तवान्, (और प्रकरणोंमे जिन धातुओंके उत्तर इट् विकल्प करके होता है निष्ठामे वे अनिट् रहते हैं) यथा (इष्) इष्टः (गुप्) गुप्तः (दिव्) द्यूतः, स्यूतः, स्रूतः,। क्रान्तः क्लान्तः। गतः हतः यतः रतः ततः नतः मतः। खातः जातः सातः। (दन्श) दष्टः (रन्ज) रक्तः (सन्ज) सक्तः। (क्लिद्[9])

(१) स्वपादिके व् और य के स्थानमे उ होता है। (२) धातुके ऋर को ईर होता है। (३) णिच् का लोप होता है। (४) णीच् का पूर्व्व वर्त्ती स्वर लघु होनेसे णीच् के स्थान मे अय होता है, आप् धातु को विकल्प करके होता है। (५) क्त्वा क्तिन् प्रत्यय परे होनेसे भी। (६) आगे जिन धातुओंके जैसे प्रयोग लिखे गये वैसेहि कार्य्य होते हैं। (७) निष्ठामे उकारान्त और ऊकारान्त के उत्तर इट् नहिं होता। (८) गणपाठमे जो ईदित धातु हैं उनमे भी इट् नहिं होता। (९) धातुके [illegible] निष्ठाके तकारको न होता है मद् धातुको नहि॥

क्लिन्नः, क्लिन्नवान्[1]। मत्तः मत्तवान्। (रुज्) रुग्नः (क्षि) क्षीणः। (शॄ) शीर्णः[2] (चॄ) चूर्णः चूर्णवान्। (कॄ)[3] कीर्णः कीर्णवान्। ग्लानः म्लानः घ्राणः स्त्यानः। (ह्री) ह्रीणः ह्रीतः (नुद) नुन्नः नुत्तः (विन्द) वित्तः विन्नः। क्लिष्टः क्लिशितः; हृष्टः, हर्षितः, संघुष्टः, संघुषितः; रुष्टः, रुषितः; विश्वस्तः, विश्वासितः; आश्वस्तः आश्वसितः; ज्ञप्तः ज्ञपितः।

(छादि) छन्नः, छादितः (ज्ञपि) ज्ञप्तः ज्ञपितः,। (स्फाय) स्फीतः स्फातः (प्या) पीनः प्यानः (मा) मितः (सा) सितः (शा) शितः शातः (दा) दितः (धा) हितः (स्वरान्त उपसर्ग + दा) आदत्तः आत्तः (यज) इष्टः (व्यध) विद्धः। (ग्रह) गृहीतः (प्रच्छ) पृष्टः (भ्रस्ज) भृष्टः। (श्वि) शूनः (ह्वा) हूनः। (वच्) उक्तः (वस्) उषितः (वद) उदितः (वप्) उप्तः (वह्) ऊढः (स्वप्) सुप्तः (गा) गीतः (पा) पीतः (हा) हीनः।(त्रै) त्राणः (पच्) पक्वः (शुष) शुष्कः।

क्तवतु[4] कर्तृवाच्यमे होताहै इसीलिये तन्निष्पन्न शब्द कर्त्ता का विशेषण होताहै। यथा, स पुस्तकं पठितवान्। तौ पुस्तकं पठितवन्तौ। सा चन्द्रं दृष्टवती। वृक्षात् फलानि पतितवन्ति।

क्त .... कर्म्मवाच्यमे सकर्म्मक धातुके उत्तर होताहै, इसीलिये तन्निष्पन्न शब्द कर्म्मका विशेषण होताहै। यथा, कुम्भकारेण घटौ कृतौ, मालिना पुष्पाणि चितानि।

क्त .... कर्तृवाच्यमे अकर्म्मक धातुके उत्तर होताहै। यथा

(१) ओकारेत् धातुओंसे परे निष्ठाके तको न होताहै। (२) रसे परे निष्ठाके तको न होताहै। (३) धातुके अन्त्य ॠको ईर् होताहै। (४) जब क्तवतु और क्त प्रत्यय निष्पन्न शब्द समापिका क्रिया की न्याई प्रयुक्त न होकर केवल विशेषण स्वरूप प्रयुक्त होतेहैं तबविशेष्यके लिङ्ग वचन और विभक्ति को प्राप्त होतेहैं, यथा भीतः शिशुः, भीत शिशुम्, भीतेन शिशुना इत्यादि।

सञ्जागरितः, सालिङ्गिता, जलं शुष्कम्।
तथा गमनार्थ धातुके उत्तर भी होता है। यथा, संग्रामंगतः
तथा शी, स्था, आस, वस, श्लिष, रुह इन धातुओंका उपसर्गके सहित योग होकर सकर्म्मक होनेसे भी। यथा, सगरुडमधिशायितः, पिता पुत्रं माश्लिष्टः।

क्त[1] ...... भाववाच्यमे सबधातुके उत्तर होता है। यथा; शिशुभिः रुदितम्

१८ क्त्वा[2] दो क्रियाका एक कर्त्ता होनेसे पूर्व्वकालिक क्रियाबोधक धातुके उत्तर होताहै। यथा (ज्ञा) ज्ञात्वा (निष्ठा मे जिन नियमोंसे इट् होता है क्त्वा मे भी उन्ही नियमों से होताहै[3]) यथा (स्ना) स्नात्वा (पठ) पठित्वा (इट् होनेसे धातुके अन्त्य स्वर और उपधा लघुस्वरको गुण होताहै[4]) यथा (शी) शयित्वा (का-रि) कारयित्वा (जान्त थान्त और फान्त धातुओं के उपधा नकार को विकल्प करके लोप होताहै[5])
यथा (भन्ज) भक्त्वा भङ्क्त्वा इत्यादि। (त्यागार्थ हाको हि) हित्वा।
निषेध अर्थमे अलं और खलु शब्दके योगमे भी धातुके उत्तर होता है। यथा; अलंगत्वा, खलु उक्त्वा।

१९ क्तिन् भाव वाच्यमे धातुके उत्तर होता है। क्तिन् प्रत्यय निष्पन्न शब्द स्त्री लिङ्ग होता है। यथा, (ख्या) ख्यातिः

(१) भाव वाच्यके क्त निष्पन्न शब्द जब समापिका क्रियाकी न्याई व्यवहृत होतेहैं तब नित्य क्लीव लिङ्ग कीप्रथमा के एक वचनान्त होते हैं। यथा तेन कृतम्, ताभ्याम् कृतम्। और जब विशेष्य शब्दकी न्याई व्यवहृत होतेहैं तब उनके रूप अकारान्त क्लीवलिङ्ग शब्दकी न्याई होतेहैं। यथा, गतम् गते गतानि। (२) क्त्वा प्रत्यय निष्पन्न शब्द अव्यय होतेहैं, और असमापिका क्रिया।
(३) पू और क्लिश धातुके उत्तर विकल्पकरके इट् होताहै। यथा, पवित्वा, पूत्वा, क्लिशित्वा, क्लिष्ट्वा। और उकारेत् धातुओंको भी विकल्पकरके इट् होताहै। यथा, क्रमित्वा क्रान्त्वा। (४) मृडादिकों को गुण नहि होता। यथा मृडित्वा, मृदित्वा, रुदित्वा, विदित्वा, मुषित्वा, और मिलि, लिख, क्षिप, कुप, लुध, द्युत, द्युत, रुच, स्फुट, कृश, तृष, और मृष, धातुओंको विकल्पकरके गुण होताहै। यथा, मिलित्वा, मेलित्वा, इत्यादि। (५) वञ्च और लुञ्च धातुओंके [illegible] विकल्पकरके लोप होताहै। यथा, वचित्वा, वञ्चित्वा, लुचित्वा, लुञ्चित्वा॥

(गा) गीतिः (चि) चितिः (शाक्) शक्तिः (पद्) पत्तिः (दृश) दृष्टिः (ग्ला, म्ला, हा, प्रभृति धातुओं के उत्तर ति के स्थान मे नि होती है) यथा ग्लानिः, म्लानिः, हानिः;

२० णक — कर्तृवाच्यमे धातुके उत्तर होताहै। यथा (नी) नायकः (लिप) लेपकः (योजि) योजकः।

तथा — भविष्यत्काल मे निमित्त अर्थ होने से। यथा भोजको व्रजति (भोजन करनेके निमित्त जाता है)

२१ षक — कर्तृवाच्यमे शिल्पी अर्थ होनेसे नृत्, खन, और रञ्ज धातुके उत्तर होताहै। यथा (नृत्) नर्त्तकः (खन) खनकः (रञ्ज) रजकः।

२२ णनट् और थक — तथा गा धातुके उत्तर होताहै। यथा गायनः, गाथकः।

२३ तृच् — कर्तृवाच्यमे धातुके उत्तर होताहै[1]। यथा (दा) दाता (जि) जेता (हन) हन्ता, (सिच) सेक्ता, (लुट् विभक्ति मे जिन धातुओंके उत्तर जिन नियमोंसे इट् होताहै तृच प्रत्यय परे होनेसे भी उन्ही धातुओंके उत्तर उन्ही नियमों से होताहै) यथा (भू) भविता (कारि) कारयिता (दिव) देविता।

२४ अण — तथा कर्म्मवाचक पदके परवर्ती धातुके उत्तर होता है। यथा (कुम्भं करोति) कुम्भकारः, तन्तुवायः, सूत्रधारः,

२५ अट् — तथा सोपपद धातुके उत्तर होताहै। यथा, दिवाकरः, कर्म्मकरः। (हेतु अर्थे) शोककरः, बन्धुनाशः, (अनुकूल अर्थे) बलकरं, पुष्टिकरं अन्नं, हितकरः, प्रीतिकरः, पुरःसरः, अग्रसरः, अग्रेसरः, अग्रतःसरः, (जलेचरति) जलचरः (भुवि चरति) भूचरः, पार्श्वचरः (खेचरति) खचरः[2] (रात्रौ चरति) रात्रिचरः रात्रिञ्चरः (साम गायति)

(१) शील, धर्म्म, और सम्यक् करण अर्थमे भी तृच होताहै। (२) कभी २ अधिकरण वाचक पद विभक्त्यन्त रहताहै। यथा वनेचरः, खेचरः इत्यादि।

सामगः (साम पिबति) सामपः सीधुपः (शत्रुं हन्ति) शत्रुघ्नः

२६ अ कर्त्तृवाच्यमे पचादि और सोपपद अन्यान्य धातुओं के उत्तर होता है। यथा; पचः, चलः, सर्पः, देवः, धरः, (अंशं हरति) अंशहरः (पूजां अर्हति) पूजार्हः (शिलायां शेते) शिलाशयः (पार्श्वेन शेते) पार्श्वशयः (अन्नं ददाति) अन्नदः (तन्त्रं त्रायते) तन्त्रं (धर्म्मं जानाति) धर्म्मज्ञः (भुवं पाति) भूपः, विज्ञः, प्रज्ञः, (गृहे तिष्ठति) गृहस्थः समस्थः (सरसि जायते) सरोजम् (वा सरसिजम्, द्विजः। (अन्तं गच्छति) अन्तगः, दूरगः, खगः, (पतेन पतेण गच्छति) पतगः, पतङ्गः, पतङ्गमः। (क्लेशम् अपहन्ति) क्लेशापहः, शोकापहः, तमोपहः।

२७ अ, इ. तथा जिन धातुओं की उपधामे इ, उ, ऋ, हो तिन्के उत्तर होता है। यथा; विदः, बुधः, तुदः, वृतः॥ तथा ह क्ष गृ धातुके उत्तर भी (और ई को इय ऋ को इर होता है)। यथा, प्रियः, किरः, गिरः। तथा स्ववन्त पद के परवर्ती उह धातुके उत्तर (और ह को घ)। यथा, (कामं दोग्धि) कामदुघा धेनुः॥

२८ णिन् तथा धातुओं के उत्तर होता है कर्त्तृवाच्यमे (शीलान्त वाला अर्थ मे)। यथा; मन्त्री, वादी, अभिलाषी, स्थण्डिलशायी, उष्णभोजी (विकरोति) विकारी, मित्रद्रोही। (सोमेन इष्टवान) सोमयाजी, (पितरं जघान) पितृघाती। (भविष्यत् अर्थमे) भावी, यायी, स्थायी, गामी, प्रतिबोधी, प्रतियोधी, प्रतिरोधी।

२९ घिनुण तथा शील अर्थमे सृज, युज, विच्, त्यज्, रन्ज, धातुओं के उत्तर होता है। यथा; संसर्गी, योगी, विवेकी,

(१) कर्म्मवाच्य क पदके परवर्त्ती आकारान्त धातुके उत्तर अ होता है और आकारलोप होता है।
(२) जब हन् धातुके अन् का और गम् के अ म् का लोप होजाता है अ प्रत्यय परे होनेसे।

त्यागी, रागी।

३० इनु कर्त्तृवाच्यमे (शील अर्थमे शमादिके उत्तर होताहै) यथा, शमी, श्रमी, दमी, क्रमी, तपी, भ्रमी।

तथा (निन्दा अर्थमे कर्म्मवाचक पदके परवर्त्ती अतीत कालमे विपूर्व्वक क्रीधातुके उत्तर भी होता है)। यथा मांस विक्रयी, अक्रविक्रयी, स्नेहविक्रयी तैलविक्रयी, घृतविक्रयी।

३१ खश्. कर्त्तृवाच्यमे। (विधुंतुदति) विधुंतुदः, (अरुस्तुदति) अरुन्तुदः, (परंतपति, तापयति वा) परन्तपः, असूर्य्यम्पश्यः[1], उग्रम्पश्यः, प्रियंवदः, अभ्रंलिहः, वाचंयमः, सर्व्वङ्कषः, कूलङ्कषः, कूलमुद्रुजः, कूलमुद्वहः।

३२ ख तथा संज्ञा अर्थमे। यथा, विश्वम्भरः विष्णुः, पतिंवरा कन्या, वसुन्धरा पृथिवी

३३ खच् तथा। यथा, भयङ्करः, प्रियङ्करः, क्षेमङ्करः, जनन्धयः;

३४ खि तथा। यथा, कुक्षिम्भरिः, उदरम्भरिः।

३५ खश् तथा। (आत्मानं पण्डितं मन्यते) पण्डितम्मन्यः; कृतार्थंमन्यः।

३६ इ तथा। शकृत्करिः, स्तम्बकरिः, फलेग्रहिः, आत्मम्भरिः, उदरम्भरिः।

३७ खनट् करण वाच्यमे प्रिय प्रभृति शब्दके परवर्त्ती कृधातुके उत्तर अभूततद्भाव अर्थमे। यथा, (अप्रियः प्रियः क्रियतेऽनेन) प्रियङ्करणम्, पलितङ्करणम्, नग्नङ्करणम्, अन्धङ्करणम्, स्थूलङ्करणम्, सुभगङ्करणम्, आढ्यङ्करणम्।

३८ खिष्णुच्, खुकञ् कर्त्तृवाच्यमे होताहै तथा। यथा, (अप्रियः प्रियो भवति) प्रियम्भविष्णुः, प्रियम्भावुकः।

३९ णिन् कर्त्तृवाच्यमे। (यह प्रत्यय सम्पूर्ण इत है) ग्रामं

[1] दृश् धातुके [illegible] प्रयुक्त होताहै।

जते) अंशभाक्, (दुःखंभजते) दुःखभाक्।

४७ क्विप् तथा (तथा)। सभासद्, संसद्, परिषद्, उ
त्रसः; मित्रद्विट्, सेनानी (सुकृतवान्) सुकृत,
कर्म्मकृत, पुण्यकृत, (भ्रुणंजघान) भ्रूणहा, ब्र
ह्महा, वृत्रहा, अग्निचित्, सोमसुत्।

४८ क्विप्, षञ् कर्तृवाच्यमे उपमानवाचक तद्, यद्, एत
द्, भवत्, अस्मद्, युष्मद्, अदस्, इदम्, कि
म्, अन्य और समान, शब्दोंके परवर्त्ती दृश
धातुके उत्तर होताहै। यथा; (सइवदृश्यते)
तादृक्, तादृशः, यादृक्, यादृशः, एतादृक्,
एतादृशः; अस्मादृक्, अस्मादृशः, युष्मादृक्,
युष्मादृशः; मादृक्, मादृशः, त्वादृक्, त्वादृशः;
अमूदृक्, अमूदृशः; ईदृक्, ईदृशः, कीदृक्,
कीदृशः; भवादृक्, भवादृशः; सदृक्, सदृशः;
अन्यादृक्, अन्यादृशः।

४९ क्वनिप् कर्तृवाच्यमे कर्म्मवाचक पदके परवर्त्ती दृश
धातुके उत्तर अतीतकालमे होताहै। यथा; (पारं
दृष्टवान्) पारंदृश्वा, शत्रुजित्वा

५० इष्णुच् सह्, रुच्, वृध्, अलङ्कृ, निराकृ, प्रजन्, उत्पच, उ
त्पत, उन्मद्, अपत्रप्, वृत्, चर्, मधु, धातुओंके
उत्तर कर्तृवाच्यमे शीलधर्म्म और सम्यक् कर
ण अर्थमे होताहै। यथा; सहिष्णुः, रोचिष्णुः
वर्द्धिष्णुः; इत्यादि।

५१ स्नुक् जि, भू, स्था और ग्ला धातुओंके उत्तर तथा। जि
ष्णुः; भूष्णुः, स्थास्नुः, ग्लास्नुः,

५२ क्नु त्रस्, गृध्, धृष्, और क्षिप् धातुओंके उत्तर तथा
त्रस्नुः, गृध्नुः, धृष्णुः, क्षिप्नुः,

(१) यहांसे लेकर... और सब कार्य ... होतेहैं।

४६ उकञ्	कम्, लष्, पत्, पद्, स्था, भू, वृष, हन्, गम् और शृ धातुओं के उत्तर तथा। कामुकः, लाषुकः, पातुकः, पादुकः, इत्यादि।
४७ आलु	दय् नि तत् पूर्व्वक द्रा और अत् पूर्व्वक धा, शी, गृहि, स्पृहि, पति, धातुओं के उत्तर तथा। दयालुः निद्रालुः श्रद्धालुः, पतयालुः, इत्यादि।
४८ घुर	भञ्ज्, भास् और मिद धातुओंके उत्तर तथा। भङ्गुरः, भास्वरः, मेदुरः।
४९ क्वरप्	नश, इ, जि, सृ, और गम् धातुओंके उत्तर तथा। नश्वरः; इत्वरः, जित्वरः, गत्वरः, सृत्वरः।
५० र	नम्, हिंस्, स्मि, कम्प्, अजस, और दीप् धातुओंके उत्तर तथा। नम्रः; हिंस्रः; स्मेरः, कम्प्रः, अजस्रः, दीप्रः।
५१ उ	आ पूर्व्वक शन्स, इष्, भिक्ष् और सनन्त धातुओंके उत्तर तथा। आशंसुः, इच्छुः, भिक्षुः, जिज्ञासुः, पिपासुः, बुभुक्षुः, चिकीर्षुः, विवक्षुः, जिघृक्षुः, जिज्ञासुः, तितीर्षुः, ईप्सुः, दित्सुः, लिप्सुः, जिगीषुः इत्यादि।
५२ वर	स्था, ईश, भास, पिस, कस, प्रमद, और यङन्तया धातुओं के उत्तर तथा। स्थावरः, ईश्वरः, भास्वरः, (यायाय) यायावरः।
५३ ऊक	जागृ, और यङन्तयज, जप, वद, और दन्श धातुओं के उत्तर तथा। जागरूकः, यायजूकः, जञ्जपूकः, वावदूकः, दन्दशूकः,
५४ इष्णु	ग्लानि, मदि, दूषि, गदि और हृदि धातुओंके उत्तर तथा। ग्लानयिष्णुः, मदयिष्णुः, दूषयिष्णु, गदयिष्णु, हृदयिष्णुः।
५५ क्मर	घस, अद, और सृ, धातुओं के उत्तर तथा। घस्मरः,

अङ्गारः, स्मरः।

५६ क्र — छिद्, भिद्, और विद् धातुओं के उत्तर तथा। छिद्रः, भिद्रः, विद्रः।

५७ त्र — नी, दा, स्तु, शस्, यु, युज्, तुद्, सि, सिच्, मिह्, पत्, दन्श्, नह् धातुओं के उत्तर कर्त्तृवाच्य करण अर्थमे होताहै। यथा, (नीयते अनेन) नेत्रम्, शस्त्रम्, स्तोत्रम्, पत्रम्, (दश्यते अनया) दंष्ट्रा इत्यादि।

५८ इत्र — करण वाच्यमे पू, चर्, वह्, खन्, लू, अर्, धू, सू, और सह् धातुओं के उत्तर होता है। (पूयते अनेन) पवित्रं, चरित्रं, वहित्रं, खनित्रं इत्यादि।

५९ इ — भाव वाच्यमे उपसर्ग और अन्तर् शब्द के परवर्त्ती धा धातु के उत्तर होता है। (धा) विधिः[1], निधिः, सन्धिः, आधिः, अन्तर्द्धिः। अधिकरणवाच्यमे कर्म्मवाचक पद के परवर्त्ती धा धातु के उत्तर भी होताहै। यथा (जलानि धीयन्ते ऽस्मिन्) जलधिः, वारिनिधिः, पयोधिः इत्यादि।

६० त्रिमक् — निर्वृत्त अर्थमे डु इत् धातुओं के उत्तर होताहै। यथा; (क्रियया निर्वृत्तम्) कृत्रिमम्, दत्रिमम्, पक्त्रिमम्।

६१ अथु — भाववाच्यमे टु इत् धातु के उत्तर होताहै। यथा; वेपथुः, वमथुः, श्वयथुः।

६२ अनि — भाववाच्य मे नञ् के परवर्त्ती धातुओं के उत्तर आक्रोश अर्थमे होताहै। अनि प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग होते हैं। यथा; (जीव) अजीवनिः (जन) अजननिः।

६३ अन — भाववाच्यमे धातुओं के उत्तर होताहै। अन प्रत्ययान्त शब्द क्लीव लिङ्ग होते हैं। यथा; (गम) गम-

(१) धा के आ का लोप होताहै।

नम्, भोजनम्, शयनम्, दर्शनम्[१]। कर्त्तृवाच्य मे नन्दि प्रभृति के उत्तर भी होता है। यथा; नन्दनः, मदनः, साधनः, क्रोधनः, रोषणः; ज्वलनः, शोचनः, अलङ्करणः इत्यादि।

९४ अनट् — करण और अधिकरण अर्थमे होताहै। यथा; (नीयतेऽनेन) नयनम्, लोचनम्, चरणम्, भूषणम्, (शय्यतेऽस्मिन्) शयनम्, भवनम्, स्थानम्,

९५ घञ् — भाव वाच्यमे, और कर्त्तृभिन्न कारक वाच्यमे होताहै। यथा पाकः, त्याग, शोकः, स्रावः, सङ्गः, स्वादः, इत्यादि।

९६ अ — तथा —— जयः, लयः, वर्षम्, बोधः, भिदः।

९७ अ, अन, — कर्म्मवाच्यमे। सुशासनः, सुशासः, दुःशासनः, दुःशासः, सुयोधनः, सुयोधः, दुर्योधनः, दुर्योधः, सुदर्शनः, सुदर्शः, सुधर्षः, सुधर्षणः, सुमर्षः, सुमर्षणः।

९८ आ[२] — भाववाच्यमे प्रत्ययान्त धातु और नाम धातुओं के उत्तर होताहै। यथा; जिज्ञासा, तपस्या, पुत्रकाम्या।

तथा —— गुरुस्वर विशिष्ट व्यञ्जनान्त धातुओं के उत्तर भी होताहै। यथा; भिक्षा, सेवा, क्रीडा।

तथा षित् धातु के उत्तर होताहै। यथा, त्रपा, व्यथा, मृजा,

तथा भिद् प्रभृति धातुओं के उत्तर भी (और गुण नहिं होता)। यथा; भिदा, छिदा, क्षुधा, तृषा, क्षमा, दया, इच्छा, प्रच्छा।

(१) णिजन्त वन्द विद् ईष आस के उत्तर अन होनेसे स्त्रीलिङ्ग आकारान्त होते हैं। यथा; (कारि) कारणा, भावना, विडम्बना, वन्दना, ईषणा, आसना, (णिजन्त क्लीवलिङ्ग भी होते हैं) प्रेरणम् गोपनम्, इत्यादि। (२) आ और यक् प्रत्ययान्त शब्द स्त्री लिङ्ग होते हैं।

तथा उपसर्ग के परवर्ती आकारान्त धातु के उत्तर। यथा, आभा, प्रभा, संस्था, आज्ञा, निष्ठा-

तथा श्रत् और अन्तर् के परवर्ती धा के उत्तर। श्रद्धा, अन्तर्द्धा,

९९ न तथा यज्ञः, यत्नः, स्वप्नः, प्रश्नः, याच्ञा, तृष्णा।

१०० यक्[१] तथा व्रज्या, परिव्रज्या, चर्य्या, मृगया, विद्या। क्रिया[२], कृत्या, शय्या, इज्या।

इति कृत् प्रकरणम् ॥

(१) आ और यक् प्रत्ययान्त शब्द भी सिद्ध होते हैं।

(२) क्रियादि शब्द निपातन से सिद्ध होते हैं।

तद्धितप्रकरण

साधारणनियम।

१ नामसे उत्तर जो प्रत्यय होतेहैं उन्हे तद्धित प्रत्यय कहते हैं

२ णकारान्त तद्धित प्रत्यय परे होनेसे नामके आदि स्वर को वृद्धि होती है। (कहीं २ नहिं भी होती है)

३ तथा (१)सुभगादि शब्दोंके दोनो पदोंके आदि स्वर की वृद्धि होती है।

४ तथा (२)सुपञ्चालादिशब्दोंके द्वितीय पदके आदि स्वर की वृद्धि होती है।

५ तद्धित प्रत्ययका य और स्वर परे होनेसे नामके अन्त्य इ और अ को लोप होता है।

६ ——— तथा ——— उ को गुण होता है।

७ ओकार और औकार के परस्थित तद्धित य स्वरका काम देता है।

८ इकारेत् तद्धित प्रत्यय परे होनेसे नामकी (३)टि का लोप होताहै।

९ णित् प्रत्यय होनेसे पदके अन्तस्थित आद्य स्वरस्थान जात य को इय् और व को उव् होता है।

१० (४)द्वारादि शब्दोंके आदि य् और व को इय्, उव्, होता है।

११ (५)स्वागतादि शब्दोंके आदि य और व को इय् उव् नहिं होता।

१२ श्वापद और न्यङ्कु के य और व को विकल्प करके इय् उव् होताहै

(१) सुभगा, दुर्भगा, आधदेव, अधिभूत, परलोक, सर्वलोक, अङ्गपाल, परस्त्री इत्यादि। (२) सुपञ्चाल, अर्द्धपञ्चाल, अग्निदेवता, पितृदेवता, द्विवर्ष, त्रिवर्ष, चतुर्वर्ष, पञ्चवर्ष, इत्यादि। (३) अन्त्यस्वर और उससे पीछे जो वर्ण हो उन्हे टि कहते हैं। (४) द्वार, स्वर, स्वाध्याय, व्यल्कस, स्वस्ति, स्वर, स्फ्यकृत, स्वादुमृदु, श्वस, स्व इत्यादि। (५) स्वागत, स्वध्वर, स्वङ्ग, व्यङ्ग, व्यड, व्यवहार, स्वपति।

१३ अकारान्त तद्धित प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होते हैं।
१४ तद्धित प्रत्यय परे होनेसे नाम के अन्त स्थित नकारका लोप होताहै।
१५ षण् प्रत्यय होनेसे अन् भागान्त शब्दके न् का लोप नहिं होता।
१६ तद्धितकाय परे होनेसेभी ——— तथा ——— (१)
१७ षण् प्रत्यय होनेसे इन भागान्त शब्दके ——— तथा ———
१८ तथा अपत्यार्थ होनेसे मन् भागान्त नामके न् का लोप नहिं होता

अपत्यार्थप्रत्ययाः

१ ष्णि अपत्य अर्थमें अकारान्त नाम के उत्तर होता है। यथा; (शूरस्यापत्यं) शौरिः, द्रौणिः, दाशरथिः, वैकर्णिः, कार्ष्णिः, (व्यासस्यापत्यं) वैयासकिः, सौधातकिः, इत्यादि।
बाहु प्रभृति शब्दसे भी होता है। (बाहोरपत्यं) बाहविः इत्यादि।

२ ष्णायनण् नड़ादि- से (नड़स्यापत्यं) नाड़ायनः, चारायणः नारायणः, शातायणी इत्यादि।

३ ष्यण् गर्गादि - से (गर्गस्यापत्यं) गार्ग्यः, वात्स्यः, चाणक्यः, पाराशर्य्यः इत्यादि।

४ षण् शिवादि से (शिवस्यापत्यं) शैवः, (पृथाया अपत्यं) पार्थः इत्यादि।
विदादि से भी (विदस्यापत्यं) वैदः, और्व्वः, काश्यपः, भारद्वाजः इत्यादि।
भृग्वादि से भी (भृगोरपत्यं) भार्गवः, मारीचः, पाण्डवः, हैमावतीः इत्यादि।

(१) कर्म्म और भाव अर्थमें न् लोप होताहै। (२) यहांडक् आगम हुआहै।
(३) षण् प्रत्यय होनेसे संख्यावाचक शब्दसे परवर्ती मातृशब्दके उत्तर उर् होताहै॥

५ ढेयण् स्त्री प्रत्ययान्त[1] नाम के उत्तर होता है। (गङ्गाया अपत्यं) गाङ्गेयः, राधेयः, इत्यादि।
शुभ्रादि शब्दों से भी (शुभ्रस्यापत्यं) शौभ्रेयः, आत्रेयः, वैमात्रेयः, (ढेयण् होने से नाम के अन्त्य उवर्ण का लोप होता है।[2]) (मृकण्डुरपत्यं) मार्कण्डेयः (तथा सुभगादि के उत्तर इन् होता है)
सौभागिनेयः, बान्धकिनेयः इत्यादि।
(कुलटादि[3] शब्दों से विकल्प करके) कौलटिनेयः, कौलटेयः।

६ ढीयण्[4] स्वसृप्रभृति शब्दों से: (स्वसुरपत्यं) स्वस्रीयः इत्यादि।

७ ढिकण् रेवती प्रभृति से। रैवतिकः, आश्वपालिकः, दाण्डग्राहिकः इत्यादि।
उक्त प्रत्ययों का कहीं २ लोप भी होजाता है; परन्तु स्त्रीलिङ्ग में नहिं होता। यथा (गर्गस्यापत्यानि) गर्गाः,[5] यस्काः, विदाः, अत्रयः, (कहीं २ लोप का विकल्प भी होता है) राघवः (वा) राघवाः (स्त्रियान्तु) यस्कस्यापत्यानि स्त्रियः यास्क्यः इत्यादि।

(१) स्त्री प्रत्ययों का विधान आगे होगा।
(२) पाण्डु और कद्रु शब्द के उवर्ण का लोप नहिं होता पाण्डवेयः, काद्रवेयः।
(३) कुलटा का अर्थ यहां भिक्षोपजीविनी सती स्त्री है। व्यभिचारिणी अर्थ मे तो कौलटेयः और कौलटेरः होता है।
(४) पितृष्वसृ और मातृष्वसृ शब्दों के उत्तर विकल्प करके ढेयण् होता है, और ढेयण् होने से ऋ का लोप होता है। यथा; पैतृष्वसेयः, पैतृष्वस्रीयः, मातृष्वसेयः मातृष्वस्रीयः।
(५) गर्गादि यस्कादि गण हैं।

अर्थविशेषप्रत्ययाः

१ अपत्यार्थ उक्त प्रत्यय और इय, कण, ईन, षीकण, ये प्रत्यय सब अर्थ विशेष में भी यथा सम्भव होते हैं।

२ तद्वेत्ति तदधीते इन अर्थोंमे (तर्कं वेत्ति अधीते वा) तार्किकः पौराणिकः, शिक्षकः[1], मीमांसकः, इत्यादि।

३ तेनप्रोक्तम्—(ऋषिणाप्रोक्तं) आर्षम्, मानवं, मानवीयम्, नारदीयम्, इत्यादि।

४ तेनकृतम्—(कायेनकृतं) कायिकम्, पौरुषेयम्, तौरुम्, वाचनिकम्।

५ तेनरक्तम्—(कषायेणरक्तं) काषायम्, माञ्जिष्ठम्, पीतकम्,

६ साऽस्यदेवता—(शिवोऽस्य देवता) शैवः, वैष्णवः, अग्नीषोम्यम्,

७ तस्यसमूहः—(भिक्षाणांसमूहः) भैक्षम्, मानुष्यकम्, ग्रामण्यम्,

८ तत्रभवः—(मथुरायांभवः) माथुरः, कुलीनः, शारीरिकम्, (अकस्माद्भवं) आकस्मिकम् (बहिर्भवम्) बाह्यम्, बाहीकम्,

९ तत्रसाधुः—(सभायांसाधुः) सभ्यः, सामाजिकः, सांग्रहिकः;

१० तस्मिन्देयंकालात्—(मासेदेयम्) मासिकम्, वार्षिकम्, आर्तविकम्

११ निर्वृत्ते—(दिनेननिर्वृत्तं) दैनिकम्, मासिकम्, सम्वत्सरीयम्, आह्निकम्,

१२ व्याप्तौ—(दिनंव्याप्यस्थितम्) दैनकम्, मासिकम्, चातुर्मास्यम्

१३ वयसि—(द्वेवर्षेअस्यवयः) द्विवार्षीणः, षोडशवार्षिकः

१४ ततआगतः—(मथुरायाआगतः) माथुरः, पैतामहम्, स्रैणम्,

१५ तदर्हति—(शतमर्हति) शतिकः (दण्डमर्हति) दण्ड्यः, दक्षिणीयः;

(१) शिक्षादि शब्दोंका अन्त्यस्वर ह्रस्वहोजाताहै। और शब्दोंमे प्रयोगानुसार आदेशादि जानने चाहियें॥

१६ तस्मादनपेतम् (धर्म्मादनपेतं) धर्म्यम्, वैधम्, न्याय्यम्,

१७ तस्येदम् — (विष्णोरिदं) वैष्णवम्, शैवम्, आस्त्रम्, युष्मदीयम्, त्वदीयम्, मदीयम्, यौष्माकीणं, यौष्माकम्, आस्माकीनम्, आस्माकम्, तावकीनम्, तावकम्, मामकीनम्, मामकम्, परकीयम्, स्वकीयम्, स्वीयम् (सूर्य्यस्येदम्) सौरम् (सरस्या इदम्) सारसं जलं, स्वायम्भुवम्, भवदीयम्, अन्यदीयम्,

१८ तस्य विकारः — (सुवर्णस्य विकारः) सौवर्णः, राजतः (सीसस्य विकारः) सैसः, तैलम्

१९ तदस्य पण्यम् — (लवणमस्य पण्यं) लावणिकः, तैलिकः, ताम्बूलिकः,

२० तदस्य प्रहरणम् — (धनुरस्य प्रहरणम्) धानुष्कः, आसिकः, तारवारिकः,

२१ तदस्य प्रयोजनम् — (स्वर्गः प्रयोजनमस्य) स्वर्ग्यम्, यशस्यम्, काम्यम्,

२२ तदस्य शीलम् — (तपोऽस्य शीलं) तापसः, छात्रः, शैतः, चौरः

२३ तदस्य प्राप्तं कालात् — (समयोऽस्य प्राप्तः) सामयिकः, कालिकः, दैहिकः, आर्तवः,

२४ अधिकृत्य कृते ग्रन्थे — (राममधिकृत्य कृतं) रामायणं, भागवतं, भारतम्,

२५ तस्मै प्रभवति — (सन्तापाय प्रभवति) सान्तापिकः, सांग्रामिकः, सांघातिकः, (कर्म्मणे प्रभवति) कार्मुकं धनुः

२६ तस्मै हितम् — (यज्ञाय हितं) यज्ञियम्, अध्वरीणम्, ब्राह्मण्यम्

२७ कालेन नक्षत्रयोगे (विशाखया नक्षत्रेण युक्तो मासः) वैशाखः, माघः, तैषः, पौषः, चैत्रः, चैत्रिकः,

कार्त्तिकः, कार्त्तिकिकः,

२८ तद्वहति — (धुरंवहति) धुर्य्यः, धौरेयः, चतुर्धुरीणः, हालिकः, सैरिकः,

२९ तेनजीवति — (वेतनेनजीवति) वैतनिकः, वाहनिकः, नाविकः,

३० तदस्मिन्दीयते — (द्वावस्मिन् वृद्धिः आयः लाभः शुल्कं उपदा वादीयते) द्विकंशतनम्, त्रिकंशतनम्, चतुष्कंशतनम्, पञ्चकंशतनम्,

३१ तादर्थ्ये — (पादार्थमुदकम्) पाद्यम्, अर्घ्यम्, बालेयम्, आतिथ्यम्,

३२ स्वार्थे — (बन्धुरेव) बान्धवः, चोरः, चाण्डालः, मानसम्, सैन्यम्,

३३ सोऽस्यनिवासोऽभिजनोवा — (मथुरा अस्यनिवासः) माथुरः, (गन्धारोऽस्याभिजनः) गान्धारः (बहुवचनेतु प्रत्यय लोपः) (अङ्ग. एषांनिवासः) अङ्गाः, बङ्गाः, कश्मीराः, (स्त्रियांलोपोन) (मगधः आसांनिवासः) मागधः, पाञ्चाल्यः, वैदेह्यः,

३४ सोऽस्यराजेत्येवम् — (कश्मीरस्यराजा) काश्मीरः, (बहुवचने) काश्मीराः,

३५ तस्यभावः — (कुमारस्यभावः) कौमारम्, गाम्भीर्य्यम्, बाल्यम्, कार्पण्यम्,

३६ तस्यभावःकर्म्मच (ब्राह्मणस्यभावः कर्म्म वा) ब्राह्मण्यम्, चौर्य्यम्, चातुर्य्यम्, चातरी,

३७ इतरेष्वपि। और २ अर्थोंमे भी उक्त प्रत्यय होते हैं (धर्म्मं चरति) धार्म्मिकः, (वंशमानः) वप्यः (पृथिव्या ईश्वरः) पार्थिवः, इत्यादि।

३८ लोपःक्वचित्प्रत्ययस्य विभाषाच। कहीं प्रत्ययोंका लोप और विकल्प भी होजाता है (व्रीहीणांफलानि) व्रीहयः, (मल्लिकायाः पुष्पं) मल्लिका, जम्बु (वा) जाम्बवम्, इत्यादि।

अर्थविशेषेप्रत्ययविशेषः

अर्थविशेषमें और २ प्रत्यय भी होतेहैं। यथा;

१ षण्ड काण्ड तलः समूहे (कमलानांसमूहः) कमलषण्डम्, उर्व्वीकाण्डम् कर्म्मकाण्डम्, (जनानांसमूहः) जनता[1], बन्धुता, इत्यादि।

२ तल् स्वार्थे देवात् (देवएव) देवता

३ त्व तलौ तस्य भावः (प्रभोर्भावः) प्रभुत्वं, प्रभुता, भीरुत्वं, भीरुता, राजत्वं, राजता,

४ इमनि वा नीलादेः (नीलस्यभावः) नीलिमा, नीलत्वं, नीलता, पीतिमा, (लघोर्भावः) लघिमा[2], (पृथोर्भावः) प्रथिमा[3], (प्रियस्यभावः) प्रेमा[4], (महतोभावः) महिमा, (गुरोर्भावः) गरिमा, द्राघिमा, म्रदिमा, (बहोर्भावः) भूमा

५ नञ् स्नञ् भवे (स्त्रीपुंभवं) स्त्रैणम्, पौंस्नम्

६ धेयः तथा भागरूपनामभ्यः (भागएव) भागधेयम्, रूपधेयम्, नामधेयं

७ तिकन् तथा मृदः (मृदेव) मृत्तिका

८ स स्नौ प्रशंसायाम् (प्रशस्तामृत्) मृत्सा, मृत्स्ना,

९ वतिर् औपम्ये (चन्द्र इव मुखम्) चन्द्रवन्मुखं, (हिमसिव) हिमवत्, इत्यादि

१० चुञ्चु, चणौ तेन वित्तः (अर्थेन वित्तः) अर्थचुञ्चुः अर्थचणः,

११ इतच् तदस्यास्मिन्वा सञ्जातं (तारका अस्मिन् सञ्जाताः) तारकितं नभः, पल्लवितस्तरुः, पुष्पिता लता, पुलकितं शरीरं

१२ मात्रट् दघ्नट् द्वयसटः प्रमाणे (हस्तः प्रमाणमस्य) हस्तमात्रं

(१) तल प्रत्ययान्त शब्द स्त्रीलिङ्ग होता है। (२)
(२) इमनि इष्ठ ईयस प्रत्ययोंमे शब्दके अन्त्य उवर्ण का लोप होताहै
(३) —— तथा —— पृथु मृदु दृढ कृश भृश परिवृढ इनके ऋकारको र होताहै।
(४) —— तथा —— प्रियको प्र महतको मह आदेश होताहै। और शब्दोंमे भी प्रयोगानुसार आदेशादि होतेहैं।

हस्तदघ्नं, हस्तद्वयसम्

१३ डतिः संख्यापरिमाणे किमः (का संख्यापरिमाणमेषां) कति

१४ तयप् अवयवे संख्यायाः (चत्वारोऽवयवा अस्य) चतुष्टयम्, पञ्चतयम्, सहस्रतयम्, शततयम्,

१५ उयप् वा द्वित्रिभ्याम् (द्वाववयवावस्य) द्वयम् (वा) द्वितयम्, त्रयं, त्रितयम्

१६ यः उभात् (उभाववयवावस्य) उभयम्

१७ ड शदस्मिन्नधिकमिति दशान्तात् (एकादश अधिका अस्मिन्) एकादशं शतम्, द्वादशं शतम्, त्रयोदशं शतम्, चतुर्दशं शतम्

डः शदन्तविंशतेश्च (त्रिंशदधिका अस्मिन्) त्रिंशं शतम्, चत्वारिंशं शतम्, पञ्चाशं शतम्, चतुश्चत्वारिंशं शतम्, पञ्चपञ्चाशं शतम् विंशं शतम् एकविंशं शतम्

१८ डट् संख्यायाः पूरणे (एकादशानां पूरणः) एकादशः षोडशः अष्टादशः

१९ मट् नान्तात् तथा (पञ्चानां पूरणः) पञ्चमः, सप्तमः, दशमः;

२० थुट् चतुः षष्कतिभ्यः (चतुर्णां पूरणः) चतुर्थः (षण्णां पूरणः) षष्ठः (कतीनां पूरणः) कतिथः कतिपयथः

२१ तीयः द्वेः (द्वयोः पूरणः) द्वितीयः; तृतीयः तुर्यः तुरीयः (निपातनात्)

२२ तमट् वा विंशत्यादेः (विंशतेः पूरणः) विंशतितमः विंशः चत्वारिंशत्तमः चत्वारिंशः

— नित्यं शतादेः (शतस्य पूरणः) शततमः, सहस्रतमः, अयुततमः, मासतमः, संवत्सरतमः;

— षष्ट्यादेश्च (षष्टेः पूरणः) षष्टितमः, सप्ततितमः अशीतितमः नवतितमः

२३ तिथुक् बहुगणपूगसंघेभ्यः (बहूनां पूरणः) बहुतिथः

गणतिथः पूगतिथः संघतिथः।

२४ इथुक् यवतोऽन्तात् (यावतां पूरणः) यावतिथः, तावतिथः, एतावतिथः, कियतिथः, इयतिथः,

२५ मतुप् तदस्यास्त्यस्मिन्वाऽस्ति (मतिरस्यास्ति) मतिमान्, पितृमान् (वायुरस्मिन्नस्ति) वायुमान् (गावोऽस्यां सन्ति) गोमती शाला।

२६ वतुप् परिमाणे (यत्परिमाणमस्य) यावान्, तावान् एतावान्, कियान्, इयान्।

अवर्णान्तात् (ज्ञानमस्यास्ति) ज्ञानवान्, विद्यावान्, दयावान्।

झयोऽन्ताच्च (विद्युदस्मिन्नस्ति) विद्युत्वान्मेघः, (इदमस्यास्ति) इदंवान्।

अवर्णोपधाच्च (भासोऽस्यास्ति) भास्वान्, द्वार्वान्

मकारोपधाच्च (लक्ष्मीरस्यास्ति) लक्ष्मीवान्, शमीवान्

यवादेर्न (अतएव मतुप्) यवमान् ऊर्म्मिमान्, वशामान्, भूमिमान्, द्राक्षामान्, गरुत्मान्, महत्मान्, हरित्मान्, ककुद्मान्, उर्म्मिमान्, कृमिमान्।

२७ ड्मतुप् कुमुदनडमहिषवेतसेभ्यः (कुमुदान्यस्मिन्सन्ति) कुमुद्वान्, नड्वान्, वेतस्वान्, महिष्मान्।

२८ विनिर्वा असमायामेधास्रजः (यशोऽस्यास्ति) यशस्वी, मायावी, मेधावी, स्रग्वी (पक्षे मतुप्) यशस्वान्, मायावान्, मेधावान्, स्रग्वान्।

नित्यं तपसः (तपोऽस्यास्ति) तपस्वी, तपस्विनी

२९ इन् वानेकस्वरादवर्णात् (पक्षे मतुप् वतुप् विनः) (ज्ञानमस्यास्ति) ज्ञानी ज्ञानवान्, मायी, मायावी, विवेकी, विवेकवान्।

नित्यं सुखादेः (सुखमस्यास्ति) सुखी, दुःखी, प्रणयी

लक्ष्मी, सहस्री।

हस्तकराभ्यां जातौ (हस्तोऽस्यास्ति) हस्ती गजः, करी गजः (अन्यत्र) हस्तवान् पुरुषः।

वर्णाद्ब्रह्मचारिणि (वर्णोऽस्यास्ति) वर्णी, ब्रह्मचारी, (अन्यत्र) वर्णवान्।

पुष्करादिभ्यो देशे (पुष्कराण्यस्यां सन्ति) पुष्करिणी दीर्घिका, पद्मिनी नलिनी।

अर्थाद्याचके (अर्थोऽस्यास्ति) अर्थी याचकः (अन्यत्र) अर्थवान्।

अर्थान्तेभ्यश्च (विद्यारूपोऽर्थः प्रयोजनमस्यास्ति) विद्यार्थी, धनार्थी।

२० लो मांसादेर्वा (मांसमस्यास्ति) मांसलः; श्रीलः; पक्ष्मलः; शीलः; पिङ्गलः।

२१ इलच्च फेनात् (फेनोऽस्मिन्नस्ति) फेनलः; फेनिलः (पक्षे) फेनवान्।

पिच्छापङ्काभ्याम् (पिच्छास्यास्ति) पिच्छिलः; पङ्किलः

२२ शः लोमादेः (लोमान्यस्य सन्ति) लोमशः; रोमशः गिरिशः, कर्कशः; कपिशः।

२३ उरो दन्तात् (उन्नता दन्ताः सन्त्यस्य) दन्तुरः।

२४ र ऊषशुषिमुष्कमधो मुखादेश्च। ऊषरः शुषिरः मुष्करः; मधुरः; मुखरः; कुञ्जरः; नगरम्, पाण्डुरः।

रः कुटीशमीशुण्डाभ्यो ह्रस्वे (ह्रस्वा कुटी) कुटीरः; शमीरः; शुण्डारः।

२५ ड्वलच् नडशादात् (नडाः अस्मिन् सन्ति) नड्वलः; शाद्वलः।

२६ वलः कृष्यादेः (कृषिरस्यास्ति) कृषीवलः परिषद्वलः; रजस्वला

२७ वः केशादेः संज्ञायाम् (केशाः सन्त्यस्य) केशवो विष्णुः मणिवो नागः; गाण्डीवम् धनुः।

(१) वल होने से अन्त्य स्वर दीर्घ होता है।

३८ आमिन् स्वादे स्वर्यं (स्वमैश्वर्यमस्यास्ति) स्वामी।
३९ आलुः शीतोष्णाभ्यामसहने (शीतंनसहते) शीतालु, उष्णालुः।
४० किन् वातातिसाराभ्यां रोगे (वातोऽस्यास्ति) वातकी, अतीसारकी।
४१ भो बल्यादेः (बलिरस्तिवलि) वलिभम्, मध्यमम्।
४२ अ दर्शआदेः (अर्शांसि अस्य सन्ति) अर्शसः, उरसः, पलितः; जटः, अम्लः, अग्रः, लवणः।
४३ यु अहं शुभं भ्यां (अहं अस्यास्ति) अहंयुः; अहङ्कारवान्, शुभंयुः, शुभान्वितः।
४४ जाहः कर्णादेर्मूले (कर्णस्य मूलं) कर्णजाहम्, अक्षिजाहम्, भ्रूजाहम्, नखजाहम्, केशजाहम्, पादजाहम्, शृङ्गजाहम्, दन्तजाहम्।
४५ तिः पक्षात् (पक्षस्य मूलं) पक्षतिः।
४६ इनिस्तनो पार्थे इष्टवोन् (इष्टं अनेन कृतं भुक्तं पीतं गतंवा) इष्टी, कृत इष्टी कटं, भुक्त इष्टी ओदनं, पीत इष्टी पयः, गत इष्टी गृहम्।

इष्टादिभ्यश्च (इष्टमनेन) इष्टीयज्ञे, अधीती शास्त्रे, श्रुतीवेदे।

४७ तमप् इष्ठनौ अतिशायने (अयमेषामतिशयेन पटुः) पटुतमः, पटिष्ठः; गुरुतमः, गरिष्ठः, मृदुतमः म्रदिष्ठः; कृशतमः, क्रशिष्ठः।
४८ तरप् ईयसुनौ द्वयोः (अयमनयोरतिशयेन पटुः) पटुतरः, पटीयान्, प्रियतरः, प्रेयान्, मृदुतरः, म्रदीयान्, दीर्घतरः, द्राघीयान्।
४९ इष्ठ ईयसुनौ (अयमेषामतिशयेन प्रशस्यः) श्रेष्ठः[१] (अयमनयोरतिशयेन प्रशस्यः) श्रेयान्, ज्येष्ठः; ज्यायान्,

(१) श्रेष्ठादिशब्दोंमे प्रयोगानुसार आदेशादि होतेहैं।

वर्षिष्ठः, वर्षीयान्, नेदिष्ठः, नेदीयान्, साधिष्ठः, साधीयान्, कनिष्ठः, कनीयान्, अल्पिष्ठः, अल्पीयान्, कनिष्ठः, कनीयान्, यविष्ठः, यवीयान्, स्थविष्ठः, स्थवीयान्, दविष्ठः, दवीयान्, वरिष्ठः, वरीयान्, क्षोदिष्ठः, क्षोदीयान्, क्षेपिष्ठः, क्षेपीयान्, वंहिष्ठः, वंहीयान्, स्थेष्ठः, स्थेयान् (अयमेषामतिशयेन मायावी) मायिष्ठः, मायीयान्, बलिष्ठः, बलीयान्, भूयान्, भूयिष्ठः।

५० **डतरच् किंयत्तदां द्वयोरेकस्य निर्धारणे।** अनयोः कतरो वैष्णवः; अनयोर्यतरो ब्राह्मणः ततर आगच्छतु

५१ **डतमच् बहूनां।** एषां कतमः शैवः, एषां यतमः क्षत्रियः ततमः प्रयातु।

एकान्याभ्याम्। भवतोरेकतरः पठतु, भवतामेकतमः शृणोतु, तयोरन्यतरो यातु, तेषामन्यतमो यातु।

५२ **तराप् तमप् किमेदव्ययादद्रव्ये प्रकोत्कर्षे।** किन्तराम्, किन्तमाम्, प्राह्णेतराम्, प्राह्णेतमाम्, उच्चैस्तराम्, उच्चैस्तमाम्, (द्रव्ये किं) उच्चैस्तरस्तरुः।

५३ **रूपप् प्रशंसायाम्** (प्रशस्तो वैयाकरणः) वैयाकरणरूपः, नैयायिकरूपः, आलङ्कारिकरूपः।

५४ **कल्पप् देश्य देशीयाः ईषदूने** (ईषदूनो विद्वान्) विद्वत्कल्पः, विद्वद्देश्यः, विद्वद्देशीयः।

तिङन्तात् तरामादि (पठतितराम् पठतितमाम् पठतिरूपम् पठतिकल्पम् पठतिदेश्यम् पठतिदेशीयम्

५५ **बहुः पुरस्तात् तु वा:** (ईषदूनः पटुः) बहुपटुः (वा) पटुकल्पः, पटुदेश्यः

५६ **स्थानस्थानीयौ तेन तुल्यः** (पित्रा तुल्यः) पितृस्थानः, पितृस्थानीयः, मातृस्थाना, मातृस्थानीया।

५७ **जातीयः जातौ।** ब्राह्मणजातीयः, क्षत्रियजातीयः, पुरु

ब जातीयः वैयाकरणजातीयः तार्किकजातीयः

५८ कृत्वसुच संख्यायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने[1] (पञ्च वारान् भुङ्क्ते) पञ्चकृत्वोभुङ्क्ते, सप्तकृत्वः, शतकृत्वः प- ठति

५९ सुच् द्वि त्रि चतुर्भ्यः (द्वौवारौभुङ्क्ते) द्विर्भुङ्क्ते त्रिर्भुङ्क्ते चतुर्भुङ्क्ते (एकवारंभुङ्क्ते) सकृद्भुङ्क्ते स- कृदधीते

६० धातु र्वदोर्वा क्रिया वृत्तान कालस्य परस्परनैकटे बहुधादिवसस्यभुङ्क्ते, बहुकृत्वोदिवसस्यभुङ्क्ते (नैक टेति किं, बहुकृत्वो मासस्यागच्छति

संख्याया विधार्थे (एकाविधा) एकधा (द्वेविधे) द्विधा, त्रिधा, चतुर्धा, पञ्चधा,

भावान्तरापादानेच। पञ्चराशीन् एकधाकुरु, एकं राशिं पञ्चधाकुरु

६१ चशस् बह्वल्पार्थाद्वाकारकात् (बहुददाति) बहु- शो ददाति (भूरि ददाति) भूरिशो ददाति अल्पशोददाति (कारकेतिकिं) बहूनांस्वामी त्यत्रमाभूत

संख्यैकदेशवचनाच्च वीप्सायाम् (संख्या) (द्वौद्वौददाति) द्विशो ददाति, पञ्चशो ददाति (एकदेशवा- चक) (पादं पादं ददाति) पादशो ददाति, अर्द्धशोददाति

६२ मयट् विकारे (स्वर्णस्य विकारः) स्वर्णमयो घटः, स्वर्ण मयी प्रतिमा, मृण्मयः (हिरण्यस्य विकारः) हिरण्मयः[2]

६३ मयट् अवयवे (दारूण्यस्यावयवाः) दारुमयमासन- म्, दर्भमयोब्राह्मणः

व्याप्तौ (जलेनव्याप्तं) जलमयं, रोगमयं शरीरम् धूममयंगृहम्।

संसर्गे (तिलेनसंसृष्टं) तिलमयं तर्पणम्, घृतमयं मज्जनम्।

(१) क्रियाभ्यावृत्तिः क्रियायाआवृत्तिः (२) एकस्यशोकृदादेशश्च (३) हिरण्मय हिरण्यआदेशः

अश्वत्थभावे च (विष्णोः तत्त्वम्) विष्णुमयं जगत्
मानुष्यं शास्त्रम्, चिन्मयः पुरुषः
गोश्च पुरीषे (गोः पुरीषं) गोमयम्

५३ तैलन् स्नेहे (तिलस्य स्नेहः) तिलतैलम् सर्षपतैलम्
एरण्डतैलम्

५४ पाशः कुत्सिते (कुत्सितो वैयाकरणः) वैयाकरणपाशः
भिषक्पाशः, वैदिकपाशः, लेखकपाशः, पाचकपाशः, मीमांसकपाशः।

५५ चरट् भूतपूर्वे (आढ्यो भूतपूर्वः) आढ्यचरः, दृष्टचरः
अधीतचरः, अधीतचरः।

५६ रूप्य सम्बन्धे (देवदत्तस्य भूतपूर्वं) देवदत्तरूप्यं,
देवदत्तचरं वा भवनम्।

५७ आकिनिर्-एकादसहाये (एक एव) एकाकी, एकाकिनी।

५८ स्वार्थे कन् कुत्सिते (कन्या एव) कन्यका (तारा एव) तारका

५९ इक बालादेः (बाला एव) बालिका, नालिका, त्रिशुलिका, चन्द्रिका, लतिका।

६० कन् अज्ञाते (कस्यायमश्वः) अश्वकः, उष्ट्रकः, महिषकः
गर्दभकः।
कुत्सिते (कुत्सितोऽश्वः) अश्वकः, महिषकः।
अल्पे (अल्पं तैलम्) तैलकम्, क्षीरकम्, सलिलकम्।
ह्रस्वे (ह्रस्वो हस्तः) हस्तकः, पटकः, दण्डकः,
अनुकम्पायाम् (अनुकम्पितः पुत्रः) पुत्रकः वत्सकः
उर्वलकः।
संज्ञायाम्, कारकः, रोहिलकः, शर्विलकः, (मालती)
मालविका।

६१ तरट् ह्रस्वे स्थोल्यवत्सोक्षेभ्यः (ह्रस्वोऽश्वः) अश्वतरः,
उष्ट्रतरः, वत्सतरः ऋषभतरः

(१) कन होने से स्त्रीलिङ्ग शब्द का अन्त्यस्वर ह्रस्व हो जाता है

७२ **तसिल् वा पञ्चम्याः।** गृहात्, गृहतः; ग्रामात्, ग्रामतः; सर्वस्मात्, सर्वतः; भवतः, भवत्तः; एतस्मात्, अतः(१); यस्मात्, यतः; तस्मात्, ततः; कस्मात्, कुतः; अस्मात्, इतः।

सप्तम्यास्तु। सर्वस्मिन्, सर्वतः; अन्ते, अन्ततः; आदौ, आदितः

नित्यं पर्यभिभ्याम्। परितः, अभितः

न हाकृरुहोः। स्वर्गात् हीयते पर्वतादवरोहति

७३ **त्रल्वा सर्वनाम्नः सप्तम्याः।** सर्वस्मिन्, सर्वत्र, उभयस्मिन्, उभयत्र, एतस्मिन्, अत्र, यस्मिन्, यत्र, तस्मिन्, तत्र, कस्मिन्, कुत्र, क्व।

त्रल् तसिलौ इतरासामपि दृश्येते। स भवान्, ततो भवान्, तत्र भवान्, तं भवन्तं, ततो भवन्तं, तत्र भवन्तम्, तेन भवता, ततो भवता, तत्र भवता, तस्मै भवते, ततो भवते, तत्र भवते, तस्य भवतः, ततो भवतः, तत्र भवतः,

७४ **हः सप्तम्याः किमिदमोः।** अस्मिन्, इह(१), कस्मिन्, कुह(२)

७५ **दा काले एकसर्वान्यकियत्तदां** (एकस्मिन् काले) एकदा, सर्वदा, सदा(१), (वा) अन्यदा, कदा(२), यदा, तदा,

७६ **र्हिल् चान्यकियत्तदिदमेतदाम्** (अन्यस्मिन् काले) अन्यर्हि, कर्हि, यर्हि (अस्मिन् एतस्मिन् वा काले) एतर्हि, वा अधुना(१)

७७ **दानींच तदिदमोः** (तस्मिन् काले) तदानीम् (अस्मिन् काले) इदानीम्

७८ **एद्युस् सर्वादेरहनि** (सर्वस्मिन्नहनि) सर्वेद्युः, अन्येद्युः, अपरेद्युः, इतरेद्युः, अन्यतरेद्युः, अधरेद्युः, उत्तरेद्युः, उभयेद्युः (वा) उभयद्युः,

७९ **थाच् प्रकारे तृतीयायाः** (सर्वैः प्रकारैः) सर्वथा, अन्यथा, इतरथा, यथा, तथा, अपरथा।

(१) एतदादि को यथायोग्य सा आदेश होते हैं (२) हि प्रसक्त युष्मद् भिन्न

८० थं किमिदमेतदां (केनप्रकारेण) कथं[1] (अनेन एतेनवा प्रकारेण) इत्थम्।

८१ अस्तात् पराद्‌ेः सप्तमी पञ्चमी प्रथमानाम् (परस्मिन् परस्मात् परोवा) परस्तात्, पश्चिम स्तात् (अपरस्मिन् अपरस्मात् अपरोवा) पश्चात्[2] (ऊर्द्ध्वे ऊर्द्ध्वात् ऊर्द्ध्वोवा) उपरि, उपरिष्टात्

८२ असिश्च पूर्व्वाधरावराणाम् (पूर्व्वस्मिन् पूर्व्वस्मात् पूर्व्वोवा) पुरस्तात् (वा) पुरः (अधरस्मिन् अधरस्मात् अधरोवा) अधस्तात् (वा) अधः (अवरस्मिन् अवरस्मात् अवरोवा) अवरस्तात्[1], अवरः (वा) अवस्तात्, अवः

८३ अतसु दक्षिणोत्तराभ्याम् (दक्षिणस्मिन् दक्षिणस्मात् दक्षिणोवा) दक्षिणतः, उत्तरतः।

८४ आति रुत्तराधर दक्षिणात् (उत्तरस्मिन् उत्तरस्मात् उत्तरोवा) उत्तरात्, अधरात्, दक्षिणात्।

८५ एनप् चाद्रे पञ्चम्याः (उत्तरस्मिन् उत्तरोवा) उत्तरेण अधरेण, दक्षिणेन।

८६ आदाहौ च दक्षिणोत्तरयोः (दक्षिणस्मिन् दक्षिणोवा) दक्षिणा, दक्षिणाहि उत्तरा, उत्तराहि।

८७ तनप् भवे कालाव्ययेभ्यः (अद्यभवम्) अद्यतनम्, प्रातस्तनम्, सायन्तनम्, अधुनातनम्।

प्राह्णे प्रगेभ्याञ्च। प्राह्णेतनम्, प्रगेतनम्।

पूर्व्वाह्णापराह्णाभ्यां वा (पूर्व्वाह्णे भवम्) पूर्व्वाह्णेतनं, अपराह्णेतनम्, (पक्षे) पौर्व्वाह्णिकम्, आपराह्णिकम्

नित्यमूर्द्ध्वादेः (ऊर्द्ध्वे भवः) ऊर्द्ध्वतनः; उपरितनः, अधस्तनः, प्राक्तनः पूर्व्वतनः।

८८ म नादिमध्याभ्याम् (आदौभवः) आदिमः, मध्यमः

८९ डिमोऽग्रान्तपश्चाद्भ्यः (अग्रेभवः) अग्रिमः अन्तिमः पश्चिमः

(१) प्रयोगानुसार आदेश (२) निपातसे

१० **त्न चिरपरुत्परारिभ्यः।** चिरत्नः, परुत्नः, परारित्नः

११ **त्यप् दक्षिणापश्चात्पुरसः।** दाक्षिणात्यः, पाश्चात्यः, पौरस्त्यः।

१२ **त्यः क्वामेह, तसित्रल्भ्यः।** क्वत्यः, अमात्यः, इहत्यः, (तसिल प्रत्ययान्ताः) ततस्त्यः, यतस्त्यः, कुतस्त्यः, (त्रल्प्रत्ययान्ताः) तत्रत्यः, अत्रत्यः,

१३ **चित् चनौ विभक्त्यन्तात् किमः।** कश्चित्, किञ्चित्, कञ्चित्, केनचित्, कस्मैचित्, कस्माच्चित्, कस्यचित्, कस्मिंश्चित्, कुतश्चित्, क्वचित्, कुत्रचित्, काचित्, (एवं) कश्चन, कुतश्चन, इत्यादि।

१४ **च्वि कृभ्वस्तियोगे भूततद्भावे।**[1] (च्वि समूल इत है, च्वि होनेसे अन्त्यस्वर दीर्घ होता है, अकारको ईकार होता है, ऋकारको री होता है। (अलघुं लघुं करोति) लघूकरोति, (अलघुर्लघुर्भवति) लघूभवति, (अलघुर्लघुः स्यात्) लघूस्यात्। शुक्लीकरोति, भवति, स्याद्वा, (अश्रोतारं श्रोतारं करोति) श्रोत्रीकरोति, श्रोत्रीभवति, स्याद्वा, अहकरोति[2] विमनीभवति, उच्चदूस्यात्, सुचेतीभवति, विरहीस्यात्, विरजीभवति।

१५ **सातिच्कार्त्स्न्ये वा**[3] (कृत्स्नं लवणं जलं करोति) जलसात्करोति, भवति, स्याद्वा, भस्मसात् करोति, भवति स्याद्वा (पक्षे) जलीकरोति, भस्मीभवति।

अभिविधौ संपदा च[4] अग्निसात्करोति, अग्निसाद्भवति, अग्निसात्स्यात्, अग्निसात् सम्पद्यते, (पक्षे) अग्नीभवति, अग्नीसम्पद्यते।

अधीनतायाञ्च (राज्ञोऽधीनं करोति) राजसात्करोति, राजसात् सम्पद्यते, (पक्षे) राजीभवति, राजीसम्पद्यते

(१) अभूततद्भाव अर्थात् जैसा न था वैसा होजाना। (२) अरुस् मनस् चक्षुस् चेतस् रहस् रजस् इनके अन्त्यवर्णका लोप होजाता है। [illegible] न्यथाभावः कार्त्स्न्यम्।
(४) बहूनां जातीनां किञ्चिदवयवावच्छेदेनान्यथाभावोऽभिविधिः।

९६ **त्रा च देये** (ब्राह्मणाय देयं करोति) ब्राह्मणत्राकरोति, ब्राह्मणत्रा सम्पद्यते, (पक्षे) ब्राह्मणसात् करोति, ब्राह्मणसात् सम्पद्यते।

९८ **डाच् कृञा द्वितीयादेः कृषौ।** द्वितीयाकरोति, तृतीयाकरोति (द्वितीयं तृतीयं कर्षणं करोतीत्यर्थः), शम्बाकरोति (अनुलोमकृष्टं क्षेत्रं प्रतिलोमं कर्षतीत्यर्थः) बीजाकरोति (बीजेन सह कर्षतीत्यर्थः)।

संख्यायाश्च गुणान्तायाः। द्विगुणाकरोति, त्रिगुणाकरोति (क्षेत्रं द्विगुणं त्रिगुणं कर्षतीत्यर्थः)।

समयाच्च यापनायाम्। समयाकरोति (कालं यापयतीत्यर्थः)।

सपत्रनिष्पत्रादतिव्यथने। सपत्राकरोति मृगं व्याधः (सपत्रं शरमस्य शरीरे प्रवेशयन् व्यथयतीत्यर्थः) निष्पत्राकरोति (शरीरात् शरम् अपरपार्श्वे निष्क्रामयन् व्यथयतीत्यर्थः)

निष्कुलान्निष्कोषणे। निष्कुलाकरोति दाड़िमम् (दाड़िमस्य अन्तरवयवान् बहिर्निःसारयतीत्यर्थः)

सुखप्रियादानुलोम्ये। सुखाकरोति प्रियाकरोति मित्रम् (अनुकूलाचरणेनानन्दयतीत्यर्थः)

दुःखात्प्रातिलोम्ये। दुःखाकरोति भृत्यः (स्वामिनं पीडयतीत्यर्थः)

शूलात्पाके। शूलाकरोति मांसं (शूलेन पचतीत्यर्थः)

सत्यादशपथे। सत्याकरोति भाण्डं वणिक् (क्रेतव्यमिति प्रतिजानीते इत्यर्थः)

मद्रात्परिवापणे मद्राकरोति (माङ्गल्यं मुण्डनं करोतीत्यर्थः)।

निपातनं(१)

(इक्ष्वाकोरपत्यम्) ऐक्ष्वाकः, (कुरोरपत्यं) कौरव्यः, (मनोरपत्यं) मनुष्यः, मानुषः, (कन्याया अपत्यं) कानीनः, (गोधाया अपत्यम्) गौधेरः, गौधारः, (हेमन्ते भवम्) हैमनम् (श्वो भवं) शौवस्तिकम् (पुनः पुनर्भवं) पौनःपुनिकम् (प्रतीच्यां भवम्) प्रतीच्यम्, उदीच्यम्, तिरश्चीनम्॥ (नवमेव) नूत्नं, नूतनम् (उपायएव) औपायिकः॥ (ह्योगोदोहादुद्भवति) हैयङ्गवीनम् (अद्यश्वोवाद्यतने) अद्यश्वीनं, (पथि कुशलः) पाथ्यः (साक्षाद्दृष्टवान्) साक्षी, (वृद्ध्याजीवति) वार्धुषिकः, (अमुष्मिन् परलोके हितम्) आमुष्मिकम्, अमुष्य (प्रतस्य) पुत्रः) आमुष्यायणः (पुनः पुनरुत्थानं सङ्कटनं वा) पौनःपुन्यम्॥ (उदकमस्मिन्नस्ति) उदन्वान् समुद्रः (राजाऽस्मिन्नस्ति) राजन्वान्, (चर्म्म अस्या मस्ति) चर्म्मण्वती नाम नदी, (अस्थि अस्मिन्नस्ति) अष्ठीवान् जानूरुसन्धिः (चक्रमस्यास्ति) चक्रीवान् नाम राजा (कक्षा अस्यास्ति) कक्षीवान् नाम ऋषिः (लवणमस्मिन्नस्ति) रुमण्वान् नाम पर्व्वतः (ज्योतिरस्या अस्ति) ज्योत्स्ना (तमोऽस्या अस्ति) तमिस्रा (शृङ्गमस्यास्ति) शृङ्गिणः (मलमस्यास्ति) मलिनः, मलीमसः (अर्णांसि अस्मिन् सन्ति) अर्णवः समुद्रः (वाचोऽस्य सन्ति) वाग्मी वाचालः, वाचाटः, (मातुर्भ्राता) मातुलः (पितुर्भ्राता) पितृव्यः, (मातुः पिता) मातामहः, (मातुर्माता) मातामही (पितुः पिता) पितामहः, (पितुर्माता) पितामही (कर्म्मणि कुशलः) कर्म्मठः, (एकाविधा) ऐकध्यम् द्वैधम् त्रैधम्, द्वेधा (पूर्वस्मिन्नहनि) द्युः, (समानेऽहनि) सद्यः (अस्मिन्नहनि) अद्य: (परस्मिन्नहनि) श्वः, परेद्यवि; (अस्मिन् वर्षे) ऐषमः (पूर्वस्मिन् वर्षे) परुत्, (पूर्वतरे वर्षे) परारि इत्यादि।

(१) जो कार्य्य किसी नियम से न हो उसे निपातन से सिद्ध करते हैं।

पुंवद्भावः

१ तसिल त्रल् चरट् जातीय देशीय पाश् कल्प रूप तर और तम् प्रत्यय परे होनेसे भाषित पुंस्क[1] स्त्रीलिङ्ग शब्द को पुंवद्भाव होता है। यथा (उत्तरस्यादिशः) उत्तरतः, (सर्व्वस्यांदिशि) सर्व्वत्र, (अर्पितायाम्नरूप्यां) अर्पितचरी, (जात्याब्राह्मणी) ब्राह्मणजातीया, (ईषदूनापण्डिता) पण्डितकल्पा, (कुत्सितापाचिका) पाचकपाशा (प्रशस्तागायिका) गायकरूपा (इयमनयोरतिशयेननिपुणा) निपुणतरा, (इयमासामतिशयेनचपला) चपलतमा।

२ शस् प्रत्यय परे होनेसे बह्वर्थ और अल्पार्थ भाषितपुंस्क स्त्रीलिङ्ग को पुंवद्भाव होताहै, यथा (बह्वीभ्योदेहि) बहुशोदेहि, (अल्पाभ्योदेहि) अल्पशोदेहि।

३ त्व और तल् प्रत्यय परे होनेसे गुणवाचक भाषितपुंस्क स्त्रीलिङ्ग को पुंवद्भाव होता है। यथा; (निपुणायाभावः) निपुणत्वं, निपुणता, इत्यादि।

४ कल्प रूप तर तम प्रत्यय परे होनेसे भाषित पुंस्क ईवन्त ऊवन्त स्त्रीलिङ्ग को विकल्प करके पुंवद्भाव होताहै, यथा; विदुषीकल्पा (वा) विद्वत्कल्पा। मेधाविनीरूपा (वा) मेधाविरूपा। मायाविनीतरा (वा) मायावितरा। मनोहारिणीतमा (वा) मनोहारितमा। वामोरूकल्पा (वा) वामोरुकल्पा इत्यादि[2]।

इतितद्धितप्रकरणम्।

(१) भाषित पुंस्क उस शब्द को कहते हैं जो स्त्रीलिङ्ग और पुंलिङ्ग दोनो होते हैं।

(२) वैयाकरण लोग ऊवन्त का पुंवद्भावनिषेध करके अप्रका विकल्प करके ह्रस्व विधान करते हैं पुंवद्भाव के अभाव पक्षमें ईप्रकाभी कहीं नित्य और कहीं विकल्प ह्रस्वविधान किया करते हैं। यथा; विदुषिकल्पा विदुषीकल्पा विद्वत्कल्पा, मायाविकल्पा, [illegible]

स्त्रीप्रत्यय

१। आप्, ईप्, ऊप् प्रत्यय जिन शब्दोंके अन्तमे लगते हैं वे स्त्रीलिङ्ग होते हैं।

आप्

२। अकारान्त नाम के उत्तर आप् लगता है (प् इत है)। यथा, कृशा, दीना, मलिना, कृपणा, क्रूरा, सरला। पाचिका[1], पालिका, नायिका।

ईप्

३। गौर प्रभृति अकारान्त शब्दों के उत्तर ईप् लगता है, (प् इत है); ईप् होनेसे शब्द के अन्त्य अ का लोप होजाता है। यथा; गौरी, कुमारी, किशोरी इत्यादि।

४। जाति का बोध होने से जातिवाची अकारान्त शब्दों के उत्तर ईप् लगता है। यथा, सिंही, वृषली, गोपी, इत्यादि।

५। परन्तु जातिवाची अजादि शब्दों के उत्तर ईप् नहि लगता। यथा, अजा, कोकिला, शूद्रा[2] प्रभृति।

६। तथा जिन जाति वाची शब्दों की उपधामे य् हो उन्के उत्तर भी ईप् नहि लगता। यथा, वैश्या; पर गवयी, हयी, मुकयी, मत्सी[3], मनुषी मे ईप् लगता है।

७। ऋकारान्त शब्दों के उत्तर ईप् लगता है। यथा, दात्री, धात्री, कर्त्री इत्यादि; परन्तु स्वसृ प्रभृति शब्दों से ईप् नहि होता। यथा, स्वसा, माता, दुहिता, याता, ननान्दा, तिस्रः, चतस्रः।

८। नकारान्त शब्दोंके उत्तर ईप् लगता है। यथा, कामिनी,

---

(१) आप् होनेसे उस्के पूर्व अक् प्रत्यय के अ को इ होता है; पर अष्टका, अधित्यका, उपत्यका के अ को इ नहि होता। (२) पर महत् शब्द पूर्व होने से "महाशूद्री" वनता है। (३) ईप् होनेसे मत्स्य और मनुष्य शब्दोंके य् का लोप होता है।

यामिनी, अनुगामिनी, उपकारिणी इत्यादि। राज्ञी[1]। (युवन्) युवती[2], यूनी, युवतिः; (श्वन्) शुनी, (मघवन्) मघोनी, मघवती।

९। परन्तु संख्यावाची नान्त शब्दोंके उत्तर ईप् नहि लगता। यथा, पञ्च, सप्त, अष्ट, नव, दश।

१०। नान्त शब्दोंमे मनन्त के उत्तर भी ईप् नहि लगता। यथा, सीमा, पामा, सुदामा, अतिमहिमा।

११। बहुब्रीहि[3]-समास होनेसे अनन्त के उत्तर ईप् नहि होता। यथा, (बहूनि सन्त्यस्याः पर्व्वाणि) बहुपर्व्वा बेण-यष्टिः।

१२। बहुब्रीहि समास होनेसे अनन्तके उत्तर विकल्प करके डाप् होता है। यथा, बहुपर्व्वा, बहुपर्व्वे, बहुपर्व्वाः; (पक्षे) बहुपर्व्वा, बहुपर्व्वाणौ, बहुपर्व्वाणः।

१३। जिन अनन्त शब्दोंकी उपधाका लोप हो सकता है बहुब्रीहि समास होनेसे उनके उत्तर विकल्प करके डाप् और ईप् होता है। यथा; (बहवः सन्त्यस्य राजानः) बहुराजा, बहुराजे, बहुराजाः; बहुराज्ञी, बहुराज्ञौ, बहुराज्यः; (पक्षे) बहुराजा, बहुराजानौ, बहुराजानः।

१४। उकारेत् और ऋकारेत् प्रत्यय निष्पन्न शब्दों के उत्तर ईप् लगता है। यथा; उकारेत् – भवती, यावती, बुद्धिमती, धनवती, श्रेयसी; ऋकारेत् – सती, हदती, कुर्व्वती, ददती इत्यादि।

१५। ईप् होनेसे भ्वादि और दिवादि गणीय धातुओं के उत्तर विहित शतृ प्रत्ययके न्के पूर्व्व न् आता है। यथा;

---

(१) न् के पूर्व्व अ होने से उस अ का लोप होता है, पर वह अ यदि म् अथवा व् संयुक्त वर्ण मे मिला हो तो उसका लोप नहि होता। (२) युवती प्रभृति शब्द निपात से सिद्ध होते हैं। (३) समासों का वर्णन आगे होगा।

भ्वादि – भवन्ती, धावन्ती, गच्छन्ती, कारयन्ती, चिकीर्षन्ती,
दिवादि – दीव्यन्ती, नश्यन्ती, रज्यन्ती, जीर्यन्ती, कुप्यन्ती,
इत्यादि।

१६। तथा तुदादिगणीय से विकल्प करके। यथा, तुदन्ती (पक्षे) तुदती; इच्छन्ती, इच्छती; पृच्छन्ती, पृच्छती; सिञ्चन्ती, सिञ्चती, ।

१७। तथा अदादिगणीय आकारान्त से विकल्प करके। यथा, यान्ती, याती; मान्ती, माती; भान्ती, भाती; स्नान्ती, स्नाती;

१८। तथा स्यतृ प्रत्यय के तृ के पूर्व विकल्प करके न आता है। यथा; भविष्यन्ती, भविष्यती; करिष्यन्ती करिष्यती, ।

१९। टकारेत् और षकारेत् प्रत्यय निष्पन्न शब्दों के उत्तर ईप् लगता है। यथा; टकारेत् प्रत्यय निष्पन्न गायती; कर्म्मकरी, निशाचरी; सुरापी; प्रियङ्करणी, चतुर्थी, पञ्चमी, इत्यादि; द्वयी, त्रयी, चतुष्टयी, द्वयामयी; । षकारेत् प्रत्ययनिष्पन्न-नर्त्तकी, रजकी, मानवी, ईदृशी इत्यादि।

२०। ईप् होनेसे हल् वर्ण के अव्यवहित परवर्त्ती ष्यण प्रत्यय का लोप होता है। यथा, (गार्ग्य) गार्गी, (वात्स्य) वात्सी, (पौलस्त्य) पौलस्ती इत्यादि।

२१। प्राच् प्रभृति शब्दों के उत्तर ईप् लग ताहै। यथा; प्राची, अवाची, प्रत्यन्ची, उदन्ची, तिर्य्यन्ची, प्रतीची, उदीची, तिरश्ची।

२२। जाया अर्थमे जातिवाची अकारान्त शब्दों के उत्तर ईप् होता है। यथा; (ब्राह्मणस्यजाया) ब्राह्मणी,

(१) प्रत्यच्, उदच्, और तिर्य्यच् शब्दों के ये रूप निपातन से सिद्ध होते हैं।

(शूद्रस्यजाया) शूद्री, गोपी, गणकी, नापिती, निषादी। पशुपालकान्त शब्दसे ईप् नहि होता। यथा, (गोपालकस्य जाया) गोपालिका, पशुपालिका–

२३। शोण प्रभृति शब्दोंके उत्तर विकल्प करके ईप् लगता है। यथा; शोणी, शोणा; चण्डी, चण्डा; इत्यादि।

२४। बहुव्रीहि समास होनेसे अवयव वाचक शब्दोंके उत्तर विकल्पकरके ईप् होता है। यथा; चन्द्रमुखी, चन्द्रमुखा; सुकेशी, सुकेशा; इत्यादि।

२५। परन्तु क्रोड़ प्रभृति के उत्तर नहि। यथा; सुक्रोड़ा, नीलखुरा, चारुशिखा, दीर्घशफा।

२६। जिन अवयव वाचक शब्दोंकी उपधामे संयुक्त वर्ण हो उनके उत्तर ईप् नहि होता। यथा; मृगनेत्रा, चारुगुल्फा; परन्तु अङ्ग प्रभृति के उत्तर होता है। यथा; कृशाङ्गी, कृशाङ्गा, मृदुगात्री, मृदुगात्रा इत्यादि।

२७। जिन अवयव वाचक शब्दोंमे दोसे अधिक स्वर हों उनके उत्तर ईप् नहि लगता। यथा; मृगनयना, चन्द्रवदना। पर नासिका और उदर के उत्तर लगता है। यथा; तुङ्गनासिकी, तुङ्गनासिका, कृशोदरी, कृशोदरा।

२८। सह, नञ्, विद्यमान पूर्व्व होने से अवयव वाचक के उत्तर ईप् नहि होता। यथा; सकेशा, अकेशा, विद्यमानकेशा।

२९। बहुव्रीहि समास होनेसे ऊधस् शब्दके उत्तर नित्य ईप् और टिके स्थानमे न् होता है। यथा, (पीनमस्या ऊधः) पीनोध्नी, (घटवदस्या ऊधः) घटोध्नी इत्यादि।

३०। बहुव्रीहि समास होनेसे और संख्यावाचक शब्द पूर्व्व होने से दामन्, हायन के उत्तर ईप् लगता है। यथा; (द्वे अस्या दाम्नी) द्विदाम्नी (द्वावस्या हायनौ) द्विहायनी।

(१) हायन शब्द वयोवाचक न होनेसे ईप् और णत्व नहि होता। यथा, द्विहायनाशाला।

३१। इकारान्त शब्दोंके उत्तर विकल्प करके ईप लगता है। यथा, श्रेणी, श्रेणिः; राजी, राजिः; आली, आलिः; करी, करिः; रात्री, रात्रिः; रजनी, रजनिः; इत्यादि। पर सखी शब्दको नित्य ईप् होता है। सखी।

३२। क्ति प्रत्यय निष्पन्न इकारान्त शब्दोंके उत्तर ईप नहि होता। यथा, गतिः, स्थितिः, बुद्धिः इत्यादि। पर (अस्त्रार्थ) शक्ति, और पद्धतिशब्द के उत्तर विकल्प करके। यथा, शक्ती, शक्तिः पद्धती, पद्धतिः।

३३। बहुव्रीहि समास होनेसे पद के उत्तर ईप लगता है। यथा, (द्वावस्याः पदौ) द्विपदी, त्रिपदी, चतुष्पदी, बहुपदी, शतपदी।

३४। तथा दन्त के उत्तर ईप होता है। यथा, सुदन्ती, चारुदन्ती, इत्यादि।

३५। पत्नी अर्थमे पाणिगृहीत शब्दके उत्तर ईप लगता है। यथा, (पाणिर्गृहीतोऽस्याः) पाणिगृहीती पत्नी (अन्यत्र) पाणिगृहीता नारी।

३६। गुण वाचक उकारान्त शब्दोंके उत्तर विकल्प करके ईप लगता है। यथा, मृद्वी, मृदुः; साध्वी, साधुः; इत्यादि पर खरु शब्द को ईप नहि होता, और उपधा मे संयुक्त वर्ण होनेसे भी नहि होता, यथा पाण्डुः। बहुके उत्तर विकल्प करके। बह्वी, बहुः। अशिश्वी, अनड्ही अनड्वाही, ये तीन शब्द नित्य ऐसेहि रहते हैं।

३७। यज्ञ फल भागित्व अर्थमे पति के इ के स्थान मे नीप होता है। यथा, वशिष्ठस्य पत्नी (वशिष्ठानुष्ठितयज्ञफलभोक्त्रीत्यर्थः)। ग्रामस्य पतिरियम् (यहां पति शब्दका अर्थ अधिकारिणी है यज्ञ फल भोक्त्री नहि इसलिये नीप् नहि हुआ)।

३८। सपत्नी प्रभृति शब्द निपातन से सिद्ध होते हैं। यथा; (समानः पतिरस्याः) सपत्नी (एकः पतिरस्याः) एकपत्नी साध्वी, वीरपत्नी, वृद्धपत्नी, भद्रपत्नी, पञ्चपत्नी द्रौपदी (पतिरस्त्यस्याः) पतिवत्नी जीवद्भर्तृका, (अन्तरस्त्यस्याः) अन्तर्वत्नी गर्भिणी।

३९। जाया अर्थ मे भव प्रभृति शब्दों के उत्तर आनीप् होता है। यथा (भवस्य जाया) भवानी, सर्व्वाणी, रुद्राणी, मृडानी, इन्द्राणी, वरुणानी, ब्रह्माणी,[1] मातुलानी,[2] क्षत्रियाणी,[3] अर्य्याणी, उपाध्यायानी, आचार्य्यानी[4]।

४०। अर्थविशेष मे हिमादि शब्दों से आनीप् होता है। यथा; (महत् हिमम्) हिमानी, (महद् अरण्यम्) अरण्यानी, (दुष्टो यवः) यवानी, (यवनानां लिपि) यवनानी।

ऊप्

४१। उकारान्त शब्दों के उत्तर ऊप् होता है। यथा; कुरूः, कद्रूः, पङ्गूः, अलाबूः, कर्कन्धूः, ब्रह्मबन्धूः,।

४२। परन्तु रज्जु प्रभृति के उत्तर ऊप् नहि होता। यथा, रज्जुः, धेनुः, आखुः, हनुः, कमण्डलुः, कृकवाकुः, हनबन्धुः, अध्वर्य्युः,।

४३। तनु प्रभृति के उत्तर विकल्प करके। यथा; तनुः, तनूः चञ्चूः; चञ्चुः, श्वश्रूः[5]।

४४। उपमा अर्थ मे ऊरु शब्द के उत्तर ऊप् होता है। यथा; (रम्भे इवास्या ऊरू) रम्भोरूः, करभोरूः, करिकरोरूः,

४५। वाम प्रभृति शब्दों के उत्तर ऊरु होने से उसमे ऊप् लगता है। यथा; वामोरूः, संहितोरूः, सहोरूः, संहितोरूः लक्षणोरूः, शफोरूः।

(१) आनीप् होने से ब्रह्मण शब्द के न् का लोप होजाता है। (२) "मातुली" इस प्रकार रूप भी होता है। (३) क्षत्रिय प्रभृति शब्दों से ईप् विकल्प करके होता है। यथा; क्षत्रिया, अर्य्या, उपाध्याया, आचार्य्या। (४) इस शब्द मे न् को ण् नहि होता। (५) यह निपातन से सिद्ध होता है।

अथ समास प्रकरणं।

१ दोया बहुत पदोंका एक पद होजाना समास कहलाताहै।
२ समास के अन्तर्गत पदों की विभक्तियें लोप होजाती हैं।
३ समास होनेसे पूर्व्वपदका अन्त्य नकार लोप होजाता है।
४ स्वर परे होनेसे परपदका नथा
५ नथा इवर्ण और अवर्णका लोप होताहै।
६ हल् परे होनेसे नञ् का नकार लोप होता है।
७ स्वर परे होनेसे नञ् के स्थानमे अन् होता है।
८ उकारेत् प्रत्यय परे होनेसे टि का लोप होता है।
९ जहां अन्य पदार्थ की प्रतीति हो वहां अन्त गोशब्द और स्त्री प्रत्यय ह्रस्व होजाते हैं।
१० समास होनेसे जो कई पदोंका एक पद होजाता है उसके उपर नयी विभक्तियें होती है।
११ जहां अन्य पदार्थकी प्रतीति हो वहां समस्त पद विशेष्य लिङ्ग होता है।
१२ समाहार समास होनेसे समस्त पद नपुंसकलिङ्ग और एकवचनान्त होता है।
१३ समासमे स्त्रीलिङ्ग सर्व्वनामको पुंवद्भाव होताहै (अर्थात उसका पुलिङ्ग केन्याई रूप होता है)
१४ विशेष्य शब्द परे होनेसे महत् शब्द के स्थानमे महा होता है।
१५ समासमे विंशति शब्दके ति कालोप होता है।

अव्ययीभाव समास

१ अव्ययीभाव समास मे पूर्व्व पद प्रधान होताहै।
२ अव्ययीभाव समास होनेसे समस्तपद नपुंसकलिङ्ग

होता है।

३ अकारान्त अव्ययीभाव की परवर्त्ती विभक्ति के स्थानमे म होता है। पञ्चमीके स्थानमे नहिं होता। तृतीया और सप्तमी के स्थानमे विकल्पकरके होता है।

४ अकारान्त भिन्न अव्ययीभावकी परवर्त्ती विभक्तिका लोप होता है।

५ समीप प्रभृति अर्थोमे सुबन्त पदके साथ अव्यय का समास होता है। यथा; (गृहस्य समीपम्) उपगृहम् (विघ्नस्याभावः) निर्विघ्नम्, (हिमस्यात्ययः) अतिहिमम् (निद्रासम्प्रति न युज्यते) अतिनिद्रम्, (रथस्यपश्चात्) अनुरथम्, (रूपस्ययोग्यम्) अनुरूपम्, (दिनेंदिनेंप्रति) प्रतिदिनम् (शक्तिमनतिक्रम्य) यथाशक्ति, (ज्येष्ठस्यानुपूर्व्वेण) अनुज्येष्ठम्, (हरौ) अधिहरि, (गृहे) अधिगृहम्, (हरेः सदृशं) सहरि, (चक्रेण युगपत्) सचक्रम्, (तृणमप्यपरित्यज्य) सतृणम्, (मद्राणां समृद्धिः) सुमद्रम्, (अग्निग्रन्थ पर्य्यन्तमधीते) साग्नि इत्यादि।

६ अवधारण अर्थमे सुबन्तके साथ यावत् शब्द का समास होताहै, यथा; यावदमत्रं ब्राह्मणानामन्त्रयस्व (यावन्त्यमत्राणी सम्भवति पञ्च षड्‌वा तावत् ब्राह्मणानामन्त्रयस्वेत्यर्थः)

७ पञ्चम्यन्तपदके साथ वहिस् प्रभृति शब्दोंका विकल्पकरके समास होताहै। यथा, वहिर्ग्रामं, ग्रामाद्वहिः प्राग्वनं, उपवनात् प्राक्।

८ मर्य्यादा और अभिविधि अर्थमे सुबन्तके साथ आङ् अव्ययका विकल्प करके समास होता है। यथा; आपाटलिपुत्रम् आपाटलि पुत्राद्वृष्टो देवः। आकुमारं

(१) अव्ययीभाव समासमे सह शब्दको स होताहै। परन्तु काल अर्थमे नहिं। यथा सहापराह्णम्। (२) तेन विना मर्य्यादा, तेन सहितोऽभिविधिः।

आकुमारेभ्यो यशःकालिदासस्य।

९ आभिमुख्य अर्थमे लक्ष्यवाचक सुबन्त के साथ अभि प्रति इन दोनो अव्ययों का विकल्प करके समास होताहै। यथा, अभ्यग्नि, अग्निमभि शलभाः पतन्ति। प्रत्यग्नि, अग्निं प्रति।

१० जिसका दैर्घ्य समझाजाय तिसके साथ अनु अव्यय का विकल्प करके समास होताहै। यथा, अनुगङ्गं, गङ्गाया अनु वाराणसी।

११ षष्ठ्यन्त पदके साथ पार और मध्य शब्दका विकल्प करके अव्ययीभाव समास होताहै। यथा, समुद्रस्य पारं, पारे[1] समुद्रं, गङ्गाया मध्यं मध्ये[1] गङ्गम् (पक्षे षष्ठी समास)

१२ समाहार अर्थमे नदीवाचक सुबन्त पदके साथ संख्यावाचक का अव्ययीभाव समास होताहै। यथा, (तिसृणां गङ्गानां समाहारः) त्रिगङ्गम्, पञ्चनदम्, सप्तगोदावरम्।

१३ अव्ययीभाव समासमे तिष्ठद्गु प्रभृति शब्द निपातसे सिद्ध होते हैं। यथा, (तिष्ठन्ति गावो यस्मिन्काले दोहनाय) तिष्ठद्गु, आयती गवम्, अनुगवम् इत्यादि।

१४ अव्ययीभाव समासमे शरद्[2] प्रभृति शब्दोंके उत्तर अत् होताहै। यथा, उपशरदम्, प्रतिदिशम्, आहिमवतम्, उपजरसम्[3], प्रत्युरसम् इत्यादि।

१५ प्रति, पर, सम्, अनु के परवर्ती अक्षि शब्द के उत्तर अत् होताहै। यथा, प्रत्यक्षम्, परोक्षम् समक्षम् अन्वक्षम्

१६ अन् भागान्त शब्दके उत्तर भी अत् होताहै। यथा, उपराजम्, अध्यात्मम्, प्रत्यध्वम्॥ परन्तु नपुंसक अन् भा

(१) एकारागम निपातसे हुआ। (२) शरद्, विपाश्, अनस्, मनस्, उपानह्, दिव्, हिमवत्, [illegible], सद्, दिश्, दृश्, विश्, चतुर्, त्यद्, तद्, यद् कियत्, जरा। (३) अत् होनेसे जरा को जरस् होताहै।

गान्तके उत्तर विकल्प करके। यथा, उपचर्म्मम् उपचर्म्म।

१७ गिरि, नदी, पौर्णमासी, और आग्रहायणीके उत्तर विकल्प करके अत् होता है। यथा, उपगिरम्, उपगिरि इत्यादि।

१८ पञ्चमभिन्न स्पर्शवर्णान्तके उत्तर विकल्प करके अत् होता है। यथा, उपदृषदम्, उपदृषत्, अनुसमिधम्, अनुसमित्।

तत्पुरुषसमास

१ तत्पुरुष समास मे परपदकी प्राधान्यता होती है इसी लिये समस्तभाग परपदके लिङ्गको प्राप्त होता है।[१]

साधारणकार्य्य

२ द्वितीयान्तके सहित समास, यथा। (कष्टं श्रितः) कष्टश्रितः (अन्नं बुभुक्षुः) अन्नबुभुक्षुः। (मुहूर्त्तं सुखं) मुहूर्त्तसुखं (मासं गम्यः) मासगम्यः। (खट्वां आरूढः) खट्वारूढः इत्यादिः

३ तृतीयान्तके सहित समास, यथा। (मासेन पूर्व्वः) मासपूर्व्वः (वाचाकलहः) वाक्कलहः (मात्रा सदृशी) मातृसदृशी। (एकेन ऊनः) एकोनः (गर्व्वेण शून्यः) गर्व्वशून्यः। (व्याघ्रेण हतः) व्याघ्रहतः (शिरसा धार्य्यं) शिरोधार्य्यम् (शीतेन ऋतः) = शीतार्त्तः[२]।

४ चतुर्थ्यन्तके सहित समास, यथा। (भूताय बलिः) भूतबलिः। द्विजार्थः सूपः, द्विजार्था यवागूः द्विजार्थं पयः[३]। (कुण्डलाय हिरण्यं) कुण्डलहिरण्यम् इत्यादि।

---

(१) तत्पुरुष मे अन्तस्थित रात्र, अह्न, और अह शब्द पुंलिङ्ग होते हैं; संख्यावाचक से परे रात्र नपुंसक होता है। और पुण्य शब्दसे परे अह भी नपुंसक होता है। छाया प्रभृति शब्द विकल्प करके नपुंसक होते हैं यथा तरुच्छायं तरुच्छाया गोशालम् गोशाला। एवं पदार्थ की बाहुल्यता मे छाया शब्द नित्य नपुंसक होता है यथा (इक्षूणां छाया) इक्षुच्छायम् शरच्छायम्। सभाशब्द भी कहीं नपुंसक होता है यथा प्रभुसभम् ईश्वरसभम् राजःसभम् पिशाचसभम् स्त्रीसभम् शिशुसभम्। अण्डप्रभृति परे होनेसे कुक्कुटी प्रभृतिको पुंवद्भाव होता है यथा (कुक्कुट्या अण्डं) कुक्कुटाण्डम् हंसीक्षीरम्। (२) तृतीया समास्य अवर्णसे पीछे ऋत शब्द होनेसे अ+ऋको आर् होता है।

(३) अर्थोक्त समास विशेष्यके लिङ्गको प्राप्त होते हैं।

५ पञ्चम्यन्त के सहित समास, यथा। (व्याघ्राद्भयम्) व्याघ्रभयम् (गृहान्निर्गतः) गृहनिर्गतः (रथात्पतितः) रथपतितः इत्यादि।

६ षष्ठ्यन्त के सहित समास, यथा। (गङ्गाया जलम्) गङ्गाजलम् (सुखस्य भोगः) सुखभोगः इत्यादि[1]।

७ सप्तम्यन्त के सहित यथा। (दाने शौण्डः) दानशौण्डः (रणे पण्डितः) रणपण्डितः (मासे देयं, मासदेयमृणम् (पूर्वाह्णे कृतं) पूर्वाह्णकृतम् (तीर्थे काक इव) तीर्थकाकः।

विशेषकार्य

८ प्रथमान्त के सहित षष्ठ्यन्त का समास। यथा (मासो जातस्य) मासजातः (अर्द्धं पिप्पल्याः) अर्द्धपिप्पली। (पूर्वं कायस्य) पूर्वकायः (पूर्वमह्नः) पूर्वाह्णः, सायाह्नः (मध्यं रात्रेः) मध्यरात्रः (द्वितीयं भिक्षायाः) द्वितीयभिक्षा, तृतीयभिक्षा, चतुर्थभिक्षा, तुर्यभिक्षा। इत्यादि।

९ तथा पञ्चम्यन्त का समास। यथा (निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः) निष्कौशाम्बिः (उत्थितो निद्रायाः) उन्निद्रः[2] इत्यादि।

१० प्रथमान्त के सहित चतुर्थ्यन्त का समास। यथा (परिग्लानोऽध्ययनाय) पर्यध्ययनः, परिसेवः (अलं जीविकायै) अलंजीविकः इत्यादि।

११ तथा तृतीयान्त का समास। यथा (अवक्रुष्टः कोकिलया) अवकोकिलः इत्यादि।

१२ तथा द्वितीयान्त का समास। यथा (अतिक्रान्तः खट्वाम्) अतिखट्वः (उत्क्रान्तो वेलाम्) उद्वेलः इत्यादि।

१३ अव्यय के सहित सुबन्त पद का समास। यथा ईषत्कडारः

---

(१) निर्द्धारण अर्थ में विहित षष्ठी के साथ समास नहिं होता। यथा मनुष्याणां क्षत्रियः। पूरण गुण सुहितार्थ वाचक, तृप्त्यर्थक, सत् और शतृ, शानच् प्रत्ययान्त के साथ। यथा छात्राणां पञ्चमः; काकस्य नीलिमा; फलानां तृप्तः; जगतः स्रष्टा, ब्राह्मणस्य दाता। (२) शङ्कु को अच्छ और एकि के उत्तर अन् हुआ। (३) स्त्रीलिङ्ग पद को पुंवद्भाव हुआ।

आसन्नधुरः, अति दयालुः उच्चकुलम्, उच्चपुरुषः, कुसंस्कारः।

१४ नञ् के सहित सुबन्त पदका समास। यथा (नप्रियः) अप्रियः (नसत्वं) असत्वं (न उपलम्भः) अनुपलम्भः।

१५ उपपदके[1] सहित धातुका समास। (यथा) कुम्भकारः, प्रभाकरः, जलचरः, अण्डजः, अग्रसरः (उपसर्गान्त) संस्कारः, विजयः, अभिषेकः। (ऊरीकरोति) ऊरीकरणम्, ऊरीकृत्य, आविष्क्रिया (च्वि) (स्वीकरोति) स्वीकारः, भस्मीभावः (डाच्) (समयाकरोति) समयाकरणम्, दुःखाकृत्य। (खात्करोति) खात्करणम्, सत्कारः। (अलङ्करोति) अलङ्करणम्, अन्तर्भावः, पुरस्कारः, अस्तङ्गतः, अच्छोद्य, अच्छगत्य, तिरोभावः, साक्षात्कृत्य (वा साक्षात्कृत्य) (सम्बन्धेनवा) उरसिकृत्य, उरसिकृत्वा वा, मध्येकृत्य, मध्येकृत्वावा, हस्तेकृत्य, पाणौकृत्य (दारकर्म कृत्वेत्यर्थः)। स्वामिकृतम्, स्वयन्कृतम् इत्यादि।

कर्म्मधारयसमास

१ जिस तत्पुरुष समास मे समस्यमान पद सब समानाधिकरण अर्थात् विशेष्य विशेषण भावापन्न हों अथवा अभेद सम्बन्धमे एकार्थ प्रतिपादक हों उसको कर्म्मधारय कहतेहैं।

२ विशेषण पदके सहित विशेष्यका समास। यथा (नीलमुत्पलं) नीलोत्पलम्, (केवलो वैयाकरणः) केवलवैयाकरणः, नवग्रहाः (महती नवमी) महानवमी[2], इत्यादि।

३ अभेदसम्बन्धमे एकार्थ प्रतिपादक पदोंकासमास। यथा (कृतञ्चतदकृतञ्च) कृताकृतम् (नीलश्च स लोहितश्च)

---

[1] जिन सुबन्त प्रकृति के परवर्त्ती धातुके उत्तर कृत्य प्रत्यय विहित होते है उसको उपपद कहतेहैं। कुम्भकार, यहां कुम्भम् इस उपपदके साथ कृधातुका समास होकर कुम्भ कृ इसके कार रूप होनेसे अण् प्रत्यय होताहै। इसीप्रकार सर्वत्र। [2] कर्म्मधारय समासमे भाषितपुंस्क स्त्रीलिङ्ग पूर्व्व पदका पुंवद्भाव होताहै। परन्तु ऊङ् प्रत्ययान्तका नहिं होता यथा वामोरूभार्य्या।

नीललोहितः (पूर्व्वं स्नातः पश्चादनुलिप्तः) स्नातानुलिप्तः, भुक्तोज्झीर्णम्।

४ उपमान और उपमेय के समान धर्म्मवाचक पदके साथ उपमानवाचक पदका समास होता है। यथा (घन इव श्यामः) घनश्यामः (नवनीतमिव कोमलं) नवनीतकोमलम्।

५ व्याघ्रादि उपमानवाचक सुबन्त पदके साथ उपमेय पदका समास होताहै। यथा (पुरुषो व्याघ्र इव) पुरुष व्याघ्रः (राजाचन्द्र इव) राजचन्द्रः इत्यादि।

६ अभूत तद्भाव अर्थमे श्रेणी प्रभृति पदका कृतप्रभृति सुबन्त पद के साथ समास होता है। यथा (अश्रेणयः श्रेणयः कृताः) श्रेणीकृताः।(अनिपुणा निपुणाःकृताः) निपुणकृताः

द्विगुसमास

१ जिसकर्म्मधारय के पूर्व्व पदमे संख्यावाचकशब्द हो उसे द्विगु कहते हैं।

२ तद्धितार्थमे, उत्तर पद परे होनेसे, और समाहार अर्थमे, द्विगु समास होताहै। यथा (तद्धितार्थे) (पञ्चभिर्गोभिः क्रीतः) पञ्चगुः (उत्तर पद परे) (पञ्चहस्ताःप्रमाणमस्य) पञ्चहस्त प्रमाणः

३ समाहारद्विगु होनेसे अकारान्त शब्दके उत्तर ईप् होता[1] है। यथा (त्रयाणांलोकानां समाहारः) त्रिलोकी, चतुष्पदी, पञ्चवटी।

टप्रत्यय

१ तत्पुरुष समासमे कई एक शब्दोंके उत्तर ट होताहै। (ट इत जाताहै) यथा (अङ्गानांराजा) अङ्गराजः, पा-

(१) भुवन प्रभृति शब्दोंके उत्तर ईप नहि होता। यथा त्रिभुवनम्, चतुर्युगम्, पञ्चपात्रम्।

मादृ; राजसखः, पञ्चगवम्, अक्षोरसम्, उपानसम्, अम-नासम्, कालायसम्, मण्डूकसरसम्, ग्रामतक्षः, कौट-तक्षः, अतिश्वः, आकर्षश्वः, उत्तरसक्थम्, मृगसक्थम्, पूर्व्वसक्थम्, फलकसक्थम्, द्विनावम् इत्यादि।

निपातनम्

२ तत्पुरुषसमासमे कई एक शब्द निपातन से भी सिद्ध हो-ते हैं। यथा मयूरव्यंसकः, अश्नीतपिबता, पचतभृज्जता, निश्रेयसम् पुरुषायुषम् इत्यादि।

बहुव्रीहिसमास

१ अनेक प्रथमान्त पद अन्य पदार्थमे रहनेसे बहुव्रीहि समास होता है। यथा (आरूढोवानरोयम्) आरूढ-वानरो (वृक्षः), (कृतंकर्म्मयेन) कृतकर्म्मा (पुरुषः) (दत्तंधनंयस्मै) दत्तधनो, (दरिद्रः) उद्धृतमुदकं यस्मा त) उद्धृतोदकः (कूपः), (दीर्घौबाहूयस्य) दीर्घबाहुः (पुरुषः), (प्रफुल्लानि कमलानि यस्मिन्) प्रफुल्लकम-[1] लं (सरः), (दक्षिणस्याः पूर्व्वस्याश्चदिशोरन्तरालं) दक्षिणपूर्व्वा, (पुत्रेणसह) सपुत्रः, (वा) सहपुत्रः[2] (केशेषु केशेषु गृहीत्वेदं युद्धंप्रवृत्तं) केशाकेशि[3] (दण्डैश्च दण्डैश्च प्रहृत्येदं युद्धंप्रवृत्तं) दण्डादण्डि,[3] बाहूबाहवि, (दशानां समीपेयेते) उपदशाः,[4] (विंशते-रासन्नाः) आसन्नविंशाः, (त्रिंशतोःदूरे) अदूरत्रिंशाः (द्वौवात्रयोवा) द्वित्राः, (पञ्चवाषड्वा) पञ्चषाः

(१) बहुव्रीहि समासमे अन्य पदार्थ का लिङ्ग होता है। (२) तृतीयान्त पद के साथ सहशब्दका बहुव्रीहि समास होता है। और सहको विकल्पकरके स आदेश होता है।
(३) रण अर्ति हारमे समास होनेसे पूर्व्व पद का अन्त्यस्वर दीर्घ हो जाता है, और परपद के उत्तर इच् होता है, इच् होनेमे अन्त्य उवर्ण को गुण होता है। (४) संख्यावाचक शब्दके उत्तर डच् होता है परन्तु बहुशब्दके उत्तर नहीं, उद्दत्त

२ बहुब्रीहि समास मे स्त्रीलिंगशब्द परे होनेसे भाषितपुंस्क स्त्रीलिङ्गशब्दको पुंवद्भाव होताहै। यथा, (स्थिरा बुद्धिरस्य) स्थिरबुद्धिः, (महती मतिरस्य) महामतिः, (शीता गौरस्य) शीतगुः।

३ बहुब्रीहि समास मे कई एकशब्दोंके उत्तर अच्, ष, असिच्, अन्, इ, कप्, होतेहैं। यथा (अच्) (कल्याणी पञ्चमी यासां रात्रीणां ताः) कल्याणी पञ्चमा रात्रयः (स्त्री प्रमाणी येषां ते) स्त्रीप्रमाणाः कुटुम्बिनः। (अविद्यमानानि चत्वार्यस्य) अचतुरः, सुचतुरः, विचतुरः, उपचतुरः। सुगनेत्राः रात्रयः। पद्मनाभः। अन्तर्लोमः, असक्थः (वा) असक्थिः॥ (ष) यथा। पञ्चाङ्गुलंदारु। दीर्घसक्थः पुरुषः, विशालाक्षी देवी, द्विमूर्द्धः, त्रिमूर्द्धः, (असिच्) यथा; अप्रजाः, दुष्प्रजाः, सुप्रजाः, अमेधाः, दुर्मेधाः, सुमेधाः, मन्दमेधाः, अल्पमेधाः, (अन्) सुधर्मा (दक्षिणे ईर्मं व्रणं यस्य) दक्षिणेर्मामृगः (इ) घृतगन्धिभोजनम्, पद्मगन्धि (कप्) (भाषितः पुमानेन) भाषितपुंस्कः अनर्थकम् [1] (इनन्तात स्त्रियांकप्) बहुधनिकानगरी (ऋदन्तेनदीभ्यश्च) एकपितृकः, बहुकुमारीकः, वृत्तधनुष्कः (वा) वृत्तधनुः।

४ बहुब्रीहि समास मे कई शब्द निपातनसे भी सिद्ध होतेहैं। यथा; प्रज्ञः, संज्ञः, ऊर्द्धज्ञः (वा) ऊर्द्धजानुः। (उपसर्गान्नासिकायान्नसः संज्ञायाञ्च) प्रणसः उन्नसः अपनसः गोनसः खरणसः, खरणाः, खुरणसः, खुरणाः, विग्न, विख्य, विखु, विद्र, (युवतिर्जाया यस्य) युवजानिः, सुन्दरजानिः, प्रियजानिः, द्विपात्, सुपात्, कुम्भपदी, सुदन्, उद्दन्, सुप्रातः चतुरस्रः इत्यादि।

(१) कप् प्रत्ययान्त को पुंवद्भाव नहिं होता यथा वामोरूभार्य्यः जिस स्त्री लिंग शब्द की उपधा म नहि तका अथवा अक प्रत्ययका कहो उसको भी नहिं होता यथा रसिकाभार्य्यः संज्ञावाचक, पूरणी वाचक, जातिवाचक, स्वाङ्गवाचक को तथा स्त्रियादिपरक को भी नहिं होता यथा गङ्गाभार्य्यः पञ्चमीभार्य्यः शूद्राभार्य्यः सुकेशीभार्य्यः श्रोमनासिक। (२) ईयसु प्रत्ययान्त के, तथा भ्रात शब्द के और नञ्पूर्वक के उत्तर कप् नहिं होता यथा बहुश्रेयसी, ... बहुभ्राता ...

द्वन्द्वसमास

१ परस्पर योग अर्थमे द्वन्द्व समास होताहै। यथा; (हरिश्च हरश्च) हरिहरौ, (कन्दश्च मूलञ्च फलञ्च) कन्दमूलफलानि[१]।

२ दो वा अधिक पदार्थों का समाहार[२] होने से भी द्वन्द्व समास होताहै। यथा (पाणीच पादश्च) पाणिपादम् (पणवश्च मृदङ्गश्च) पणवमृदङ्गम् (धनुश्च शराश्च) धनुःशरम् (ब्रह्मपुत्रश्च चन्द्रभागाच) ब्रह्मपुत्रचन्द्रभागम् (मथुराच पाटलिपुत्रश्च) मथुरापाटलिपुत्रं (गावश्च महिषाश्च) गोमहिषम् (व्रीहयश्च यवाश्च) व्रीहियवम्, अहिनकुलम्, गवाश्वम्, दूर्व्वापरं (वा) दूर्व्वापरौ, शीतोष्णं (वा) शीतोष्णौ, गोपनापितम्, दधिपयसी इत्यादि।

३ समास द्वन्द्वमे चवर्गान्त दकारान्त षकारान्त और हान्त शब्द के उत्तर अ होताहै। यथा वाकत्वचम्, सम्पद्विपदम्, वाकत्विषम्, धेनुगोदुहम्।

४ विद्या सम्बन्ध और गोत्र सम्बन्ध होनेसे और ऋकारान्तशब्द परवर्त्ती होने से ऋकारान्त शब्द के उत्तर आ होता है। यथा (होताच पोताच) होतापोतारौ (माताच पिताच) मातापितरौ।

५ पुत्र शब्द परे होनेसे ऋदन्त के उत्तर भी आ होताहै। यथा (पिताच पुत्रश्च) पितापुत्रौ।

६ देवता वाची पदों का द्वन्द्व होनेसे भी पूर्व्व पद के उत्तर आ होताहै। यथा, (इन्द्रश्च वरुणश्च) इन्द्रावरुणौ

एक विभक्ति होनेसे समानाकार अनेक पदोंका एकमात्र

(१) द्वन्द्वसमास मे समस्तमान परपदके लिङ्ग को प्राप्त होताहै। (२) परन्तु समाहारसे समस्तपद नपुंसक लिङ्ग का एकवचनान्त होताहै। ... उत्तर आ नहिं होता।

अवशिष्ट रहता है। यथा (नरश्च नरश्च) नरौ, (नरश्च नरश्च नरश्च) नराः (फलञ्च फलञ्च) फले।

८ समानाकार स्त्रीवाचक पदके साथ समास होने से पुरुषवाचकपद अवशिष्ट रहता है। यथा (ब्राह्मणश्च ब्राह्मणीच) ब्राह्मणौ (कुक्कुटश्च कुक्कुटीच) कुक्कुटौ[1]।

९ स्वसृके साथ भ्रातृका, दुहितृ के साथ पुत्र का समास होनेसे भ्रातृ और पुत्र अवशिष्ट रहता है। यथा (भ्राताच स्वसाच) भ्रातरौ, (पुत्रश्च दुहिताच) पुत्रौ।

१० मातृ पदके साथ समास होनेसे पितृ पद, और श्वश्रूपदके साथ समास होनेसे श्वशुर पद विकल्प करके अवशिष्ट रहते हैं। यथा (मातापितरौ, (वा) पितरौ। श्वश्रूश्वशुरौ (वा) श्वशुरौ।

११ नपुंसकभिन्न के साथ समास होनेसे नपुंसक पद अवशिष्ट रहता है और विकल्प करके एकवचन होता है। यथा (शुक्लश्च शुक्लाच शुक्लञ्च) शुक्लम् वा शुक्लानि।

१२ परन्तु नपुंसकके साथ होनेसे एकवचन नहिं होता। (शुक्लञ्च शुक्लञ्च शुक्लञ्च) शुक्लानि।

१३ द्वन्द समास मे निपातनसे सिद्ध। अग्नीषोमौ, अग्नीवरुणौ, द्यावाभूमी, द्यावाक्षमे, द्यावापृथिव्यौ, दिवस्पृथिव्यौ, मातापितरौ, जायापती, दम्पती, जम्पती, स्त्रीपुंसौ, वाङ्मनसे इत्यादि।

सर्व्वसमाससाधारणविधि

१ समास होनेसे समस्त पदके अन्तस्थित पथिन् शब्दके उत्तर अ होता है। यथा; उपपथं, जलपथः तेजपथौ।

२ समास होनेसे अन्तस्थित कई शब्दोंके उत्तर अन होता है

[1] व्यक्ति विशेषक संज्ञावाचक पदोंका एकशेष नहिं होता। यथा; इन्द्रेन्द्राण्यौ।

यथा, विमलापं सरः; द्वीपम् अन्तरीपम् नीपम्[1], राजधुरा, अ-र्द्धर्चः; अणचो माणवकः, बह्वृचश्चरणः; प्रतिलोमम् अनुलोमम्, अवलोमम्, प्रतिसामम्, कृष्णभूमः; उदकभूमः; पाण्डुभूमः; चतुर्भूमः; ब्रह्मवर्चसम्, हस्तिवर्चसम्, पल्यवर्चसम्, राजवर्चसम्, अवतमसम्, सन्तमसम्, प्रत्यध्वम्, श्वोवसीयसम्, श्वःश्रेयसम् इत्यादि।

३ कहीं समासान्तविधि नहिं भी होती है। यथा सुराजा, सुपन्था, किंराजा (नञ्तत्पुरुषे) अराजा, असखा।

४ समासमे समान शब्दको स होता है गोत्रप्रभृति शब्द परे होनेसे। यथा (समानं गोत्रमस्य) सगोत्रः; सरूपः; सोदर्य्यः; (वा) समानोदर्य्यः।

५ तथा अन्यशब्द के उत्तर दु होता है आशिस् प्रभृति परे होनेसे। यथा, अन्यदाशीः अन्यदागः (न तृतीया षष्ठ्योः) (अन्येन आशीः) अन्याशीः (अर्थे वा) अन्यदर्थः, अन्यार्थः, अन्यस्यवा।

६ तथा कुशब्दको कत् होता है स्वर परे होनेसे और त्रि, रथ, वद परे होनेसे। यथा कदश्वः, कत्त्रयः कद्रथः कद्वदः।

७ तथा कुशब्दको का होता है, ईषत् अर्थमे और पथिन्, अक्षि परे होनेसे। यथा कामधुरं (ईषन्मधुरमित्यर्थः) कापथः, काक्षः, (विभाषा पुरुषे) कापुरुषः; कुपुरुषः

८ तथा कुशब्दको का, कत्, कव होता है उष्ण परे होनेसे। यथा, कोष्णं, कदुष्णं कवोष्णम्।

९ निपातन से भी कई शब्द सिद्ध होते हैं। यथा विश्वामित्रः; सकामः, समनाः, गन्तुकामः, गन्तुमनाः; अवश्यदेयम्, अवश्यभव्यम्, अवश्यकार्य्यम्।

(१) द्वि, अन्तर और उपसर्ग के परवर्ती अप शब्दके अ को ई होता है परन्तु अवर्णान्त उपसर्ग के परवर्ती होने से विकल्प करके यथा प्रेपम् प्रापम्।

१० समासमे उत्तर पद परे होनेसे कहीं २ विभक्तिका लोप नहिं भी होता। यथा स्तोकान्मुक्तः, ओजसाकृतम्, पुंसानुजः, जनुषान्धः, आत्मनः दशमः, आत्मनेपदम्, परस्मैपदम्, युधिष्ठिरः, अन्तेगुरुः, मध्येगुरुः, कण्ठेकालः, हस्तेबन्धः, अन्तेवासी मनसिज (वा मनोजः) चौरस्यकुलम्, दास्याःपुत्रः (वा दासीपुत्रः) वाचोयुक्तिः, देवानांप्रियः, शुनःशेफः, दिवोदासः, होतुः पुत्रः, मातुःष्वसा, पात्रेसमिता इत्यादि।

११ समासमे कहीं २ मध्य पदका लोप होता है। यथा (घृतमिश्रम् ओदनम्) घृतौदनम् (फलमिश्रमन्नं) फलान्नं (अनुगतोऽर्थोऽस्मिन्) अन्वर्थः (पञ्चाधिका विंशति) पञ्चविंशति इत्यादि।

पूर्व्वनिपात

१ अव्ययीभावमे अव्यय प्रकृतिपद, तत्पुरुषमे द्वितीयादि विभक्त्यन्तपद, कर्म्मधारयमे विशेषण प्रकृतिपद, द्विगुमे संख्या वाचक पदका पूर्व्व निपात होता है। यथा (कूलस्य समीपम्) उपकूलम्, (सुखं प्राप्तः) सुखप्राप्तः (नीलमुत्पलम्) नीलोत्पलम्, (पञ्चभिर्गोभिः क्रीतः) पञ्चगुः।

२ बहुव्रीहिमे सप्तम्यन्त और विशेषण पदका पूर्व्व निपात होता है। यथा; कण्ठेकालः, दीर्घबाहुः।

३ निष्ठा प्रत्यय निष्पन्न पदका पूर्व्व निपात होता है। यथा; कृतकर्म्मा, धृतायुधः। कहीं विकल्प भी होता है। यथा आहिताग्नि, अग्न्याहितः।

४ द्वन्द्व समासमे अपेक्षा कृत अल्पस्वर विशिष्ट पदोंका पूर्व्व निपात होता है। यथा; तालतमालौ। स्वर साम्यस्थलमे स्वरादि अकारान्त पदका और इकारान्त उकारान्त पदका पूर्व्व निपात होता है। यथा; अश्वगजौ हरि

हरौ, पटुमृदू।

५ अभ्यर्हित बोधक पदका पूर्व्वनिपात होताहै। यथा; मातापितरौ; तापसयाचकौ।

६ लघुवर्ण विशिष्ट पदका पूर्व्व निपात होता है। यथा, कुशकाशम्, नलनीलौ।

७ बड़े भाई और बड़े वर्ण का पूर्व्व निपात होताहै। यथा युधिष्ठिरार्ज्जुनौ। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्राः।

८ ऋतु और नक्षत्र वाचक पदोंका पौर्व्वापर्य्य क्रमसे पूर्व्व-निपात होता है। यथा, हेमन्तशिशिरौ, अश्विनीभरण्यौ।

९ राजदन्तादिकों का गडु प्रभृति के और प्रहरणार्थ वाचक पदके योगमे सप्तम्यन्त पदका पर निपात होताहै। यथा (दन्तानांराजा) राजदन्ताः, अग्रेवनम् (गडुःकण्ठेयस्य) गडुकण्ठः (शस्त्रंपाणौयस्य) शस्त्रपाणिः।

१० प्रियशब्दका और कर्म्मधारय मे कडार प्रभृति पदका विकल्प करके पूर्व्वनिपात होताहै। यथा प्रियगुरुः, गुरुप्रियः, कडारगजः गजकडारः ॥ ॰ ॥

इतिसमास प्रकरणम्।

अथविभक्तिनिर्णयः

१ संख्या कारक बोधयित्री विभक्तिः

जिससे संख्या और कारककी प्रतीति हो उसे विभक्ति कहते हैं। यथा, घटः, घटौ, घटाः, यहां घट शब्दमे प्रथमा विभक्ति का योग होनेसे एक घट, दो घट, बहुघट, इसप्रकार संख्याकी प्रतीति होती है; चन्द्रं पश्यति, यहां चन्द्र शब्दमे द्वितीया विभक्ति का योग होनेसे उसमे कर्म्म कारककी प्रतीति होती है।

२। विभक्तयः सप्त।

प्रथमादि सात विभक्तियें शब्द के उत्तर प्रयोजनानुसार प्रयुक्त होती हैं।

प्रथमा

३। अभिधेयमात्रे प्रथमा।

जहां क्रिया पद प्रभृति नहो, वहां केवल अभिधेय की प्रतीति के निमित्त शब्दके उत्तर प्रथमा विभक्ति लगती है। यथा; वृक्षः, लताः, पुष्पम्

४। कर्त्तरि।

कर्त्त कारकमे प्रथमा विभक्ति होती है। यथा, शिशुः क्रीड़ति, लड़का खेलता है। (यहां लड़का खेल क्रियाका कर्त्ता है इसलिये शिशु शब्दमे प्रथमा लगी)

५। सम्बोधने।

सम्बोधनमे प्रथमा विभक्ति होती है। यथा, हे पितः, हे भ्रातरौ, हे पुत्राः

६। अव्यययोगेच।

इति प्रभृति कई एक अव्ययोंके योगमे प्रथमा विभक्ति होती है। यथा; अयोध्यानगरे दशरथ इतिख्यातो नृपतिरासीत्, मा पात्मनां सङ्गः परित्यक्तः साम्प्रतं, विषवृक्षोऽपि संवर्द्ध्य स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतं।

द्वितीया

७। कर्म्मणि द्वितीया

कर्म्मकारक मे द्वितीया विभक्ति होती है। यथा, पुष्पं चिनोति देवदत्तः देवदत्त फूलोंको चुंगता है। यहां फूल कर्म्म हैं इसलिये पुष्प शब्दमे द्वितीया हुई।

८। क्रियाविशेषणेच।

क्रिया विशेषणमे द्वितीया होती है, और केवल क्लीवलिङ्गका एकवचन होता है। यथा; सत्वरं धावति, द्रुतं पलायते, मृदु हसति, साधु भाषते।

९। अध्वकालाभ्यामत्यन्तसंयोगे।

अत्यन्त संयोग अर्थात् व्याप्ति अर्थमे अध्व वाचक और कालवाचक शब्दोंके उत्तर द्वितीया होती है। यथा; अध्ववाचक– क्रोशं गिरिः स्थितः, योजनं प्रत्येनागतः; कालवाचक– दिवसमुपवसति, मासमधीते; क्रोशं योजनं दिनं मासं व्याप्येत्यर्थः

१०। अभिपरि सर्व्वोभयेस्तसन्तेः।

तस प्रत्ययान्त अभि, परि, सर्व्व और उभय शब्दके योगमे द्वितीया होती है। यथा, ग्राममभितः, गृहं परितः, उद्यानं सर्व्वतः, नदीमुभयतः।

११। प्रत्यनुधिङ्निकषान्तरेणयावद्भिः।

प्रति, अनु, धिक्, निकषा, अन्तरा (मध्यार्थमे), अन्तरेण (बिना अर्थमे), और यावत् शब्दके योगमे द्वितीयाविभक्ति होती है। यथा; दीनं प्रति दया, राममनुजातो लक्ष्मणः, कृपणं धिक्, ग्रामं निकषा नदी, सत्वां मांच अन्तरा उपविष्टः, श्रममन्तरेण विद्या न भवति, त्वं

यावदउत्तरानि।

तृतीया

१२ तृतीयाकरणे।

करण कारक मे तृतीया विभक्ति होती है। यथा; हस्तेन गृह्णाति, चक्षुषा पश्यति, कर्णेन शृणोति।

१३ सहार्थैः।

सहार्थ शब्दों के योग मे भी तृतीया होती है। यथा; रामः सीतया लक्ष्मणेन च सह वनं जगाम।

सहार्थ शब्दों के अप्रयोगमे भी तृतीया होती है। यथा, पिता पुत्रेण गच्छति (पुत्रेण सहेत्यर्थः)

१४ ऊनवारणप्रयोजनार्थैश्च।

ऊनार्थ, वारणार्थ और प्रयोजनार्थ शब्दोंके योगमे तृतीयाविभक्ति होती है। यथा; ऊनार्थ- एकेन ऊनः, विद्यया हीनः, अहङ्कारेण शून्यः; वारणार्थ- अलं विवादेन, कलहेन किम्; प्रयोजनार्थ- धनेन प्रयोजनम्, कोऽर्थः कलहेन।

१५ अध्वकालाभ्यामपवर्गे।

अपवर्ग अर्थात् क्रियासमाप्ति और फलप्राप्ति अर्थमे अध्ववाचक शब्दोंके उत्तर तृतीया होती है। यथा, अध्ववाचक- क्रोशेनानुवाकोऽधीतः; कालवाचक- त्रिभिरहोभिः कृतम्, मासेन व्याकरणमधीतम्। मासं व्याकरणमधीते न तत्स्फुरति, (यहां अध्ययनकी फल- प्राप्ति होनेसे मास शब्द के उत्तर तृतीया नहुई।

१६ येनाङ्गेनाङ्गिनो विकारः।

जिस अङ्ग के विकृत होनेसे अङ्गी का विकार लक्षित होता है उस अङ्गवाचक शब्दके उत्तर तृतीया होती है। यथा, चक्षुषा काणः पादेन खञ्जः, कर्णेन बधिरः, पृष्ठेन कुब्जः।

१७ लक्षणात्।

जिस लक्षण अर्थात् चिह्न द्वारा कोई व्यक्ति सूचित हो उस लक्षण

बोधक शब्द के उत्तर तृतीया होती है। यथा; जटाभि स्तापसमपश्यम्, भूषाभिः शिशुमदर्शम्।

१८। प्रकृत्यादिभ्यश्च।

स्थल विशेषमे प्रकृति प्रभृति शब्दों के उत्तर तृतीया होती है। यथा; प्रकृत्याचारुः, स्वभावेन सरलः, जात्या ब्राह्मणः, वेगेनयाति, यत्नेन लिखति, क्लेशेन वदति।

चतुर्थी

१९। चतुर्थी सम्प्रदाने।

सम्प्रदान कारकमे चतुर्थी विभक्ति होती है। यथा; दरिद्राय धनं ददाति।

२०। तादर्थ्ये।

"उसके लिये" इस अर्थमे चतुर्थी होती है। यथा; अश्वाय घासः (अश्वके लिये घास), स्नानाय नदींयाति।

२१। निवृत्तौ निवर्त्तनीयात्

निवृत्ति अर्थमे निवर्त्तनीयके उत्तर चतुर्थी होती है। यथा; मशकाय धूमः (मशक निवृत्तये इत्यर्थः), आतपाय छत्रम्।

२२। सम्पद्यमानात् कॢपादेः।

कॢपि प्रभृति धातुके प्रयोगमे सम्पद्यमानके उत्तर चतुर्थी होती है। यथा; भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते, ज्ञानं सुखाय सम्पद्यते, धर्म्मः स्वर्गाय भवति, अधर्म्मः नरकाय भवति।

२३। हितसुख नमोभिः।

हित, सुख, और नमस् शब्दोंके योगमे चतुर्थी होती है। यथा; हितं पुत्राय, सुखं शिष्याय, नमोगुरवे।

क्रिया योगे विकल्पः। यथा; गुरवे नमस्कृत्य, गुरुं नमस्कृत्य

२४। स्वस्ति स्वाहा स्वधा वषड्भिः।

स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा और वषट् शब्दोंके योगमे चतुर्थी होती है। यथा; स्वस्ति प्रजाभ्यः।

२५। समर्थार्थकेश्च।

समर्थार्थक शब्दों के योग मे चतुर्थी होती है। यथा; समर्थो मल्लो मल्लाय, प्रभुर्मल्लो मल्लाय।

समर्थार्थक क्रियायोगेऽपि। प्रभवति मल्लो मल्लाय

२६। मन्यकर्मण्यनादरे विभाषा

अनादर अर्थ मे (दिवादिगणीय) मन धातु के कर्म्म के स्थान मे विकल्प करके चतुर्थी होती है। यथा; मत्वां तृणाय मन्यते, नाहं त्वां कुक्कुराय मन्ये। (पक्षे द्वितीया।

पर शृगाल, काक, नौ, अन्न शब्दोंके ऊपर चतुर्थी नहि होती। यथा; त्वामहं शृगालं मन्ये।

२७। गत्यर्थ कर्म्मणीचेष्टायाम्।

चेष्टा अर्थमे गत्यर्थ धातुओंके कर्म्मके स्थानमे विकल्प करके चतुर्थी होती है। यथा; ग्रामाय गच्छति, ब्रजाय ब्रजति। (पक्षे द्वितीया)

(चेष्टाभिन्न अर्थमे) मनसा मथुरां गच्छति।

पर अध्ववाचक शब्द कर्म्म होनेसे चतुर्थी नहि होती। यथा; अध्वानं गच्छति, पन्थानं गच्छति।

पञ्चमी

२८ अपादाने पञ्चमी।

अपादान कारक मे पञ्चमी विभक्ति होती है। यथा; अश्वात् पतितः, गृहाच्चलितः, जलादुत्थितः।

२९। ल्यब्लोपे कर्म्मण्यधिकरणे च।

ल्यप् प्रत्ययान्तपदका जहां प्रयोग होसकता है, ऐसे स्थलमे द्वितीया और सप्तमी के स्थान मे पञ्चमी होती है। यथा; प्रासादात् प्रेक्षते (प्रासादमारुह्य इत्यर्थः), आसनादवलोकयति (आसने उपविश्य इत्यर्थः)।

३०। कालाध्वनोरवधेः।

काल परिमाण और अध्वपरिमाण अर्थमे अवधि बोधक शब्दों के

उत्तर पञ्चमी होतीहै। यथा; कालपरिमाण अग्रहायणात् पञ्चमासाः विवाहात् सप्तमेदिने; अध्वपरिमाण पाटलिपुत्रात् शतं क्रोशाः;

२१। निकृष्टादेकोत्कर्षे।

दो वा अधिक के मध्यमे एकका उत्कर्ष बोध होनेसे निकृष्ट के उत्तर पञ्चमी होतीहै। यथा; धनात् विद्यागरीयसी, चैत्रो मैत्रात् बलीयान्, माथुराः पाटलिपुत्रकेभ्य आढ्यतराः।

२२। मर्य्यादाभिविध्योराङ्योगे।

मर्य्यादा और अभिविधिका बोध होनेसे आ अव्यय के योगमे पञ्चमी होतीहै। यथा; मर्य्यादा- आजन्मनः, आ शैशवात्, आमृत्योः, आ समुद्रात्; अभिविधि- आवना दृष्टोदेवः (वनं व्याप्य इत्यर्थः), आसकलात् ब्रह्म, सकलं व्याप्य इत्यर्थः।

२३। अन्यार्थैः।

अन्यार्थ शब्दोंके योगमे पञ्चमी होतीहै। यथा; पितुरन्यः कः परित्रातुं समर्थः; घटः पटादितरः, इदमस्माद्भिन्नम्। अन्यार्थ क्रियायोगेऽपि। यथा; स्वर्णं रजताद्भिद्यते।

२४। दिग्देशकालवाचिभिः।

दिग्वाचक, देशवाचक और कालवाचक शब्दोंके योगमे पञ्चमी होतीहै। यथा; दिग्वाचक- पूर्वो ग्रामात्, देशवाचक- चैत्रो मैत्रात् पूर्वदेशे; कालवाचक- चैत्रात्पूर्व्वः फाल्गुनः, भोजनात् प्राक्, शयनात् पूर्व्वं, उत्थानात् परतः, प्रस्थानादनन्तरम्।

२५। वहिरारात्प्रभृतिभिः।

वहिस्, आरात्, और प्रभृति शब्दोंके योगमे पञ्चमी होतीहै। यथा; गृहात् वहिः[१], आराद्वनात्, जन्मनः प्रभृति।

२६। आ आदिभ्याञ्च।

आ और आदि प्रत्ययान्त शब्दोंके योगमे पञ्चमी होतीहै। यथा; उत्तराद्दक्षिणाहि, गृहाद्दक्षिणाहि सरः, हिमालयात् दक्षिणा भारतवर्षम्, प्रयागात् दक्षिणाहि विन्ध्यः।

(१) क्रमदीश्वरने वहिः शब्दके योगमे पञ्चमी षष्ठी दोनो विभक्तियोंका विधान कियाहै।

३८। ऋतेयोगे द्वितीयाच।

ऋते शब्दके योगमे पञ्चमी और द्वितीया विभक्तियें होतीहैं। यथा; ज्ञानादृते, ज्ञानमृते (वा)

३८। पृथग्विनाभ्यांद्वितीयातृतीयेच।

पृथक् और विना शब्दोंके योगमे पञ्चमी, द्वितीया, और तृतीया विभक्तियें होतीहै। यथा; चैत्रात् पृथक्, चैत्रंपृथक्, चैत्रेण पृथक्, श्रमात् विना, श्रमंविना, श्रमेणविना।

३९। स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयेभ्यस्तृतीयाच।

स्तोक, कृच्छ्र, अल्प और कतिपय शब्दोंके उत्तर पञ्चमी और तृतीया होती है। यथा; स्तोकान्मुक्तः, स्तोकेनमुक्तः, कृच्छ्रान्मुक्तः, कृच्छ्रेणमुक्तः, अल्पान्मुक्तः, अल्पेनमुक्तः, कतिपयान्मुक्तः, कतिपयेनमुक्तः।

परन्तु विशेषण होनेसे नहि होगा। यथा; स्तोकः पाकः, स्तोकंपचति।

४०। हेतौच।

हेतु अर्थमे तद्बोधक शब्दोंके उत्तर पञ्चमी और तृतीया होतीहै। यथा; धनात् कुलम्, धनेनकुलम्, भयात्कम्पः, भयेनकम्पः, हर्षात्नृत्यति, हर्षेणनृत्यति, दुःखात् रोदिति, दुःखेन रोदिति।

षष्ठी

४१। षष्ठीसम्बन्धे।

सम्बन्धमे षष्ठीविभक्तिहोती है। यथा; ममपिता, तवपुत्रः, गोर्दुग्धम् नद्याजलम् इत्यादि।

४२। कर्त्तृकर्म्मणोः कृतिः।

कृत् प्रत्ययके प्रयोग होनेसे कर्त्ता और कर्म्ममे षष्ठी होतीहै। यथा; कर्त्तामे- शिशोःशयनम्, अश्वस्यगतिः, तवपिपासा, कर्म्ममे- अन्नस्यपाकः पयसःपानम्, सुखस्यभोगः, धनस्यदाता, वृक्षस्यछेदकः।

४३। उभयप्राप्तौकर्म्मणि।

कर्त्ता और कर्म्म उभयत्र प्राप्ति होनेसे केवल कर्म्ममे षष्ठी होतीहै। यथा; गवां दोहो गोपेन, पयसःपानं शिशुना, धनस्यदानं नृपेण।

५४। क्वचिद्विभाषा कर्त्तरि।

कहीं २ कर्त्तामे विकल्प करके षष्ठी होती है। यथा; घटस्य कृतिः कुम्भकारेण कुम्भकारस्य वा, चन्द्रस्य दिदृक्षा मया मम वा, शिष्यस्य प्रशंसा गुरुणा गुरोर्वा, शब्दानामनुशासनमाचार्य्येणाचार्य्यस्य वा।

५५। न शत्रादेः।

शतृ[१], शानच्, क्वसु, कानच्, स्यत्, और स्यमान प्रत्ययों के प्रयोगमे षष्ठी नहि होती। यथा; शतृ– गृहं गच्छन्, जलं पिबन्; शानच्– अन्नं भुञ्जानः, आकरणमधीयानः; क्वसु-ओदनं पेचिवान्; कानच्- शास्त्रं शुश्रुवाणः; स्यत्– गृहं गमिष्यन्; स्यमान– गुरुं सेविष्यमाणः

५६। न तुमुनादेः।

तुमुन्, क्त्वा, ल्यप्, और णमुल्, प्रत्ययोंके प्रयोगमे षष्ठी नहि होती। यथा; तुमुन्– गृहम् गन्तुम्, चन्द्रं द्रष्टुम्; क्त्वा-जलं पीत्वा; ल्यप्– गृहमागत्य, णमुल्– गुरुं सेवम् सेवम्।

५७। नोदन्तस्य।

उकारान्त कृत् प्रत्ययके प्रयोगमे षष्ठी नहि होती। यथा; जलंपिपासुः, फलं गृहयालुः, रिपून् जिष्णुः।

५८। नोकशीलतृन्भविष्यदर्थिनाम्।

उक[२], शीलार्थतृन्, और भविष्यदर्थणीन् प्रत्ययके प्रयोगमे षष्ठी नहि होती। यथा, उक– गृहं गामुकः; शीलार्थतृन् – धनं दाता; भविष्यदर्थणीन्– धनं दायी।

५९। न खलर्थानाम्

खलर्थ[३] प्रत्ययोंके प्रयोगमे षष्ठी नहि होती। यथा; नैतत् सुकरं भवता, नतद्दुष्करं तेन, सर्व्वमीषत्करं सुधिया, मया सुमर्षणः शत्रुः, त्वया दुःशासनो रिपुः।

---

(१) द्विषो विभाषा। द्विष् धातुसे विकल्प करके। यथा; सुरं द्विषन्, सुरस्य द्विषन्।

(२) कामुक शब्दके प्रयोगमे होती है। यथा; धनस्य कामुकः।

(३) सु, दुः, और ईषत् शब्दोंके योगमे धातुके उत्तर जो अ और अन होते हैं उन्हें खलर्थ प्रत्यय कहते हैं।

५०। न निष्ठायाः।

निष्ठा प्रत्ययों के प्रयोग में षष्ठी नहिं होती। यथा; क्त- तेन आकारण मधीतम्, तथा चेद्रोरक्षः; क्तवत्- सरहं गतवान्, अहं चन्द्रं दृष्टवान्।

५१। क्तस्य वर्त्तमाने।

वर्त्तमानकाल में विहित क्त प्रत्यय के प्रयोग में षष्ठी होती है। यथा; राज्ञां मतः, (राजभिर्मन्यते इत्यर्थः); सतां पूजितः, सद्भिः पूज्यते इत्यर्थः।

५२। अधिकरण वाचिनश्च।

अधिकरण कारक में विहित क्त प्रत्यय के प्रयोग में षष्ठी विभक्ति होती है। यथा; इदमेषां शयितम्, इदमेषां मासितम्।

५३। विभाषा भावे।

भाववाच्य में विहित क्त प्रत्यय के प्रयोग में विकल्प करके षष्ठी विभक्ति होती है। यथा; मम स्नातम्। पक्षमें तृतीया मया स्नातम् इत्यादि।

५४। कृत्यानां कर्त्तरि वा।

कृत्य प्रत्यय का प्रयोग होने से कर्त्ता में षष्ठी विकल्प करके होती है। यथा; पुस्तकं तव पाठ्यम्, गुरुस्त्वया सेवनीयः, पक्षमें तृतीया।

५५। कर्म्मणि जासि पिष् निप्रहनां हिंसायाम्।

हिंसा अर्थमें जासि, पिष् और निप्र पूर्व्वक हन धातु के कर्म्म में षष्ठी विभक्ति होती है। यथा, चौरस्य उज्जासयति, शत्रोः पिनष्टि, नि और प्र के व्यस्त समस्त और विपर्य्यस्त होने से भी होती है। यथा निहन्ति प्रहन्ति निप्रहन्ति प्रणिहन्ति वा चौरस्य।

५६। आस्मरत्यर्थ दयेशां कर्म्मणि।

स्मरणार्थ दय और ईश धातु के कर्म्म में विकल्प करके षष्ठी विभक्ति होती है। यथा; पुत्रो मातुः स्मरति, दाता दरिद्रस्य दयते पक्षमें द्वितीया होती है।

५७। तृप्त्यर्थानां विभाषा करणे।

तृप्त्यर्थ— धातु के करण कारक मे विकल्प करके षष्ठी विभक्ति होती है। यथा; नाग्निस्तृप्यति काष्ठानाम्, स्वादुः सुगन्धिः स्वदते नृपाणां। पक्षमे तृतीया होती है।

५८। अस्तादस्यात्यतसृभिः।

अस्तात्, अति, आति, और अतस् प्रत्यय के योग मे षष्ठी विभक्ति होती है। यथा, अस्तात्— पुरस्ता उद्यानस्य, उपरि मन्त्रस्य; अति— पुरो नगरस्य, अधो गृहस्य, आति— उत्तरात् समुद्रस्य; अतस् दक्षिणतो ग्रामस्य।

५९। कृत्वस्सुचोः कालाऽधिकरणे।

कृत्वस् और सुच प्रत्यय के प्रयोग मे कालवाचक शब्द के अधिकरण मे षष्ठी विभक्ति[1] होती है। यथा; कृत्वस्— पञ्चकृत्वो दिवसस्याधीते; सुच्— द्विर्दिवसस्य भुंक्ते।

६०। एनपा द्वितीया च।

एनप् प्रत्ययान्त शब्द के योग मे षष्ठी और द्वितीया होती हैं। यथा; दक्षिणेन हलवारिकायाः सरः; (वा) दक्षिणेन हलवारिकां सरः।

६१। तुल्यार्थैस्तृतीया च।

तुल्यार्थ शब्दों के योग मे षष्ठी और तृतीया विभक्ति होती हैं। यथा; मम तुल्यः; मया तुल्यः, मम सदृशः, मया सदृशः, मम समः, मया समः।

६२। आशिषि कुशलादिभिश्चतुर्थी च।

आशीर्वाद अर्थ मे कुशल प्रभृति[2] शब्दों के योग मे षष्ठी और चतुर्थी होती है। यथा; कुशलं देवदत्तस्य भूयात्, कुशलं देवदत्ताय भूयात्, निरामयं देवदत्तस्य भूयात्, निरामयं देवदत्ताय भूयात्। इत्यादि।

(१) वोपदेव और क्रमदीश्वर के मत मे विकल्प से होती है।
(२) कुशल, निरामय, हित, भद्र, अर्थ, आयुष्य और सुखार्थक शब्द।

९३। दूरान्तिकार्थैः पञ्चमी च।

दूरार्थ और अन्तिकार्थ शब्दों के योग मे षष्ठी और पञ्चमी विभक्ति होती है। यथा, दूरङ्ग्रामस्य दूरङ्ग्रामात्, अन्तिकन्नगरस्य अन्तिकन्नगरात्।

९४। निमित्ताद्धेतुप्रयोगे।

हेतु शब्द के प्रयोग मे निमित्त बोधक शब्द के उत्तर षष्ठी होती है[१] अन्नस्य हेतोर्वसति, अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन्।

९५। सर्वनाम्नस्तृतीया च।

हेतु शब्द का प्रयोग होने से, निमित्त बोधक सर्वनाम के उत्तर षष्ठी और तृतीया विभक्ति होती है[२] यथा, कस्य हेतोः स आगतः, केन हेतुना स आगतः।

सप्तमी

९६। सप्तम्यधिकरणे।

अधिकरण कारक मे सप्तमी विभक्ति होती है। यथा, गृहे तिष्ठति, शय्यायां शेते, नद्यां स्नाति।

९७। यस्य च भावेन भावलक्षणम्।

जिस सम्बन्धि क्रिया के, काल द्वारा अन्य सम्बन्धि क्रिया का काल निरूपित होता है, उसके उत्तर सप्तमी विभक्ति होती है। यथा, रवावस्तङ्गते गतः (रवि के अस्त होजाने पर गया)

९८। साधुनिपुणाभ्यामर्चायाम्।

प्रशंसा अर्थ मे साधु और निपुण शब्द के योग मे सप्तमी विभक्ति होती है। यथा, व्याकरणे साधुः, साहित्ये निपुणः[३]।

९९। क्तस्य सेनिना कर्म्मणि।

इनि सहित क्त प्रत्यय के प्रयोग मे कर्म्म मे सप्तमी विभक्ति होती

(१) बोपदेव और भट्टोजिदीक्षित ने इस स्थल मे तृतीयादि पांच विभक्तियोंका विधान कीया है। (२) बोपदेव क्रमदीश्वर और भट्टोजिदीक्षित ने सातों विभक्तियों का विधान किया है।
(३) बोपदेव के मतमे षष्ठी और सप्तमी दोनों होती हैं।

है। यथा, अधीत व्याकरण मनेन, अधीती व्याकरणे, गृहीतउपदेशोनेन, गृहीती उपदेशे।

२०। अध्वनो व्यवधौ सप्तम्यास्।

व्यवधान द्योतन मे अध्ववाचक शब्द के उत्तर सप्तमी और प्रथमा विभक्ति होती है। यथा, ग्रामो वनात् पञ्चसु कोशेषु पञ्च क्रोशा वा, पांच कोश के अन्तर मे है; प्रयागो पाटलिपुत्रात् दशसु योजनेषु दशयोजनानि वा, दशयोजन अन्तर पर है।

२१। प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च।

प्रसित और उत्सुक शब्द के योग मे सप्तमी और तृतीया विभक्ति होती है। यथा, धनेषु प्रसितः, धनैः प्रसितः विद्यायामुत्सुकः विद्ययोत्सुकः।

२२। क्रियामध्येध्वकालाभ्यां पञ्चमी च।

दो क्रियाओं के मध्यवर्ती अध्ववाचक और कालवाचक शब्दों के उत्तर सप्तमी और पञ्चमी विभक्ति होती हैं। यथा, अध्ववाचक-अयमिह स्थित्वा क्रोशे क्रोशाद्वा लक्ष्यं विध्येत्, कालवाचक- अयमद्य भुक्त्वा द्व्यहे द्व्यहाद्वा भोक्ता।

२३। दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीयातृतीया पञ्चम्यश्च।

दूरार्थ और अन्तिकार्थ शब्दों के उत्तर सप्तमी, द्वितीया, तृतीया, और पञ्चमी होती हैं। यथा, दूरे ग्रामस्य दूरङ्ग्रामस्य, दूरेण ग्रामस्य, दूरात् ग्रामस्य, अन्तिके गृहस्य, अन्तिकात् गृहस्य अन्तिकं गृहस्य, अन्तिकेन गृहस्य। विशेषण होने मे नहिं होता। यथा दूरो ग्रामः।

२४। षष्ठी चानादरे।

क्रिया द्वारा अवज्ञा जताने मे अवज्ञेय के उत्तर सप्तमी और षष्ठी विभक्ति होती हैं। यथा, रुदति शिशौ अगमम्, रुदतः शिशोरगमम्। रोते हुए बालक को अनादर करके गया

७५। साक्षिप्रभृतिभिश्च।

साक्षी प्रभृति शब्दों के योग में सप्तमी और षष्ठी होती हैं। यथा; विवादे साक्षी, विवादस्य साक्षी; व्यवहारे प्रतिभूः, व्यवहारस्य प्रतिभूः, मीमांसायां कुशलः मीमांसायाः कुशलः; गोषु स्वामी, गवां स्वामी; सर्वस्मिन्नीश्वरः सर्वस्येश्वरः; गृहेऽधिपतिः; गृहस्याधिपतिः।

७६। यतश्च निर्द्धारणम्।

जाति गुण क्रिया अथवा संज्ञा द्वारा सारे सजातीय से एक के पृथक करने को निर्धारण कहते हैं। जिससे निर्धारण किया जाय उसके उत्तर सप्तमी और षष्ठी विभक्ति होती हैं। यथा; जातिद्वारा —— मनुष्येषु क्षत्रियः शूरः, मनुष्याणां क्षत्रियः शूरः; गुणद्वारा —— गोषु कृष्णा बहुक्षीरा, गवां कृष्णा बहुक्षीरा; क्रियाद्वारा —— अध्वगेषु धावन्तः शीघ्रगामिनः, अध्वगानां धावन्तः शीघ्रगामिनः; संज्ञाद्वारा — छात्रेषु मैत्रः प्रवीणः, छात्राणां मैत्रः प्रवीणः।

७७। निमित्तात्कर्मसमवाये विभाषा।

कर्म के साथ सम्बन्ध होने से निमित्त बोधक शब्द के उत्तर विकल्प करके सप्तमी होती है। यथा, चर्मणि द्वीपिनं हन्ति, दन्तयोर्हन्ति कुञ्जरं, केशेषु चमरीं हन्ति, सीम्नि पुष्कलको हतः। पक्षे चतुर्थी। यथा, मुक्ताफलाय करिणं हरिणं पलाय इत्यादि।(१)

कारक।

७८। क्रियान्वयि कारकम्।

क्रिया के साथ जिसका अन्वय हो उसे कारक कहते हैं।

७९। षट् कारकाणि।

अपादान, सम्प्रदान, करण, अधिकरण, कर्म, और कर्त्ता

(१) केचित् वैयाकरण केवल सप्तमी विभक्ति करके मुक्ता फलाय करिणं हरिणं पलाय इत्यादि क को अपप्रयोग कहते है

से अः कारक हैं।

अपादान

८०। यतो विश्लेषोऽपादानम्।

जिससे विश्लेष होता है, उसे अपादान कहते हैं। यथा, अश्वात् पतितः, वृक्षाद्भ्रष्टः, जलादुत्थितः, गृहात् प्रस्थितः, विदेशात् प्रत्यागतः;

८१। भीत्रार्थानां भयहेतुः

भयार्थ और त्राणार्थ धातुके प्रयोगमें भयहेतु अपादान होता है। यथा, भयार्थ — व्याघ्राद्बिभेति, शरीरात् त्रस्यति; त्राणार्थ — आतपात् त्रायते भल्लुका रक्षति।

८२। हेतुरुत्पत्तेः।

उत्पत्तिका कारण अपादान होता है। यथा, बीजादङ्कुरो जायते, पितुः पुत्रो जायते, धर्मात् स्वर्गं भवति।

८३। आविर्भवनस्य भुवः।

भू धातु के प्रयोग में आविर्भाव पूर्व अर्थात् प्रकाशस्थान अपादान होता है। यथा, हिमवतो गङ्गा प्रभवति, वल्मीकाग्रात् प्रभवति धनुः खण्डमाखण्डलस्य, आविर्भवतीत्यर्थः।

८४। विरामार्थानां यतो विरतिः।

विरामार्थक धातु के प्रयोग में जिससे विराम हो उसकी अपादानसंज्ञा होती है। यथा अध्ययनाद्विरमति, कलहान्निवर्तते।

८५। पराजेरसह्यम्।

परा पूर्वक जि धातुके प्रयोगमें असह्य विषय अपादान होता है। यथा, अध्ययनात् पराजयते, पापात् पराजयते। अध्ययनं पापञ्च सोढुमसमर्थ इत्यर्थः।

८६। यस्यादर्शनमिच्छति।

जिसके अदर्शनकी इच्छा हो उसमे —— अपादान होता है। यथा, गुरोरन्तर्धत्ते, पितुर्निलीयते, दस्योर्लुक्काय ते; गुरुः पिता दस्युर्वा नमां पश्येदिति लज्जया भयेनवा न दर्शन यथा दद्यमस्तीत्यर्थः।

८७। यतो जुगुप्सा तदर्थानाम्।

जुगुप्सार्थक धातुओंके प्रयोगमे जिससे जुगुप्सा होती है उसकी अपादान सञ्ज्ञा है। यथा, पापाज्जुगुप्सते,

८८। अपार्थानां यतस्त्रपा।

लज्जार्थक धातुओं के योगमे जिससे लज्जा होती है वह अपादान है। यथा, गुरोर्लज्जते, पितुस्त्रपते, भ्रातुर्जिह्रेति।

८९। अधीत्यर्थानामध्यापयिता।

अध्ययनार्थक धातु के प्रयोगमे अध्यापयिता अपादान होता है। यथा, उपाध्यायादधीते, गुरोः पठति।

९०। वारणार्थानामीप्सितः।

वारणार्थक धातुओं के योगमे निवार्य्यमाणका ईप्सित अपादान होता है। यथा, अन्नेभ्यः काकं वारयति, पैवेभ्यश्छागं निषेधति, यवनात् वृत्तं निवारयति

९१। श्रुत्यर्थानां श्रावयिता।

श्रवणार्थक धातु के प्रयोगमे श्रावयिता अपादान होता है। यथा, गुरोः शास्त्रं शृणोति, नटाद्गीतिमाकर्णयति, कस्मात् श्रुतं भवता, मयाश्रुत मिदं नातात्।

९२। ग्रहण प्राप्त्यर्थानां तत्स्थानम्।

ग्रहणार्थक और प्राप्त्यर्थक धातुओंके प्रयोग मे ग्रहणस्थान और प्राप्तिस्थान अपादान होते हैं। यथा, ग्रहणार्थक — आचार्योउपदेशङ्गृह्णाति प्रजाभ्यः करमादत्ते; प्राप्त्यर्थक — उपाध्यायाद्विद्यामाप्नोति, गुरोर्ज्ञानंल

भते।

९३। प्रमादार्थानांयतः प्रमादः।

प्रमादार्थक धातु के प्रयोग मे जिस से प्रमाद हो वह अपादान होता है। यथा, धर्म्मात्प्रमाद्यति, अध्ययनादनवधानम्।

सम्प्रदान।

९४। यस्मैदानं सम्प्रदानम्।

जिसको कोई वस्तु दी जाय उसे सम्प्रदान कारक कहते हैं। यथा, दरिद्राय धनन्ददाति, भिक्षवे भिक्षान्ददाति, सर्वस्वं गुरवे दद्यात्।

९५। रुच्यर्थानां प्रीयमाणः।

रुच्यर्थक धातुओं के प्रयोग मे प्रीयमाण सम्प्रदान होता है। यथा, मोदकः शिशवे रोचते, इदं मह्यं स्वदते।

९६। स्पृहेरीप्सितः।

स्पृहि धातु के प्रयोग मे कर्त्ता का ईप्सित सम्प्रदान होता है। यथा, धनाय स्पृहयति, पुष्पेभ्यः स्पृहयति।

९७। धारेरुत्तमर्णः।

धारि धातु के प्रयोग मे उत्तमर्ण सम्प्रदान होता है। यथा, स तुभ्यं शतं धारयति, त्वं मह्यं सहस्रं धारयसि।

९८। क्रियया यमभिप्रैति।

क्रिया द्वारा जिसको अभिप्राय करता है, अर्थात् जिसके प्रीति जननादि उद्देश्य से क्रिया का अनुष्ठान हो वह सम्प्रदान होता है। यथा, शिशवे क्रीडनक मानयति, पुत्राय चन्द्रन्दर्शयति।

तनङ्कुमिपतिः पत्न्यै दर्शयन् प्रियदर्शनः

अपिलङ्घितमध्वानं बुबुधे न बुधोपमः।

९९। क्रोधद्रोहेर्ष्यासूयार्थानां तदुद्देश्यः।

क्रोधार्थक, द्रोहार्थक, ईर्ष्यार्थक, और असूयार्थक धातुओं के प्रयोग मे क्रोधादि का उद्देश्य सम्प्रदान होता है। यथा अन्याय

कुध्यति, शत्रवे उद्यति, प्रतिवेशिने ईर्ष्यति, प्रतिद्वन्द्विने असूयति।

१००। प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः प्रवर्त्तकः।

प्रति पूर्वक और आङ् पूर्वक श्रु धातु के प्रयोग में प्रवर्त्तक सम्प्रदान होता है। यथा, दरिद्राय धनं प्रतिशृणोति, आशृणोति वा। दरिद्रेण मह्यं धनं देहीति प्रवर्त्तितः प्रतिजानीति इत्यर्थः

करण

१०१। साधकतमं करणम्।

क्रिया निष्पत्ति का जो सर्व प्रधान उपाय है उसको करण कारक कहते हैं। यथा, चक्षुषा पश्यति, कर्णेन शृणोति, हस्तेन गृह्णाति, दात्रेण लुनाति।

अधिकरण

१०२। आधारोऽधिकरणम्।

क्रिया के आधारभूत कर्त्ता और कर्म्म का जो आधार हो उसको अधिकरण कारक कहते हैं। आधार तीन प्रकार का होता है। ऐकदेशिक, वैषयिक, अभिव्यापक। यथा, ऐकदेशिकः—वने वसति, वनैकदेशे इत्यर्थः; नद्यां स्नाति, नद्याः एकदेशे इत्यर्थः; वैषयिकः—जले तृष्णा, जलविषये इत्यर्थः; धने स्पृहा, धनविषये इत्यर्थः। अभिव्यापकः—दुग्धे माधुर्य्यमस्ति; दुग्धस्य सर्वावयवान् व्याप्येत्यर्थः;

कर्म्म

१०३। क्रियया [illegible]

कर्त्ताकी क्रिया द्वारा जो प्रा[illegible] कारक कहते हैं। यथा, गृहम्प्रविशति, चन्द्रम[illegible] पश्यति, इत्यादि।

१०४। अधिशीङ्स्थासामधिकरणम्।

अधि पूर्वक शी, स्था, और आस धातु के अधिकरण की कर्म सञ्ज्ञा होती है। यथा, शय्यामधिशेते, ग्राम मध्यास्ते।

१०५। उपान्वध्याङ्वसः।

उप अनु अधि, आङ् पूर्वक वस् धातुका अधिकरण कारक कर्म्म सञ्ज्ञक होता है। यथा, ग्राम मुपवसति[१], गृह मा वसति, नगर माधि वसति।

१०६। अभिनिविशोविभाषा।

अभि नि, पूर्वक विश धातका अधिकरण कारक विकल्प करके कर्म्म सञ्ज्ञक होता है। यथा, धर्म्ममभिनिविशते, धर्मे अभिनिविशते।

१०७। क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयोः सम्प्रदानम्।

उपसर्ग पूर्वक क्रुध और द्रुह धातका सम्प्रदान कारक कर्म्मसञ्ज्ञक होताहै। यथा, भृत्यमभिक्रुध्यति, शत्रुमभिद्रुह्यति।

१०८। विभाषादिवः करणम्।

दिव धातु का करण कारक विकल्प करके कर्म्म सञ्ज्ञक होताहै। यथा, अक्षान्दीव्यति, अक्षैर्दीव्यति।

१०९। द्विकर्म्मणो दुहादेः।

दुह, याच्[२], चि, प्रच्छ, नी, मथ, प्रभृति कई एक धातुओं के दो कर्म्म होतेहैं, एक का नाम प्रधान, और दूसरे का नाम अप्रधान कर्म्म है, क्रियाके साथप्रधान भावसे जिसका अन्वय होताहै उसे प्रधान कर्म्म, और अप्रधान भाव से जिसका अन्वय होता है, उसे अप्रधान कर्म्म कहते हैं। यथा, गोपो गांदुग्धं दोग्धि, दरिद्रो राजानं धनं याचते, मालाकारो वृक्षम्पुष्पं चिनोति, शिष्यो गुरुन्धर्म्मम्पृच्छति, पिता पुत्रङ्ग्रामं नयति, देवा जलधिम-

[१] उपवास अर्थमे नहीं होता। यथा, उपवसति वने। [२] याच्ञार्थ, अर्थ मात्र, भिक्ष आदि।

स्तनं मममत्युः। इन वाक्यों मे दुग्ध, धन, पुष्प, धर्म्म, पुत्र, अमृत, प्रधान कर्म्म हैं, और गौ, राजा, दृत, गुरु, गद, जलधि अप्रधान कर्म्म हैं इस अप्रधान कर्म्म को अकथित और अविवक्षित कर्म्म भी कहते हैं। अर्थात् अप्रधान कर्म्म के मध्यमे जिससे कारकान्तर प्रवृत्ति की सम्भावना हो, अथवा वक्ता की इच्छा के प्रवृत्त न होने से, वह सब कारकें प्रवृत्त न होकर कर्म्म कारक प्रवृत्त हो उसी को अकथित, अविवक्षित, और अप्रधान कर्म्म कहते हैं। इसके उदाहरणों मे गो प्रभृति की कर्म्म सञ्ज्ञा हुई है, परन्तु विवक्षा होने से गोर्दुग्धन्दोग्धि, राज्ञोधनं याचते, दृतात् पुष्पं चिनोति, गुरोर्धर्म्मं पृच्छति, पुत्रंगृहे नयति, जलधेरमृतं मथ्नाति इसी प्रकार यथा सम्भव अपादानादि कारक भी हो सकते हैं +

११०। कर्मणिवाच्ये प्रथमा।

कर्म्मवाच्य प्रयोग मे कर्म्म कारक मे प्रथमा होती है। यथा, ग्रामो गम्यते, चन्द्रो दृश्यते, हरि आहूयते, शत्रुरभिद्रुयते।

१११। न्यादेः प्रधाने।

कर्म्मवाच्य प्रयोग मे नी, प्रभृति[1] धातु के प्रधान कर्म्म मे प्रथमा विभक्ति होती है। यथा, गौर्ग्रामन्नीयते, भारः ग्रामं वह्यते

११२। दुहादेरप्रधाने।

कर्म्मवाच्य प्रयोग मे दुह प्रभृति[2] धातु के अप्रधान कर्म्म मे प्रथमा विभक्ति होती है। यथा, गौर्दुग्धन्दुह्यते, राजा धनं याच्यते, हरिः पुष्पं चीयते, गुरुर्धर्म्मं पृच्छ्यते, शिष्यो धर्म्मं मनुशिष्यते जलधिरमृतं मथ्यते।

कर्त्ता

११३। क्रियासम्पादकः कर्त्ता।

जिसके यत्न से क्रिया सम्पन्न होती है, उसे कर्त्ताकारक कहते

है। यथा, शिशुः क्रीड़ति, गौः शब्दायते, मेघो गर्ज्जति इत्यादि।

११४। प्रयोजककश्च।

जो अन्यको क्रियामे प्रवृत्त करे उसे भी कर्त्तृकारक कहते हैं।

११५। तृतीया प्रयोज्ये।

क्रिया के अणिजन्त अवस्था के कर्त्ता को णिजन्त अवस्था मे प्रयोज्य कहते हैं। प्रयोज्य कर्त्ता मे तृतीया होती है। यथा, देवदत्त ओदनमपचति, यज्ञदत्तो देवदत्तेन ओदनम्पाचयति। इस वाक्यमे देवदत्त पचनक्रिया की अणिजन्त अवस्था मे कर्त्ता था, णिजन्त अवस्था मे उसकी प्रयोज्य सज्ञा हुई और उससे तृतीया विभक्ति होगई। और यज्ञदत्त देवदत्त को पचनक्रिया मे प्रवृत्त करता है, इस कारण वह प्रयोजक है अतएव उसकी कर्त्तृ सञ्ज्ञा होकर उसमे प्रथमाविभक्ति हुई।

११६। गत्यर्थानाङ्कर्म्म सञ्ज्ञा प्रयोज्यस्य।

गमनार्थ धातुके प्रयोग मे प्रयोज्य कर्त्ता की कर्म्म सञ्ज्ञा होती है। यथा, देवदत्तो गृहङ्गच्छति, यज्ञदत्तो देवदत्तङ्गृहङ्गमयति।

११७। ज्ञानाशनार्थानाञ्च।

ज्ञानार्थ और अशनार्थ[1] धातुओं के प्रयोग मे प्रयोज्य कर्त्ता की कर्म्मसञ्ज्ञा होती है। यथा, ज्ञानार्थ— शिष्यो धर्म्मं बुध्यते गुरुः शिष्यं धर्म्मम्बोधयति; भोजनार्थ— पुत्रोऽन्नमत्ति, माता पुत्रमन्नमाशयति।

११८। शब्दकर्म्मकाणामकर्म्मकाणाञ्च।

शब्दकर्म्मक[1] और अकर्म्मक[2] धातुओं के प्रयोग मे प्रयोज्य कर्त्ता की कर्म्म सञ्ज्ञा होती है। यथा, शब्दकर्म्मक— शिष्यो वेदमधीते, गुरुः शिष्यं वेदमध्यापयति; अकर्म्मक— शिशुः शेते, माता शिशुं शाययति।

(१) अद्, खाद्, भक्ष, भिक्ष। (१) शब्दात्मक विषय पद, वाक्य, ग्रन्थ, उपदेश, तिरस्कार, प्रशंसा प्रभृति।
(२) ढौ, कूद, शब्दाय, जल्प, भी, लप, सु, नश, इत्यादि भिन्न।

११९। विभाषा हृक्रोः।

हृञ् और कृञ् धातु के प्रयोगमे प्रयोज्य कर्त्ताकी विकल्प करके कर्म्म सञ्ज्ञा होती है। यथा, भृत्यो भारं हरति, प्रभुर्भृत्यं भृत्येन वा भारं हारयति; कुम्भकारो घटङ्करोति, यज्ञदत्तः कुम्भकारं कुम्भकारेण वा घटङ्कारयति

१२०। कर्म्मभावयोस्तृतीया।

कर्म्मवाच्य और भावबाच्य के प्रयोगमे कर्त्तामे तृतीया विभक्ति होती है। यथा, कर्म्मवाच्य–गोपेन दुग्धन्दुह्यते, मालाकारेण पुष्पन्नीयते, राज्ञा धनन्दीयते; भाववाच्य–शिशुना रुद्यते, वृद्धेन सुप्यते।

१२१। कर्म्मसञ्ज्ञायां प्रयोज्यकर्म्मणोः प्रथमाद्वितीये।

जहां प्रयोज्य कर्त्ता की कर्म्मसञ्ज्ञा होती है, वहां कर्म्मवाच्य प्रयोग मे प्रयोज्य कर्त्ता मे प्रथमा विभक्ति और कर्म्म मे द्वितीया विभक्ति होती है। यथा, शिष्येण वेदोऽधीयते, गुरुणा शिष्यो वेदमध्याप्यते। यहां प्रयोज्य कर्त्ता शिष्य मे प्रथमा विभक्ति और कर्म्म वेद मे द्वितीया विभक्ति हुई। तद्भिन्नस्थलमे देवदत्तेन ओदनम्भुज्यते, यज्ञदत्तेन देवदत्तेन ओदनम्भोज्यते।

१२२। निवृत्तौच प्रवृत्तिवत् क्रियायाः।

क्रिया प्रवृत्ति स्थलमेहि तत्तत् कारक का विधान हुआहै, परन्तु क्रिया प्रवृत्तिकी न्याईं निवृत्ति स्थल मेभी तत्तत् कारक का विधान होता है। यथा, अश्वात् पतितः, अश्वान्नपतितः; अध्ययनात् विरमति अध्ययनान्नविरमति, गृहे तिष्ठति गृहे नतिष्ठति, जलंपिबति, जलन्नपिबति, मेघो वर्षति मेघोन वर्षति।

१२३। विवक्षावशात् कारकाणि।

जहां जो कारक विहित हुआ है, वक्ताकी इच्छानुसार उस्का

अन्यथाभाव लक्षित हो सक्ता है। यथा, गृहङ्गच्छति, गृहेगच्छति, गृहम्प्रविशति, गृहेप्रविशति, पुष्पेभ्यः स्पृहयति, पुष्पाणि स्पृहयति, ग्रामे कुप्यति, ग्रामे कुप्यति, शिष्याय विद्यां वितरति, शिष्ये विद्यां वितरति, हिमवतो गङ्गा प्रभवति, हिमवति गङ्गा प्रभवति।

इति॥